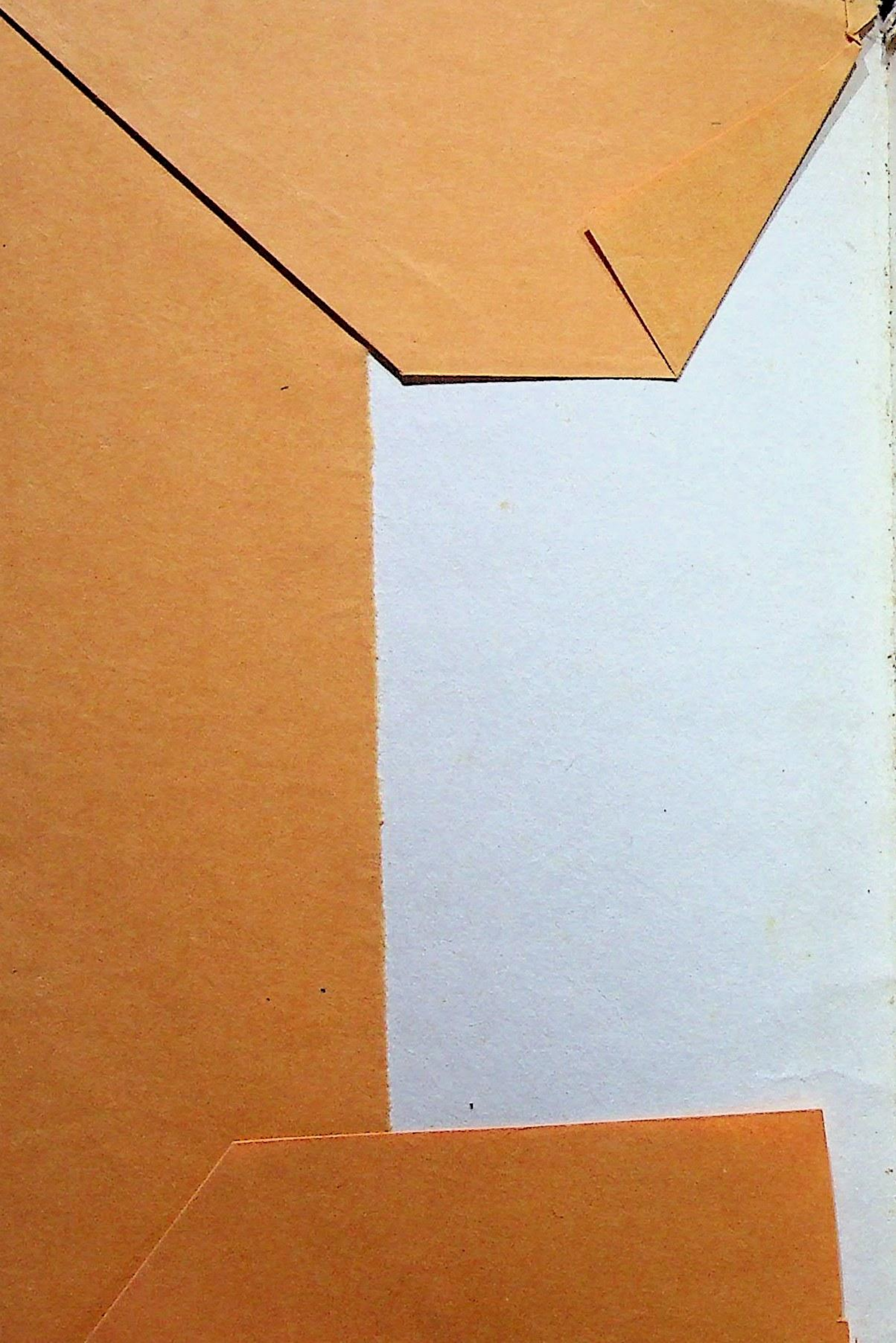
365



सर्वश्रेष्ठ रूसी और सोवियत पुस्तकमाला

शरफ़ रशीदोव

विजेता



प्रगति प्रकाशन

मास्को

अनुवादक : मदनलाल "मधु"
डिज़ाइन : क० विसोत्स्काया

ШАРАФ РАШИДОВ
ПОБЕДИТЕЛИ
На языке хинди

पहला संस्करण – १९६७
दूसरा संस्करण – १९७४

प्रकाशकों की ओर से

"विजेता" उपन्यास के लेखक शरफ़ रशीदोव प्रमुख सोवियत राजकीय और पार्टी कार्यकर्त्ता हैं।

महान अक्तूबर क्रान्ति के वर्ष १९१७ में ही एक ग़रीब उज़्बेक देहक़ान के घर में उनका जन्म हुआ और छोटी उम्र में ही वे मेहनत-मशक़्क़त करने लगे।

भावी लेखक बचपन में ही साहित्य और लोक-कला में दिलचस्पी लेने लगे थे। बाद में उन्होंने समरक़न्द विश्वविद्यालय के भाषाशास्त्र विभाग की पढ़ाई पूरी की, प्रादेशिक समाचारपत्र में काम किया और उनकी पहली कवितायें सामने आयीं... महान देशभक्तिपूर्ण युद्ध के आरम्भ में ही रशीदोव स्वेच्छा से मोर्चे पर चले गये। वहां बुरी तरह घायल होकर वे घर लौटे और स्वस्थ होने पर फिर से पत्रकार और कवि के रूप में सामने आये।

तो ऐसा है शरफ़ रशीदोव का जीवन-पथ, जिसने उन्हें लेखक के रूप में लोगों के भाग्य की गहरी जानकारी दी, उनके लिये अपने समकालीनों की भावनाओं, उनकी इच्छाओं-आकांक्षाओं को अच्छी तरह समझना सम्भव बनाया।

शरफ़ रशीदोव की प्रमुख कलाकृतियों, उनके उपन्यासों – "विजेता", "तूफ़ान से भी ताक़तवर", "शक्तिशाली धारा" – की घटनायें सामान्यतः नवनिर्माण-स्थलों पर, जहां अनेक जातियों के लोग मिल-जुलकर काम करते हैं, ही होती हैं। परती भूमि को खेती-योग्य बनाना, पानी के लिये संघर्ष, बड़े-बड़े जलाशयों और पनबिजलीघरों का निर्माण – लेखक अपने उपन्यासों में ऐसे ज्वलन्त विषयों को ही चुनते हैं। इनमें इस बात पर ख़ास

ज़ोर दिया जाता है कि रूसी, उज़्बेक, उक्रइनी और सोवियत संघ की अन्य जातियों के लोग एक ही लक्ष्य से प्रेरित होकर एकसाथ काम करते हैं। उज़्बेकों में एक बुद्धिमत्तापूर्ण कहावत है कि परिन्दे की ताक़त होती है पंखों में, इनसान की दोस्ती में। रशीदोव के विभिन्न जातियों के नायकों का एक जैसा जीवन है, उनके ध्येय और कार्यभार भी समान हैं। वे कन्धे से कन्धा जोड़कर काम करनेवाले साथी हैं, उनमें विचारों और चिन्तन की एकरूपता है, वे एक बड़े, मैत्रीपूर्ण परिवार के सदस्य हैं।

जातियों की मैत्री, मानवजाति के सौभाग्य, शान्ति और प्रगति के लिये संघर्ष – लेखक की कलात्मक और प्रचारात्मक रचनाओं का यही मुख्य विषय है।

"ताशक़न्द के लिये बहुत ही मुसीबत के दिनों में हमने इस बात को अच्छी तरह अनुभव किया कि भ्रातृत्वपूर्ण मैत्री और आपसी सहायता में हमारा अक्षय शक्ति-स्रोत निहित है। ताशक़न्द के उदाहरण के रूप में जातियों की दोस्ती बहुत ही सुन्दर और सजीव बनकर हमारे सामने आई," रशीदोव ने भूकम्प से ताशक़न्द के तबाह हो जाने के सिलसिले में उक्त शब्द लिखे थे।

लेखक रशीदोव राजनैतिक और राजकीय कार्यों में भी सक्रिय भाग लेते हैं। वे उज़्बेकिस्तान की कम्युनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय समिति के प्रथम सेक्रेटरी, सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय समिति के पोलिटब्यूरो के उम्मीदवार सदस्य और सोवियत संघ की सर्वोच्च सोवियत के सदस्य हैं।

शरफ़ रशीदोव राष्ट्रों के बीच शान्ति और मैत्री सुदृढ़ करने के लिये बहुत सक्रिय रूप से काम करते हैं। विभिन्न सोवियत प्रतिनिधिमण्डलों के सदस्य के रूप में वे अनेक बार विदेश, पूर्वी देशों – भारत, बर्मा, पाकिस्तान, हिन्देशिया, वियतनाम, मिस्री अरब गणराज्य हो आये हैं और एशिया तथा अफ़्रीका के लेखक-सम्मेलनों में भाग ले चुके हैं।

रशीदोव के "काश्मीर का गीत" उपन्यास का जन्म उनकी भारत-यात्रा के बाद हुआ। लेखक ने स्वयं स्वीकार किया है कि यह उपन्यास प्रेम सम्बन्धी प्राचीन काश्मीरी दन्त-कथा के आधार पर लिखा गया है। प्रसिद्ध भारतीय कवि और स्वरकार दीनानाथ "नादिम" ने इस कथा को स्वरबद्ध किया है।

"विदेशी पाठकों के लिये सोवियत साहित्य हमारे जीवन की खिड़की के समान है, वह हमारी अद्भुत समाजवादी गतिविधियों की झांकी पेश करनेवाली खिड़की है," शरफ़ रशीदोव का कहना है। "विजेता" उपन्यास मेहनतकशों – देहक़ानों को समर्पित है जो सूखी बंजर धरती को फूलते-फलते, उपजाऊ खेतों में बदल डालते हैं।

...बसन्त आता, पोस्त के सुर्ख़ और बनफ़शे के नीले फूल अपने आंचल में छिपाकर लाता, धरती के ओर-छोर को इनका परिधान पहनाता, इसे लाल-नीला, बैंगनी रूप दे जाता। गर्म हवा के झोंके आते, लाल-नीले फूल मुरझा जाते, तेज़ धूप घास की सारी हरियाली चूस लेती और ज़मीन झुलसकर वीरान-सुनसान और बेरौनक़ हो जाती। एक नौजवान उज़्बेक लड़की आयक़िज़ अपनी जन्मभूमि की दुर्दशा देखती है और कुढ़ती है। किसी ज़माने में एक ज़बरदस्त चश्मा, जिसका नाम कोकबुलाक़ था यहां के खेतों की सिंचाई करता था। लेकिन बरसों पहले बासमचियों और उनके मालिकों ने खीझ और ग़ुस्से में उज़्बेक जनता से इस तरह बदला लिया कि पहाड़ी चट्टानों को बारूद से उड़ा दिया और चश्मे का मुंह बन्द कर दिया।

कृषिविज्ञा आयक़िज़ ने यह योजना बनायी कि तमाम पहाड़ी चश्मों को फिर से जारी करके पानी जमा किया जाये और कपास के खेतों की सिंचाई की जाये। एक पूरबी कहावत है, "अनजानी राह ख़तरनाक मालूम होती है, अजनबी आदमी से घबराहट होती है और हर नये काम में कोई न कोई ख़तरा जरूर होता है," नया काम सचमुच होता भी कठिन है। आयक़िज़ की योजना लोगों की कोशिशों से सिरे चढ़ी। पड़ोस के तमाम कोलख़ोज़ों ने इस काम में हिस्सा लिया। लोग झण्डे लहराते, ढोल-ढमक्के और बाजे-गाजे बजाते, पानी हासिल करने की लड़ाई में हिस्सा लेने के लिये पहाड़ों की तरफ़ इस तरह रवाना हुए, जैसे वे कोई बड़ा जशन मनाने जा रहे हों।

लेखक को उपन्यास की नायिका, उज़्बेक युवती आयक़िज़ के, जो उदासीनता और पूर्वाग्रहों से डटकर संघर्ष करती है, सुन्दर चरित्र-चित्रण में बड़ी सफलता मिली है... "और संघर्ष – यह तो केवल विभिन्न दृष्टिकोणों का ही टकराव नहीं है," लेखक ज़ोर देकर कहते हैं, "संघर्ष में लोगों के भाग्य भी अनिवार्य रूप से खिंच आते हैं और मोर्चे की रेखा हमारे दिलों में से गुज़रती है।"

"विजेता" में रशीदोव सधे हुए यथार्थवादी लेखक के रूप में सामने आये हैं और उन्होंने अपने समकालीनों के श्रम और सामान्य दैनिक जीवन का बहुत ही सच्चा चित्र प्रस्तुत किया है।

शरफ़ रशीदोव का "विजेता" उपन्यास बहुजातीय सोवियत साहित्य में प्रमुख स्थान रखता है।

सामूहिक फ़ार्मों की स्थापना को खेतीबारी के इतिहास की सबसे बड़ी क्रान्ति का नाम दिया जा सकता है। इस क्रान्ति ने एक नये ढंग के किसान को जन्म दिया है। ऐसा किसान न अब तक किसी देश और न किसी युग में ही हुआ। उसके सामने प्रकृति के पुनर्निर्माण का महान उद्देश्य है। अपने इस उद्देश्य की पूर्त्ति के लिये वह अद्‌भुत तकनीक का दामन थामकर संघर्ष के मैदान में आया है।

इवान मिचूरिन,
सुप्रसिद्ध रूसी कृषिविज्ञ

१

पहाड़ी चोटियां सोने में नहा गयीं—जैसे किसी ने आकाश की काली चादर के बीचोंबीच, सुनहरी रेखा खींच दी हो। सूरज का लाल-सुनहरा रथ जल्दी से ऊपर चढ़ने लगा और देखते ही देखते सब कुछ जगमग-जगमग कर उठा—चट्टानें और दर्रे, पहाड़ की छाती पर लहरानेवाली घनी झाड़ियां और चरणों को छूनेवाले पतले-पतले अखरोट के वृक्ष।

रात ने वृक्षों को अपने शीतल स्पर्श से मीठी और प्यारी नींद दी। सूरज की किरणों ने उनकी पलकें चूमीं तो वे जाग उठे। उन्होंने अंगड़ाई ली। पत्तों को प्यारी-प्यारी गर्मी और प्रकाश का सुख मिला। दूध-धोये पहाड़ी चश्मे, झलमल-झलमल कर उठे और चट्टानों के बीच से बल खाते और झरझर का गान गाते, अपना मार्ग टटोलने लगे।

सुबह हुई।

सूरज हर क्षण ऊंचा, और ऊंचा होता गया। हवा में भी धीरे-धीरे गर्मी आती गयी। घास में अटके हुए ओसकण अब बह चले। दर्रों की गहराइयों में झुटपुटा अभी तक पांव जमाये था। पर दिन की चमक-दमक के सामने वह भी अपने हथियार फेंककर पीछे हटता जा रहा था। पहाड़ हर घड़ी नये-नये रंगों से आंख-मिचौली खेलने लगा।

इस पहाड़ का नाम है कोकताग़—यानी हरा पहाड़। आलतिनसाय नामक बड़ा गांव इसी के दामन में है। गर्मी के दिनों में पहाड़ की चोटी से यह गांव एक बहुत बड़े बाग़ जैसा लगता। जिधर देखो हरियाली ही हरियाली। किसानों के अनगिनत घर छतों तक हरियाली में डूबे दिखायी देते। हरियाली के इस हहराते हुए सागर में लम्बे-लम्बे और ऊपर से पतले होते हुए सरोनुमा दरख़्त भी कहीं-कहीं सिर उठाये नज़र आते।

पहाड़ के दामन के साथ-साथ, गांव के आख़िरी घर तक पोस्त के फूलों का एक सुर्ख़ क़ालीन-सा बिछा रहता। पहाड़ से बिल्कुल सटकर पोस्त की जगह बनफ़शे के फूल खिले रहते। इन फूलों से थोड़ा हटकर पिस्ते के दरख़्तों और जंगली अंगूरों की बेलों के घने झुरमुट और पहाड़ के दामन के ठीक नीचे अखरोटों के अनगिनत पेड़ों पर नज़र जा टिकती।

कोलख़ोज़ के क्षेत्र कोकताग़ की दूसरी दिशा में थे।

धरती तो यहां बहुत थी—पर प्यासी, चिर प्यासी। यह ऊसर थी, बेकार थी, इनसान के न किसी काम की, न काज की। बसन्त आता, पोस्त के सुर्ख़ और बनफ़शे के नीले फूल अपने आंचल में छिपाकर लाता, धरती के ओर-छोर को इनका परिधान पहनाता, इसे लाल-नीला, बैंगनी रूप दे जाता। हवा के झोंके आते, लाल-नीले फूल झूलते, झूमते, गाते—फूलों के इस विस्तृत सागर में लाल-नीली लहरें उठतीं, लहराती हुई तट छू लेतीं। पर बसन्त तो बसन्त ठहरा, चन्द दिन का मेहमान चला जाता, फूल मुरझाकर झड़ जाते, सूरज की प्रखर किरणें सोख लेतीं घास की ताज़गी, दूब का रस। धरती हो जाती नग्न, धूलभरी, सूनी और वीरान। किसान, हाथों की ओट कर सूरज की किरणों से बचाता अपनी आंखों को, टुकुर-टुकुर देखता इस धरती को, भरता ठंडी-लंबी सांसें और कहता: "ओह, हमारी यह ऊसर धरती!"

कोलख़ोज़ के पास ज़मीन तो बहुत है मगर सिंचाई की व्यवस्था नहीं।

सांप की तरह बल खाती हुई एक छोटी-सी पगडण्डी, पहले पोस्तों में से अपना टेढ़ा-मेढ़ा रास्ता बनाती हुई बढ़ रही थी और फिर इसी तरह बल खाती हुई कोकताग़ की छाती को रौंदकर चोटी तक जा पहुंची थी।

पहाड़ की चोटी पर पहुंचने का एक दूसरा रास्ता भी था। पहाड़ी झरनों पर मज़बूत पुल बना-बनाकर आलतिनसाय से चोटी तक एक समतल और पक्की सड़क बना दी गयी थी। पर इस सड़क से, चोटी तक पहुंचने में बहुत देर लगती और इसीलिये गांव के लोग उस पुरानी, तंग पगडंडी का इस्तेमाल ही बेहतर समझते। इससे सही-सलामत नीचे-ऊपर आने-जाने के लिये बहुत नपे-तुले, सधे-सधाये और तेज़ क़दमों की ज़रूरत होती।

बसन्त के आरम्भ में कोकताग़ की चोटी से नीचे का दृश्य तो देखते ही बनता। प्रकाश और इन्द्रधनुषी रंगों का वह अपूर्व मेल होता कि इनसान दम थामकर रह जाता। सूरज मुस्कराता, स्तेपी किरणों के सागर में ग़ोते

लगाती और जंचते-फब्ते रंगों की झलक दिखाती क्षितिज के छोर से जा मिलती। धूप में हल्की-हल्की प्यारी-प्यारी गर्मी होती। आकाश एकदम नीला, निर्मल और स्वच्छ होता।

महकी-लहकी इस स्तेपी में, गांव के बाग़ हरे-हरे धब्बों से लगते।

पहाड़ी चोटियों ने जैसे ही सुनहरी ओढ़नी ओढ़ी कि सड़क पर एक घुड़सवार लड़की दिखाई दी। घोड़ा सुन्दर और भूरे रंग का था। चढ़ाई के कारण वह सिर झटक-झटककर हांफ रहा था और लड़की बड़ी मुस्तैदी से उसकी लगाम साधे थी। घोड़े ने सवार का इशारा समझा और हील-हुज्जत के बिना क़दम-क़दम चलने लगा। उसके मुंह से सफ़ेद झाग गिर रहा था।

जहां से ढाल शुरू होती थी, लड़की वहां थोड़ी देर के लिए रुकी। उसने नीचे की ओर अपनी धरती, अपने गांव पर एक नज़र डाली। चारों ओर फैली हुई हरियाली में उचके-उचके से कुछ सफ़ेद घर नज़र आये। गांव का मैदान दिखायी दिया और स्कूल की सफ़ेद इमारत। आठ बरस तक वह इसी स्कूल में पढ़ी थी। फिर उसकी नजर घूमी लेनिन की मूर्त्ति की तरफ़, क्लब-घर की तरफ़ जहां लाल झंडा लहरा रहा था। इसी क्लब में तो लम्बी-लम्बी टांगोंवाली इस लड़की ने कभी मंच पर जाकर कविता-पाठ किया था। तब वह कैसे बुरी तरह घबरा और कांप रही थी—प्राण छटपटा रहे थे, आवाज़ टूट-टूट जाती थी। पर बाद में इसी क्लब में उसने रिपोर्टें पढ़ी थीं, सभाओं का सभापतित्व किया था। उसका घर भी पास ही था। कभी इस घर में बेहद चहल-पहल, बहुत रौनक़ थी—यह घर बहुत प्यारा लगता था। मगर अब एकदम ख़ामोशी, गहरा सन्नाटा और सूनापन छाया रहता था। कुछ बरस पहले यहां ज़िन्दगी धड़कती थी, हुमकती और नाचती-गाती थी। आयक़िज़, तब ख़ुद भी एक छोटी-सी लड़की थी—लड़की क्या, हंसी का फ़व्वारा समझिये! इसके बड़े होते हुए भाई थे, उसकी मां थी। मां जवानों की तरह कमरों में, कभी आंगन में कुछ करती दिखाई देती तो कभी तरकारियों के बग़ीचे में। ज़िन्दगी मस्ती में कट रही थी। दिन हंसी-ख़ुशी में और जल्दी-जल्दी गुज़र रहे थे। हर चीज़ सुन्दर थी, सुव्यवस्थित थी—समतल सड़क पर मज़े-मज़े चलनेवाले कारवां की तरह। मगर अब... अब उस घर में केवल अब्बाजान, उम्रज़ाक़-अता थे। बुज़ुर्ग आदमी, दुखों और मुसीबतों ने उनकी कमर दोहरी कर डाली थी।

इस घर को आयक़िज़ का घर कहना तो शायद उचित न होगा। वह अधिक समय तक या तो अपने दफ़्तर में रहती या काम-काज सम्बन्धी दौरों पर। आयक़िज़ कुछ ही समय पहले कृषि-स्नातिका हुई थी। किसी अनुभवी व्यक्ति के बजाय, इस युवती को ही हलक़ा-सोवियत की अध्यक्षा चुन लिया गया था। इस पहाड़ी प्रदेश में पहले कभी ऐसा न हुआ था। उम्रज़ाक़-अता अधिक समय तक घर में अकेले ही रहते। पर इससे क्या – उनकी बेटी को तो लोगों का विश्वास प्राप्त था। बाप का मन इसी ख़ुशी से फूला न समाता। वह पचहत्तर साल के थे। बहुत लम्बा सफ़र तय किया था उन्होंने जिन्दगी की राह पर।

उनकी अपनी जीवन-लीला तो बेशक ख़त्म होनेवाली थी, पर आयक़िज़ आज भी उन्हें बच्ची, नन्ही-मुन्नी गुड़िया ही लगती। वह उसे आज भी छोटी-सी शरारती और सनकी लड़की समझते और यह मानते कि उसे हर वक़्त मां-बाप की देखरेख और निगरानी की ज़रूरत है...

घर नज़दीक था और घोड़ा बेचैन। वह टिककर खड़ा न हो रहा था और बड़ी बेसब्री से सिर झटक रहा था।

"थोड़ा सब्र करो, बायचीबार!"

आयक़िज़ ने घोड़े को सड़क किनारे खड़ा किया और कूदकर नीचे उतरी। उसने ज़ीन की पेटी ढीली की, घोड़े के मुंह से लगाम निकाली और उसकी साटिन जैसी नर्म गर्दन थपथपायी।

"जाओ, अब जाकर मौज करो!"

बायचीबार के पोपले ओंठों ने आयक़िज़ की हथेली को छुआ।

अब उसके अयाल हवा में लहरा रहे थे। बायचीबार छलांगें मारता हुआ चट्टानों की तरफ़ बढ़ गया। वहां पत्थरों के बीच छोटी-छोटी हरी घास लहरा रही थी।

आयक़िज़ कुछ देर तक घोड़े को देखती रही। फिर वह मुड़ी और अपने घुटनों तक के जूतों को चाबुक से थपथपाती हुई ढाल की तरफ़ बढ़ चली। उसने सिर ऊपर उठाकर दाईं तरफ़ देखा। उसे वहां छिद्रपूर्ण पत्थर की एक चट्टान दिखायी दी। चट्टान मकान जितनी ऊंची थी और उसपर काई जमी थी। वह चट्टान पर चढ़ गयी। जब कभी वह घुड़सवारी करती हुई इधर आती, हमेशा इसी चट्टान की चोटी पर बैठकर थोड़ी देर आराम और बहुत-सी बातों पर सोच-विचार करती। कभी-कभी वह मन ही मन

ख़ुश होती, उसका अंग-अंग मानो ख़ुशी से सिहर उठता। कभी-कभी जब उसे अपने किसी काम में कोई अड़चन दिखायी देती, तो परेशान नज़र आती।

यहीं बैठकर वह कभी-कभी जीवन के बारे में सोचती, अपनी मातृभूमि और अपनी जनता के भविष्य की चिन्ता में खो जाती। कभी-कभी उसे अपने व्यक्तिगत छोटे-मोटे झंझटों और पचड़ों का ख़्याल आता। किसी सहेली से बेकार झगड़ा हो गया होता तो वह उसके बारे में सोचती, नयी पोशाक अच्छी न बनी होती तो उसके लिये कुढ़ती। वह कृषिविज्ञा थी और आलतिनसाय की हलक़ा-सोवियत की अध्यक्षा भी, मगर तो भी थी तो एक जवान लड़की ही। जवानी की सारी उमंगें और सभी चाहें, उसके सीने में मचल रही थीं, अंगड़ाइयां ले रही थीं।

आयक़िज़ उस दिन उदास थी।

माथे पर बल डालकर उसने पश्चिम की तरफ़ नज़र दौड़ाई। वहां, दूर क्षितिज के पास, ज़मीन कुछ पीली-पीली-सी दिखाई दी – क़िज़िलक़ुम, लाल रेतवाली ज़मीन, बेकार धरती...

क़िज़िलक़ुम !

रेगिस्तान।

गर्मियों में वहीं से ख़ुश्क लू के तेज़ झोंके – रेतीली गर्म आंधियां आती हैं। वे अपने साथ रेगिस्तान की आग लाती हैं – और फ़सलें झुलसकर, तबाह होकर रह जाती हैं।

ये रेतीली गर्म आंधियां ही किसान की सबसे बड़ी और पुरानी दुश्मन हैं। इस बरस, इस प्रदेश के इतिहास में पहली बार, दरख़्तों की एक रक्षा-पांत इनका मुक़ाबला करने के लिये खड़ी की गयी थी। पर वे तो अभी बहुत छोटे-छोटे ही थे। बबूल और एल्म के पौधों को मज़बूत और बड़ी बड़ी शाखाओंवाले वृक्ष बनने के लिये कुछ बरस तो चाहिये। तभी तो वे इन आंधियों से लोहा लेने के योग्य हो सकेंगे, तभी तो वे अपने इस शत्रु की कमर तोड़कर उसे क़िज़िलक़ुम के वीराने में लौटने के लिये मजबूर कर सकेंगे।

आयक़िज़ ने अपना चमकदार रेशमी रूमाल सिर पर से उतारा और बाल फैला दिये। उसके सुन्दर काले-काले बाल कमर से नीचे पहुंच रहे थे। वह खोई-खोई-सी अपनी उंगलियों को हिलाती-डुलाती रही – बालों को

संवारती रही। उसने दो मोटी-मोटी चोटियां गूंथ लीं। उसके दिल-दिमाग़ पर वही रेगिस्तानी दुश्मन छाया हुआ था। इस समय वह काफ़ी ऊंचाई पर थी। यहां से रक्षा-पांत के पौधे, छोटी-छोटी घास जैसे लग रहे थे। कोई रेवड़ वहां से गुज़रेगा, इन्हें आन की आन में रौंद-कुचल डालेगा। ओह! अभी तो उन्हें बहुत बरसों तक प्रतीक्षा करनी होगी – तभी तो ये पौधे मज़बूत और बड़े-बड़े वृक्ष बन सकेंगे!

"काश! दस-पन्द्रह साल पहले ही हमने इन्हें लगा दिया हो-ता!"

भारी-भारी चोटियां उसने पीठ पर फेंकीं और इससे जानी-पहचानी धप की आवाज़ हुई। आयक्िज़ ने अब इन चोटियों का जूड़ा बनाया और फिर से अपना रेशमी रूमाल बांध लिया।

लापरवाही और बेतरतीबी तो आयक्िज़ किसी भी चीज़ में सहन न कर सकती थी। दिन भर खेतों में मारे-मारे फिरते रहने के बाद भी वह घर पहुंचने से पहले अपने जूतों को अच्छी तरह झाड़-पोंछकर साफ़ कर लेती थी। वह यह मानती थी कि दूसरों के सामने और अकेले में भी आदमी को ढंग से रहना चाहिये।

जेब से आइना निकालकर उसने अपने को निहारा।

अचानक ही उसे आलिमजान की याद आ गयी। उसने आईने को झटपट जेब में रख लिया। लाज के मारे छुईमई-सी हो गई जैसे कि आलिमजान वहीं कहीं पास में खड़ा उसे देख रहा हो।

"बायचीबार!" चट्टान से नीचे उतरते हुए आकिज़ने घोड़े को आवाज़ दी।

घोड़े ने मालकिन की आवाज़ सुनी तो सिर ऊपर उठाया, ज़ोर से हिनहिनाया और सरपट दौड़ता हुआ आयक्िज़ के पास आ पहुंचा।

आयक्िज़ ने बायचीबार की लगाम थामी और ढाल से नीचे उतरने लगी।

नीचे जानेवाले पहाड़ी रास्ते पर घनी घास उगी हुई थी। यह रास्ता, पहाड़ के दामन में पहुंचकर अखरोटवृक्षों के झुरमुट से जा मिलता था। नीचे तंग-सी घाटी में एक पहाड़ी नदी थी – यानग़ाक़साय। बड़ी तेज़ी से बहती थी यह नदी, कलकल-छलछल का गान गाती, कूदती-फांदती और पत्थरों से सिर टकराती हुई।

बायचीबार प्यास बुझाने के लिये तेज़ी से पानी की तरफ़ बढ़ा।

घोड़ा पानी पी चुका तो ग्रायक़िज़ ने फिर से उसके मुंह में लगाम का दहाना डाला, ज़ीन का पट्टा कसा ग्रौर कूदकर उसपर सवार हो गयी। घोड़े की टांगों से टकराता हुग्रा पानी छप-छप करता ग्रौर फेन उगलता रहा।

घाटी की ज़मीन को छूकर छोटी-सी पहाड़ी नदी पूरब की ग्रोर मुड़ जाती थी। यहां भी इसकी गति पहले की तरह ही तेज़ थी। इस नदी का थोड़ा-सा पानी ही कोलख़ोज़ के बाग़-बगीचों का एकमात्र सहारा था। खेतों के लिये पानी नहीं था।

बायचीबार ने, यानग़ाक़साय को पार किया। नदी से कुछ फ़ासले पर एक सड़क थी। ग्रायक़िज़ ने घोड़ा उधर न बढ़ाया। कुछ चक्कर काटकर एक चौड़ी ग्रौर धीरे-धीरे ढलवां होती हुई एक ढाल थी। यह पहाड़ के दामन में शुरू होकर दूर स्तेपी में जा मिलती थी। घोड़ा ग्रब इधर ही जा रहा था।

सदियों पुरानी इस धरती पर कभी हल न चला था। धरती उपजाऊ ग्रौर समर्थ थी। हज़ारों बरसों से यहां पौधों की जड़ें गलती-सड़ती ग्रा रही थीं। इतनी खाद मिलने पर भी भला धरती उपजाऊ कैसे न होती! सोना उगलने के योग्य इस धरती को केवल पानी की ज़रूरत थी। फिर यहां कुछ भी तो उगाया जा सकता था। ढेरों-ढेर फ़सल हो सकती थी!

इसे पानी चाहिये, यह प्यासी है!

गांव से छः-सात किलोमीटर की दूरी पर यानग़ाक़साय ग्रौर उज़ुमसाय – ये दोनों पहाड़ी नदियां मिलकर एक हो जाती हैं। फिर यह पहले की ही तरह बड़ी तेज़ी से नीचे की ग्रोर बहती हुई, दूर, बहुत दूर चली जाती है। यहां यह नदी ग्रालतिनसाय कहलाती है। गांव का नाम भी इसीलिये ग्रालतिनसाय पड़ गया है। पर यह नदी तो जैसे ग्रपने नाम के गांव से ख़ार खाये बैठी है। पानी की एक बूंद तक भी नहीं देती इस गांव की धरती को। दुनिया में ऐसी कोई भी शक्ति नहीं थी जो ग्रालतिनसाय को ऊपर की तरफ़ बहने के लिये मजबूर कर सकती!

पानी, पानी!

"कुछ दिन पहले तक मिर्ज़चूल भी तो एक मरुस्थल ही था – हरियाली के बिना भूखा रेगिस्तान था," ग्रायक़िज़ सोच रही थी, "मगर तब लोगों ने नहरें खोदीं, धरती को पानी दिया, खेतों में काम ग्रानेवाली मशीनें

लाये – देखते ही देखते कायापलट हो गया और भूख उगानेवाली धरती, लहलहाती फ़सलें उगाने लगी।"

घोड़ा तेज़ी से बढ़ने को बेक़रार था। सवार ने लगामें कस रखी थीं, चाल धीमी थी। सहसा आयक़िज़ ने लगामें खींचीं। घोड़ा रुक गया। उसके बिल्कुल सामने लहराती और चमकती हुई हरी घास का एक छोटा-सा टापू था – पहाड़ के दामन के पास, एक छोटे-से टीले से सटा हुआ।

आयक़िज़ उसकी तरफ़ बढ़ी। वह हतप्रभ थी, आश्चर्यचकित थी।

टीले के पास उसने छोटा-सा पोखर देखा। इसमें तो हैरानी की कोई बात न थी। बसन्त की बारिश के बाद पहाड़ के दामन में एक ही नहीं, ऐसे अनेक पोखर दिखायी देने लगते थे। फिर भी अचम्भे की कुछ बात तो ज़रूर थी। यह पोखर छिछला होता हुआ भी किनारे तक पानी से भरा था।

कुछ अर्से से पानी बिल्कुल न बरसा था। फिर इस पोखर में इतना पानी आया कहां से? पोखर से एक छोटी-सी धारा निकली हुई थी। यह धारा लगभग दस मीटर की दूरी पर धरती में समा गयी थी। मगर यह ठहरा हुआ पानी न था। पानी की सतह पर लहरें दिखायी दे रही थीं। छोटा-सा पोखर था, पर पानी से लबालब!

इस क्षेत्र में तो कभी कोई चश्मा भी नहीं था। फिर पोखर में पानी आता कहां से है?

आयक़िज़ घोड़े से नीचे उतरी और सीली तथा दलदली भूमि पर चल दी। पोखर का तल सफ़ेद कंकरों से अटा पड़ा था। पानी से धुले-चमके ये कंकर, पतली हरी काई की परत के बीच से बाहर सिर निकाले हुए थे।

आयक़िज़ आगे की ओर झुक गयी। उसे लगा कि कंकरों के नीचे से एक चश्मा उफन-उफनकर बाहर आ रहा है।

चश्मा?

वह बैठ गयी। उसने पोखर के तल की कीचड़ में हाथ डालकर, कंकरों को हटाने की कोशिश की। पोखर उसे काफ़ी गहरा लगा।

आयक़िज़ को तो जैसे गर्मी अनुभव होने लगी। उसके माथे पर पसीने की बूंदें झलक आयीं। उसका दिल ज़ोरों से धड़कने लगा।

सन्देह अब विश्वास में बदल गया। ज़रूर यह कोई चश्मा ही है, सो भी मामूली नहीं।

वह उठकर खड़ी हो गयी और इस जगह के बारे में जो कुछ जानती थी, अपने दिमाग़ पर ज़ोर देकर उसे याद करने लगी।

लोगों ने इसे क़ुलतेपा – ग़ुलामों की पहाड़ी – का नाम दे रखा था। इस टीले का ऐसा मनहूस नाम क्यों था, आयक़िज़ ने पहले कभी इसके बारे में सोचा ही नहीं था। ज़ाहिर है कि इस जगह के ऐसे नाम का किसी पुरानी कहानी या दंतकथा से सम्बन्ध था। आयक़िज़ ने इस कहानी को पहले कभी नहीं सुना था।

उसने अपने पैरों के क़रीब ही धरती से बाहर को निकली हुई कोई चीज़ देखी। आयक़िज़ ने वहां कुछ ठोकरें लगाईं – मिट्टी की जमी हुई परतें अलग हो गईं।

किसी पुराने वृक्ष का ठूंठ दिखाई दिया।

आयक़िज़ तो बिल्कुल हक्की-बक्की-सी रह गई। उसकी जानकारी के अनुसार तो यहां कभी कोई वृक्ष नहीं उगा था। उसकी उत्सुकता बढ़ी। उसने अपने चारों ओर बड़े ध्यान से दृष्टि दौड़ाई। पोखर के दूसरे किनारे पर एक और ठूंठ की मोटी-मोटी जड़ें नज़र आईं। ये जड़ें गांठ-गंठीली और काली पड़ी हुई थीं। ये कुछ-कुछ बाहर को निकली हुई थीं और इनपर मिट्टी की परत जमी हुई थी।

आयक़िज़ के दिमाग़ में बड़ी तेज़ी से विचार आने-जाने लगे। उसका चेहरा तमतमा उठा। प्रश्नों की एक झड़ी-सी लग गयी – वृक्ष यहां कब उगे? सौ बरस, या इससे भी अधिक साल पहले? कब काटे गये? किसने उन्हें काटा? शक की अब बिल्कुल गुंजाइश न रही थी। पानी से छलछलाते इस बड़े चश्मे के किनारे ही ये दरख़्त उगे थे। मगर फिर यह चश्मा सूख क्यों गया?

आयक़िज़ ने बायचीबार की लगाम थामी और टीले पर चढ़ गयी।

टीले की चोटी पर पहुंचते ही सारी गुत्थी अपने आप सुलझ गई। वह हैरान हो रही थी कि पहले से ही उसका ध्यान उस तरफ़ क्यों नहीं गया।

यह पोखर हाल की बारिश की लपेट में आनेवाले इलाक़े तक ही सीमित न था। टीले की चोटी से उसने पहाड़ी के साथ-साथ एक लम्बी और तंग-सी खाई देखी। कभी किसी ज़माने में यह गहरी और बिल्कुल सीधी रही होगी। मगर वक़्त और हवा के थपेड़ों ने उसे जर्जर कर डाला था। अब तो वह साफ़ तौर पर दिखाई भी नहीं देती थी।

आयक़िज़ ने बहुत ग़ौर से पुरानी नहर की तह को देखा। अभी सूरज नीचा था और आयक़िज़ भू-तहों और सिलवटों को अच्छी तरह देख सकती थी।

ज़रूर यह नहर ही थी, सिंचाई के काम आनेवाली खाई थी।

पलक मारते ही आयक़िज़ घोड़े की पीठ पर जा चढ़ी और उसे सरपट दौड़ाती हुई गांव की तरफ़ चल दी। सांय-सांय करती हवा उसके कानों में सीटियां बजा रही थी। घोड़े के तेज़ सुमों के नीचे खेतों के सभी रंग घुल-मिलकर एक रंग-बिरंगी पट्टी बनते जा रहे थे।

२

उम्रज़ाक़-अता उस दिन बहुत तड़के ही जाग गये थे। नींद भी तो बुढ़ापे में बहुत साथ नहीं देती। घुटनों तक की सफ़ेद लम्बी क़मीज़ पहने, नीला रेशमी कमरबन्द कसे वह बाहर बरामदे में आये। क़मीज का गला काफ़ी नीचा था, छाती उघाड़ी थी, धूप में झुलसी और संवलाई हुई।

क़द लम्बा, पीठ कुछ-कुछ झुकी हुई, कंधे चौड़े – ऐसे थे उम्रज़ाक़-अता। बुढ़ापे के बावजूद उनके रोम-रोम, अंग-अंग से जैसे शक्ति की धारा फूटी पड़ रही थी। यन्त्रवत् उन्होंने अपने रबड़ के जूते पांव में डाले, सुबह की ठण्डक से सिहरकर कन्धे झटके, ओसारे की सीढ़ियों से नीचे उतरे और आंगन में जा पहुंचे। आंखों पर अपने बड़े-सेहाथ की ओट करके उन्होंने आकाश पर चारों ओर नज़र दौड़ाई।

सुबह सुहानी और ठंडी थी। दिन सुहाना होगा, यह निश्चित था।

बूढ़े उम्रज़ाक़-अता ने बड़े इत्मीनान से चमकते हुए नये समोवर में पानी डाला। फिर कुछ चैलियां जलाकर समोवर की चिमनी में डाल दीं जिससे शोला भड़कने की आवाज़ आने लगी।

घड़ी भर वह समोवर से आनेवाली सूं-सूं की आवाज़ सुनते रहे। फिर वह आंगन में झाड़ू देने लगे। उम्रज़ाक़-अता अपने घर को शीशे की तरह चमकाये रखते – बिल्कुल साफ़-सुथरा, न कहीं दाग़ न धब्बा! उनका घर इस तरह से चमकता हुआ देखकर पड़ोसियों को ईर्ष्या होती। पड़ोसी अपने घर की झाड़-पोंछ में इतनी रुचि न दिखाते। सूरज की किरणों ने बसन्त

के आरम्भ में खिलनेवाले फूलों को अपनी गर्मी से गुदगुदाया। फूलों ने सिहरकर सिर ऊपर उठाया। उनकी कोमल और चमकती हुई पंखुरियों और पत्तों पर ओस के मोती चमक उठे। समतल और बरसों से रौंदे गये आंगन में गुलाबी रोशनी बिखर गई।

बुज़ुर्ग ख़ुशी-ख़ुशी झाड़ू लगाने लगे।

उम्रज़ाक़-अता को अपनी पेशियों में जवानी की सी गर्मी अनुभव हुई। उनकी नज़र कोकताग़ पर टिकी हुई थी। आयक़िज़ पिछले तीन दिनों से घर न लौटी थी। वक़्त था कि रेंग रहा था, हर घड़ी युग बन गई थी! मगर कोकताग़ के पहाड़ी रास्ते पर तो कोई चिड़िया तक भी पर मारती दिखाई न दी। वहां न घोड़े की टापें सुनाई दीं, न फिर सुबह के झुटपुटे में किसी लड़की की छाया नज़र आई। वह सोचते, आंखें कहीं धोखा तो नहीं दे रहीं, उनमें वह पहले की सी रोशनी भी तो नहीं रह गयी थी।

"लगता है वह आज भी नहीं आयेगी," बूढ़े ने सोचा, "जाने वह कहां अटकी रह गई? शायद गेहूं की बुवाई में उन्हें बहुत मुश्किल का सामना करना पड़ रहा होगा। आयक़िज़ खेतों में दौड़-धूप कर रही होगी। बेचारी को दम मारने की फ़ुरसत न मिली होगी। घर आकर बूढ़े बाप की सुध कैसे लेती?"

समोवर अपना सूं-सूं का राग अलापने लगा। सुबह सुहानी थी, सभी ओर सन्नाटा था। इस चुप्पी में समोवर की मच्छर जैसी धीमी भनभनाहट भी तमाम आंगन में सुनाई देने लगी। भाप खिलखिलाकर नाचने लगी।

बुज़ुर्ग, चीनी मिट्टी की चायदानी उठा लाने के लिये तेज़ी से अन्दर गये। उन्होंने थोड़ी-सी हरी चाय चायदानी में डाली और समोवर के सामने घुटनों के बल बैठकर उसमें उबलता हुआ पानी भर लिया।

समोवर से आती हुई गर्मी ने उनकी उंगलियों को गर्माया। उन्हें बड़ा अच्छा लगा। तभी झटके के साथ फाटक के खुलने की आवाज़ हुई। फ़ौजी वर्दी पहने एक युवक अन्दर आया। उसकी फ़ौजी क़मीज़ के कालर के अन्दर की तरफ़ सफ़ेद पट्टी लगी हुई थी और वह अच्छी तरह साफ़ की हुई दिखाई दे रही थी। कालर उसकी सांवली गर्दन पर अच्छी तरह फ़िट बैठा था। यह फ़ौजी क़मीज़ पुरानी और बार-बार धुली हुई थी। धूप के कारण पीठ और कन्धों से उसका रंग भी फीका पड़ गया था। फिर भी वह जंच ख़ूब रही थी। कमर में अफ़सरोंवाली पेटी कसी हुई

थी। सब कुछ देखने-समझने से यह लगता था कि इस नौजवान को अपनी फ़ौजी वर्दी से मानो मोह ही हो गया है और शहरी पोशाक पहनने की बात तो वह जैसे भूल ही चुका है।

नौजवान फाटक के अन्दर आकर रुका। उसने अपनी एड़ियां टकराकर ठक की आवाज़ की। बदरंग हुई फ़ौजी टोपी से घने और काले बाल बरबस बाहर निकले हुए थे। भौंहें सीधी, ऊपर की ओर मुड़ी हुई, नाक पतली और तीखी, गरुड़ की चोंच के समान, और भौंहों के पास सीधी लकीरें। कुल मिलाकर वह अच्छा, स्वस्थ और साहसी व्यक्ति लगता था। उसकी आंखें तो मानो यह कह रही थीं:

"मुझे अपने मक़सद का पूरा एहसास है और मैं उसे हासिल करके रहूंगा।"

चायदानी हाथ में थामे-थामे उम्रज़ाक़-अता ने घूमकर देखा।

उनकी बाछें खिल गईं। बिखरती मुस्कान के साथ, मूंछों के सिरे भी ऊपर को उठ गये।

"अरे, तुम हो, आलिमजान?" उन्होंने कहा। "कैसे हो मेरे बेटे? इतनी सुबह ही कैसे आना हुआ? कहीं की तैयारी है क्या? घर पर तो सब ठीक-ठाक है न? कोई बीमार-वीमार तो नहीं? तुम्हारी बहन लाला तो सदा की भांति ख़ूब ठहाके लगाती है न?"

"सलाम, प्यारे उम्रज़ाक़-अता," आलिमजान ने जवाब दिया, "घर पर तो सब ख़ैरियत हैं। लाला भी बड़े मज़े में है। आयक़िज़ लौटी या नहीं, मैं तो यही मालूम करने के लिये चला आया हूं।"

"जाने मेरी आयक़िज़ कहां है! मैं तो कुछ भी नहीं जानता।"

"फ़िक्र करने की तो कोई बात नहीं है, उम्रज़ाक़-अता। मैं आज पहाड़ों में जाने का इरादा कर रहा हूं। आयक़िज़ शायद वहां ऊपर खेतों में होगी। आज तो मैं जाऊंगा ही। चार दिन हो गये मुझे वहां गये।"

बुज़ुर्ग ने अपनी पकी पलकों के नीचे से आलिमजान को घूरा और फिर वह समोवर की तरफ़ घूम गये।

घड़ी भर की ख़ामोशी के बाद उम्रज़ाक़-अता ने कहा:

"हां, चले जाना, पर पहले दो घूंट चाय पी लो।"

आलिमजान इनकार करना चाहता था, मगर बूढ़े ने तभी ज़ोर देकर कहा:

"चले जाना ऐसी भी क्या जल्दी है। तुम जवान आदमी हो, काफ़ी तगड़े और तेज़। फिर अभी तो दिन ही निकला है। तुम चाहे कुछ भी क्यों न कहो, चाय पिये बिना तो मैं तुम्हें जाने न दूंगा।"

चायदानी को समोवर के ऊपर रखकर बुज़ुर्ग कलेवा लाने के लिये कमरे की तरफ़ बढ़े। मगर ठिठककर बीच ही में खड़े हो गये और कान लगाकर जैसे कुछ सुनने लगे।

कुछ देर तक वे दोनों ही सांस रोककर कान लगाये रहे। हर चीज़ जैसे दम रोके थी। सहसा सरपट भागे आते घोड़े की टापें साफ़-साफ़ सुनाई देने लगीं।

बुज़ुर्ग ने झटपट आंगन पार किया, फाटक खोलने के लिये बढ़े।

घोड़े की टापें पास-पास आती गईं।

घोड़ा अब सरपट भाग नहीं रहा था, दुलकी चाल चल रहा था। फाटक पार करने के लिये आयक़िज़ झुककर घोड़े की गर्दन के साथ चिपक गई। जैसे ही उसने लगामें खींचीं कि उम्रज़ाक़-अता और आलिमजान घोड़े को थामने के लिये जल्दी से आगे बढ़ गये।

आयक़िज़ का दम फूला हुआ था। हवा के झोंकों ने उसके बालों को अस्त-व्यस्त कर डाला था। उसके चौड़े मस्तक पर पसीने की बूंदें चमक उठी थीं, ओंठ सूख गये थे और वह ज़बान लगा-लगाकर उन्हें तर कर रही थी। उसके चेहरे पर ख़ुशी थी और आंखों में जवानी की चमक, जिससे आंगन ही जैसे जगमग कर उठा।

ख़ुशी कहीं बांध तोड़कर बाढ़ का रूप न ले ले, इसी लिये आलिमजान बायचीबार की देखभाल में जुट गया। उसने ज़ीन की पेटी ढीली की और रक़ाबों को ज़ीन के ऊपर फेंक दिया। तब वह घोड़े को आंगन के एक कोने में बने हुए बाड़े में ले गया। उसने घोड़े को एक खूंटे के साथ बांधा और थोड़ी-सी ताज़ी घास लाकर उसके सामने डाल दी।

उम्रज़ाक़-अता तो बहुत ही ख़ुश थे। वह एक शब्द भी न बोल सके। वैसे तो बेटी को घर न लौटे सिर्फ़ तीन दिन ही हुए थे। मगर तीन दिन भी क्या कम होते हैं! उम्रज़ाक़-अता ने अपनी बेटी को छाती से लगाया, उसका माथा चूमा और बाल थपथपाये।

अपनी लम्बी ज़िन्दगी में बूढ़े ने बहुत कुछ देखा-जाना था—दुख-दर्द, बड़ी-बड़ी मुसीबतों के दिन, हंसी-ख़ुशी की घड़ियां, मौज-बहार के दिन।

ग्रौर ग्रब बढ़ापे की लाठी, बुढ़ापे की ख़ुशी थी केवल ग्रायक़िज़। ग्राय-क़िज़ घर में न होती तो एक दिन एक साल बन जाता। उनकी ग्रपनी ग्रौर नयी पीढ़ी में ज़मीन-ग्रासमान का फ़र्क़ था। नयी पीढ़ी के लोगों का तो सदा ही जैसे घर से बाहर क़दम रहता है। चौबीसों घण्टे इन्हें चिमटे रहते हैं काम-काज, सभायें ग्रौर दौरे। ग्रायक़िज़ काफ़ी रात गये, थक-टूटकर घर लौटती ग्रौर सिरहाने पर सिर रखते ही दीन-दुनिया से बेख़बर सो जाती। वह बहुत गहरी नींद सोती ग्रौर पौ फटते ही घर के हर कोने में उसकी ग्रावाज़ गूंजने लगती। हर नया दिन नयी चिन्तायें, नयी परेशानियां लिये ग्राता। कभी खेतों में जाकर काम करना होता, तो कभी डेरी फ़ार्मों का निरीक्षण ग्रौर फिर नये स्कूल की इमारत के निर्माण की देखभाल। इतना ही नहीं, ज़िला पार्टी कमेटी के दफ़्तर में भी जाना होता।

"ग्राराम किये बिना भला ग्रादमी ज़िन्दा ही कैसे रह सकता है," उम्रज़ाक़-ग्रता उसे डांटते, "पंछी भी ग्रपने घोंसले में दुबककर सोये रहते हैं।"

उम्रज़ाक़-ग्रता, ग्रायक़िज़ का कन्धा थपथपाते रहे कि सहसा उन्हें याद ग्राया :

"ग्ररे, चाय तो जाने कब की बनी रखी है! कुछ नाश्ता-वाश्ता हो जाना चाहिए। ग्ररी ग्रायक़िज़, तुम्हारी तो भूख के मारे जान निकली जा रही होगी!"

वह इतनी तेज़ी से मकान के ग्रन्दर गये कि बरामदे की सीढ़ियां थरथरा ग्रौर चरचरा उठीं।

घोड़े की देखभाल करने के बाद ग्रालिमजान, ग्रायक़िज़ के पास ग्राया। ग्रायक़िज़ ने उसे ग्रन्दर जाकर इन्तज़ार करने के लिये कहा। वह ख़ुद हाथ-मुंह धोकर कपड़े बदलना चाहती थी। ग्रायक़िज़ के जूते की नोक पर कहीं से एक निशान लग गया था। वह उसे मिटाने के लिये झुकी। जैसे ही वह झुकी कि उसकी एक चोटी खिसककर सामने ग्रा गई ग्रौर चोटी के सिरे ने ज़मीन को छू लिया। ग्रायक़िज़ ने नज़र ऊंची करके ग्रालिमजान की तरफ़ देखा।

"पहली बात तो यह है कि ग्राज तुमने सलाम-दुग्रा नहीं की," ग्रालिमजान ने कहा।

ग्रायक़िज़ झटपट सीधी खड़ी हो गई। उसने ग्रपनी चोटी पीछे की

ओर फेंकी। आलिमजान को तो ऐसे लगा मानो उसे किसी काली नागिन ने डस लिया हो।

"सलाम," आयक़िज़ ने धीरे से कहा।

निराशा-जनित दृढ़ता से आलिमजान कहता गया:

"दूसरे, कल मुझे एक ख़त मिला था। उसका हम दोनों से ताल्लुक़ है। मैं चाहता हूं कि तुम उसे जरूर पढ़ो। पढ़ो भी ज़रूर और सो भी यहां, मेरी हाज़िरी में।"

आलिमजान ने सामने की जेब से, ढंग से तह किया हुआ एक लिफ़ाफ़ा निकाला।

आयक़िज़ ने धीरे से उसके लिये अपना हाथ बढ़ा दिया।

मगर तभी घर का दरवाज़ा खुला और उम्रज़ाक़-अता ने उन्हें पुकारा:

"बच्चो, दास्तरख़ान लग गया, नाश्ता तैयार है!"

३

"मैं आ रही हूं, अब्बाजान," आयक़िज़ ने जवाब दिया और पलक मारते ही अपने कमरे में जा पहुंची।

आलिमजान भी मकान के अन्दर, बूढ़े के पास चला गया। वह सन्दली के सामने क़ालीन पर जा बैठा। सन्दली पर मेज़पोश बिछा था और बहुत-से प्याले रखे थे। वह बिलकुल खोया-खोया, लुटा-लुटा-सा अनुभव कर रहा था। उसे लगा मानो वह किसी मंज़िल की तरफ़ सरपट घोड़ा दौड़ाये जा रहा है। मंज़िल जब दो-चार हाथ ही रह गयी तो घोड़ा बिदक गया और वह ज़मीन पर जा गिरा। वह गिरा तो जैसे उसे अपनी सुध-बुध ही न रही और मंज़िल की दूरी पहले की भांति ही बनी रही।

परेशान-सा वह बराबर अपनी जेब को टटोल रहा था कि जो लिफ़ाफ़ा उसने उस में डाला था, वह वहां है या नहीं।

आयक़िज़ कमरे में आई। वह आलिमजान से थोड़ा हटकर क़ालीन पर बैठ गई।

"लो खाओ, मेरी बिटिया! तुम्हारा बुड्ढा बाप तो बस यही कुछ पका सका है," उम्रज़ाक़-अता ने नम्रता दिखाते हुए कहा। "हां, जब तुम्हारी मां ज़िन्दा थीं तब तो बात ही बिलकुल दूसरी थी। हमारा खाना बड़ा

मज़ेदार और बढ़िया होता था। हम लोग भरपेट खाते थे। पर उसके दिन पूरे हो चुके थे, चली गई ऐसी दुनिया में, जहां से कभी कोई लौटकर नहीं आता।" दिल का घाव हरा हो उठा और उसने अपनी आंखों को ढांप लिया।

आयक़िज़ का दिल टीस उठा, वह मानसिक पीड़ा से तिलमिलाकर रह गई। बूढ़ा बाप जब कभी मां का ज़िक्र करता था तो आयक़िज़ अपने पर क़ाबू रखना जानती थी। उसने तश्तरियां अपने बूढ़े पिता और आलिमजान की तरफ़ बढ़ा दीं, प्यालों में चाय डालने लगी और ग़म और उदासी के उस वातावरण को दूर करने के लिये चहकने और मचल-मचलकर बातें करने लगी।

"जानते हैं, अब्बाजान," आयक़िज़ ने कहा, "पहाड़ों में बुवाई ख़ूब अच्छी तरह हो रही है। लोग बड़े जोश के साथ काम में जुटे हुए हैं। ट्रैक्टर टोली के तो बस कहने ही क्या हैं! इवान बोरीसोविच पोगोदिन ने आज मुझसे कहा कि मैं डींग हांकना नहीं चाहता, मगर यह बुवाई का काम तो बहुत जल्द ही निपट जायेगा। मेरे ट्रैक्टरों के लिये कोई नया काम तलाश कर रखें। इन्हें बेकार खड़े रहने की आदत नहीं है। मैं सोचती हूं कि ट्रैक्टरों को अछूती भूमि पर भेज दिया जाये। मैं तो फ़ार्म-बोर्ड को यही सुझाव देनेवाली हूं।"

"जाड़े की फ़सलें अच्छी हैं?" उम्रजाक़-अता ने पूछा।

उदासी तो अभी भी उनके चेहरे पर जमी बैठी थी।

"ख़ासी अच्छी हैं," आयक़िज़ ने बड़े विश्वास के साथ कहा, "मेरा तो यही अनुमान है कि ख़ूब अच्छी फ़सल होगी।"

"तुम अपने अनुमानों को रहने दो, प्यारी बिटिया। अभी से अच्छी फ़सल की बात करना बेकार है। वहां पहाड़ियों पर हर चीज़ मौसम के सहारे है।"

"मौसम तो ख़ैर अपनी जगह ठीक है अब्बाजान, लेकिन हम लोग भी तो उसका डटकर मुक़ाबला कर रहे हैं। आप तो जानते ही हैं कि अभी हाल ही में हम लोगों ने अछूती ज़मीन को बुवाई के लायक़ बनाया है। दो-तीन बार पानी और बरसा कि बढ़िया फ़सल हुई। मुझे तो बस अब इसी बात की फ़िक्र है कि हेंगा फेरने और निराई का काम वक़्त पर हो जाये।"

"हेंगा फेरने और निराई करने से ही मामला सिरे नहीं चढ़ेगा," बूढ़े ने कहा, "पिछले साल जो कुछ हुआ था, भल गई लगती हो। पानी तो ख़ ब बरसा था, नाज़ुक पौधों को पाले से भी कोई नुक़सान न हुआ था, गेहूं के खेत लहलहा उठे थे। मगर जैसे ही बालें आने का वक़्त हुआ कि गर्म लू चलने लगी। एक बूंद भी पानी न बरसा। लू बड़े ज़ोरों से चली और इससे पहले कि हमें कुछ पता चलता, सभी फ़सलें झुलसकर रह गईं। परसाल भी क्या हुआ था? यही सब कुछ तो न! हवाई बातें करने का कोई फ़ायदा नहीं! मेरे ख़याल में तो हर साल हमारी आधी फ़सल इसी तरह तबाह हो जाती है।"

उम्रज़ाक़-अता की बातों में काफ़ी सचाई थी। मगर पानी – पानी कहां से आता? कहां से लायें वे पानी? "पानी दो, पानी दो!" झुलसी हुई, प्यासी और जर्जर होती हुई धरती पानी की भीख मांग रही थी। धरती सूखकर इतनी ठोस हो गई थी कि उस पर चलने-फिरनेवाले इनसानी क़दम जैसे कि बज-बज उठते थे। फ़सलें प्यासी रह-रहकर दम तोड़ देती थीं।

पानी! आयक़िज़ ने आलिमजान की तरफ़ देखा और फिर उम्रज़ाक़-अता की तरफ़। उसके दिमाग़ में ग़ुलामों की पहाड़ी के दामनवाला पोखर चक्कर काटने लगा। वह उस खाई की ऊंचाई, निचाई और गहराई का विस्तृत वर्णन कर सकती थी, उसका एक पूरा चित्र प्रस्तुत करने में समर्थ थी।

आयक़िज ने धीरे-धीरे कहना शुरू किया:

"अब्बाजान! मैं आपको बताना चाहती हूं कि आज मैंने क्या देखा। मैं पहाड़ी से नीचे आ रही थी... नीचे आते-आते मैं उस जगह पहुंची... आप उस जगह को अच्छी तरह जानते हैं – वही, जिसे ग़ुलामों की पहाड़ी कहते हैं। जानते हैं मैंने वहां क्या देखा? बरसाती पानी के बहाव ने एक दरार बना दी है और उसके नीचे से एक चश्मा निकल आया है। मुझे ज़्यादा हैरानी उस दरार की नहीं, बल्कि उन दो बड़े-बड़े ठूंठों को देखकर हुई जो दरार में से बाहर निकले हुए हैं। मैं पहाड़ी की चोटी पर जा चढ़ी। वहां पहुंचकर तो मुझे ज़रा भी शक न रह गया कि कभी यहां सिंचाई के लिये नहर और खाइयां खोदी गयी थीं। इन्हें पानी उसी चश्मे से मिलता था। यह कब की बात हो सकती है, अब्बाजान? सौ साल से कम की तो यह बात हो नहीं सकती, क्योंकि वृक्षों के ठूंठ बहुत ही मोटे हैं। इस सिलसिले में आपने क्या कभी कुछ सुना है, अब्बाजान?"

"हमारे कोलख़ोज़ में आप ही तो सबसे बुज़ुर्ग हैं। आप तो ज़रूर ही ग़ुलामों की पहाड़ी की कहानी जानते होंगे। हां, बताइये न, अब्बा-जान," आलिमजान ने मज़ाक़ में ज़ोर देकर कहा।

उम्रज़ाक़-अता ने तकिये पर अपनी कोहनी टिका ली। आलिमजान ने यह तकिया धीरे से उम्रज़ाक़-अता की तरफ़ खिसका दिया था। बूढ़े मियां की आंखें जैसे अतीत के चित्रों में खो गईं। वह स्मृतियों के तल में डुबकियां लगाने लगे।

आख़िर वह कहानी सुनाने लगे, धीरे-धीरे और लटका-लटकाकर। बूढ़ों को इस कला में तो कमाल हासिल होता ही है।

"प्यारे बच्चो, मैं पिछले पचहत्तर बरसों से इस धरती के रंग-ढंग देख रहा हूं। चालीस बरस पहले मैंने अपनी इन आंखों से बहुत ही ख़ौफ़नाक चीज़ें देखीं। मैं अभी कुछ देर में उन बातों का ज़िक्र करूंगा। ग़ुलामों की पहाड़ी – यह नाम बहुत पुराना है। इस जगह एक बहुत बड़ा ज़ुल्म किया गया था। लोगों से पानी छीन लिया गया था। बहुत ही बेरहमी से ऐसा किया गया था।"

"मगर यह मुमकिन कैसे हुआ?" आयक़िज़ ने पूछा।

वह बहुत ही ध्यान से अपने अब्बा की बात सुन रही थी।

"मुमकिन हो ही गया। यह इन्कलाब से पहले की बात है। उस ज़माने में ग़ुलामों की पहाड़ी, एक पवित्र जगह मानी जाती थी। इसके दामन में एक बड़ा-सा चश्मा था। चश्मा इतना बड़ा था कि ज़मीन के बहुत-से हिस्से की उससे सिंचाई हो सकती थी। वह चश्मा और वे खेत, जिनकी वह सिंचाई करता था एक ऐसे आदमी की सम्पत्ति थे जो अपनी ज़िन्दगी में ही पहुंचा हुआ फ़कीर समझा जाता था। उसका नाम था ईशान क़बुलख़्वाजा।

"ईशान के ग़ुलाम झोंपड़ों में पहाड़ों पर रहते थे। वहां पानी बिल्कुल न था। बाद में वे नीचे आकर यहीं बस गये जहां अब हमारा गांव है। उनकी अपनी कोई ज़मीन न थी। वे सभी ईशान क़बुलख़्वाजा के लिये काम करते थे।

"चश्मे के पास ही दो बड़े-बड़े दरख़्त उगे हुए थे। लोग उन्हें कम से कम तीन सौ बरस पुराने मानते थे। ईशान के दादा या परदादा ने इस चश्मे और इन दरख़्तों को पवित्र क़रार दे दिया था। उन दिनों लोग

तरह-तरह की ऊल-जलूल बातों में यक़ीन करते थे। मिसाल के तौर पर वे यह मानते थे कि अगर कोई बांझ औरत ईशान के लिये कोई क़ीमती तोहफ़ा लाये और उन पवित्र दरख़्तों की छाया में, चश्मे के पास ही एक छोटी-सी कोठरी में कुछ रातें बिताये तो एक साल से कम अर्से में उसके बच्चा पैदा हो जायेगा। भोले-भाले लोगों का ख़्याल था कि इस जगह बड़े-बड़े करिश्मे हो सकते है।

"ईशान क़बुलख़्वाजा का सिर्फ़ एक ही बेटा था। उसका नाम था अज़ीमबाय। ईशान उसपर जान देता था। उसको तो हर वक़्त एक ही सनक सवार थी–अपने बेटे की दौलत किस तरह बढ़ाये। हां, इस तरह ये दो जोंकें इकट्ठी हो गयीं–एक बूढ़ी और दूसरी जवान। बाप-बेटा दोनों मिलकर ग़रीब लोगों का ख़ून चूसने लगे।

"सुना होगा तुमने कि लालच बहुत बुरी बला है। जोंक जितना ज्यादा ख़ून चूसती है, उसकी प्यास उतनी ही बढ़ती है।

"अज़ीमबाय और क़बुलख़्वाजा का भी यही हाल हुआ। लालच ने उन्हें धर दबाया। उन्होंने कम से कम अर्से में अपनी दौलत को दस गुना कर लेने का फ़ैसला कर लिया। इस के लिये उन्होंने चश्मे के पानी को पहाड़ के दामनवाले इलाक़े में ले जाने की ठान ली। यह मैं नहीं जानता कि ऐसा करने का उन्होंने उपाय क्या सोचा था, पर यह पक्की बात है कि उन्होंने कोई तरीक़ा सोच ज़रूर लिया था।

"बसन्त के शुरू होते ही क़बुलख़्वाजा और अज़ीमबाय ने अपने तमाम क़र्ज़दारों को मजबूर किया कि वे उनके लिये आकर काम करें। इलाक़े का हर आदमी उनका क़र्ज़दार था। सबसे पहला काम उन्हें यह सौंपा गया कि वे जिस जगह से चश्मा पहाड़ों से बाहर आता था, उसके पाट को खोदकर गहरा और साफ़ करें। अगर अब भी तुम उस जगह को ध्यान से देखो तो यही पाओगे कि उस दरार को चौड़ा करने का काम इनसानी हाथों ने किया है, वह क़ुदरत के मन की मौज नहीं है।

"ईशान क़बुलख़्वाजा ने लोगों को यह कहकर बहकाया कि यह काम अल्लाह को बहुत पसन्द है और इसके लिये जो लोग अपना ख़ून-पसीना एक करेंगे, उन्हें सीधे जन्नत नसीब होगी। काम शुरू होने से पहले अज़ीमबाय ने सिर्फ़ इतना ही कहा कि हर एक को पेटभर खाना मिलेगा। मगर यह एलान भी सफ़ेद झूठ निकला।

"भूखे, फटेहाल लोगों ने जिस्म को चीरती हुई ठंडी हवाओं में सुबह से रात तक उस खड्ड में कड़ी मेहनत की। कुछ थकान से चूर-चूर होकर चल बसे तो कुछ को बीमारियां निगल गयीं। लोग एड़ी-चोटी का ज़ोर लगाते, पर काम होता चींटी की चाल से। बहुत दिनों तक तो लोग चुपचाप दुख झेलते रहे मगर फिर उनके सब्र का प्याला छलक गया। उन्होंने इसी तरह पिसने-पिसाने से इनकार कर दिया। क़बुलख़्वाजा का पारा चढ़ गया। उसने अज़ीमबाय को मामले का निपटारा करने के लिये भेजा। अज़ीमबाय ने लोगों को समझाया-बुझाया और धमकियां भी दीं। मगर लोग टस से मस न हुए। उनकी घृणा विद्रोह का रूप ले चुकी थी। अब इस तूफ़ान को दबाना असम्भव था। मोटे अज़ीमबाय ने भागने की कोशिश की मगर बेकार – वक़्त हाथ से निकल चुका था। लोगों ने पत्थर मार-मारकर उसे ख़त्म कर डाला और उसकी लाश को नदी के हवाले कर दिया। नदी में उन दिनों काफ़ी पानी था।

"लोगों को दंगे-फ़साद और अज़ीमबाय की हत्या की क़ीमत चुकानी पड़ी। बहुतों के सिर क़लम कर दिये गये। ईशान तो अपनी सुध-बुध गंवा बैठा। काम तो वहीं ठप्प हो गया। मगर वह तो ज़हरी नाग था। उसके तो अंग-अंग में आग धधक रही थी। बहुत-से ग़रीब किसानों को मौत के घाट उतरवाकर भी उसकी बदला लेने की आग ठंडी न हुई।

"ईशान और अधिक बदला लेना चाहता था। और ज़्यादा ज़ुल्म करने के लिये उसने नये-नये मंसूबे बनाये।

"मगर अज़ीमबाय की हत्या और किसानों के क़त्ले-आम के फ़ौरन बाद इन्कलाब हो गया। बदमाश बुड्ढे ने समझ लिया कि अब उसकी शामत आई, कि अब वह लोगों के इंसाफ़ के हाथों से बच न सकेगा। उसने देश से भाग जाने का इरादा बना। मगर सांप तो सांप ही रहता है, सिर कुचल दिये जाने पर और दम तोड़ते हुए भी वह डसने की कोशिश करता है। और क़बुलख़्वाजा, सही मानों में सांप था। नौ-दो-ग्यारह होने से पहले उसने लोगों से बदला लेने की कोशिश की, बहुत ही नाज़ुक जगह पर डसा उसने उन्हें। चश्मा सूख गया। पानी का बहना बन्द हो गया। उसने यह कैसे किया, कोई आज तक नहीं जान सका।

"लोग पहले तो डरे-सहमे, घबराये। फिर ग़ुस्से से पागल हो उठे और उन्होंने उस पाखंडी और कमीने आदमी के मकान की ईंट से ईंट बजा

दी। उसी रेले में दरख़्त भी काट दिये गये। ये पेड़ काफ़ी बूढ़े हो चुके थे और मुरझाते जा रहे थे। इन पेड़ों की शाखाओं पर हरे पत्तों से ज्यादा वे अलम नज़र आते थे जो ईशान के बहकावे में आकर, मुरीद लोग अल्लाह के नाम पर, उन शाखाओं पर लटकाया करते थे। लोगों ने सदियों तक पूजे जानेवाले ये पेड़ भी काट दिये ताकि उस बदमाश ईशान का नामोनिशान ही इस धरती से मिट जाये। बस, यही कहानी है ग़ुलामों की पहाड़ी की।"

उम्रज़ाक़-अता का गला सूख गया था। उन्होंने चाय के प्याले की तरफ़ अपना हाथ बढ़ाया। चाय तो ठंडी भी हो चुकी थी। वह एक ही बार में सारा प्याला गले से नीचे उतार गये।

"मगर क्या लोगों ने उस चश्मे का फिर से मुंह खोलने की कोशिश नहीं की?" आयक़िज़ ने बेसब्री से पूछा।

उसकी त्योरी चढ़ गयी थी और भौंहों के बीच एक गहरी रेखा साफ़ दिखाई देने लगी थी।

उम्रज़ाक़-अता ने अपनी बेटी की तरफ़ देखा और मुस्करा दिये। "ज़रूर कोशिश की थी, मेरी बेटी," उन्होंने कहा, "अपनी ज़िन्दगी बेहतर बनाने की तो लोग हमेशा ही सिर तोड़ कोशिश करते रहते हैं। आदमी को अगर कभी कहीं आराम मिलता है तो बस, क़ब्र में ही। उन्होंने पूरी कोशिश की। मैंने भी छिपे-छिपे उस जगह को तलाश करने की कोशिश की जिस जगह पर चश्मे का मुंह बन्द किया गया था। मैं यह मानने को तैयार न था कि वह नीच क़बुलख़्वाजा सदा के लिये ही चश्मे का मुंह बन्द कर सकता है–उल्लाह करे कि उस गीदड़ का नाम हमेशा के लिये मिट्टी में मिल जाये! मगर मेरी सभी कोशिशें बेसूद रहीं। न तो मैं और न कोई दूसरा ही आज तक यह जान सका कि उस जनूनी ने चश्मे को कर क्या दिया था। ग़ुलामों की पहाड़ी ही तो सिर्फ़ एक जगह नहीं थी जहां लोगों से पानी छीनकर उन्हें इस तरह बरबाद किया गया था। सभी जगह तो वे लोग ऐसा ही किया करते थे। कोकबुलाक़ की मिसाल ही ले लो।"

"मैंने लोगों को कहते सुना है कि कोकबुलाक़ कभी एक बड़ा चश्मा था और यह कि उसके पानी की धारा हमेशा एक जैसी रहती थी, कभी कम नहीं होती थी," आलिमजान ने कुछ सोचते हुए कहा।

"कोकबलाक़ का ग़ायब होना तो अभी हाल ही की बात है," उम्रज़ाक़-

अता ने जवाब दिया, "मेरे ख़याल में उसके पानी का स्वाद तो मैं अभी तक नहीं भुला हूं। यह तो तुम्हारी पैदायश के कुछ ही दिन पहले की बात है, आयक़िज़," वह अपनी बेटी की तरफ़ घूमा, "बासमची लोग हमसे बदला लेना चाहते थे, क्योंकि हमारे गांव के लोग अपनी हिफ़ाज़त के मामले में काफ़ी ताक़तवर थे। वे लोग कभी भी हमारे गांव में लूट-खसोट न मचा सके थे। जहां तक लाल फ़ौज के दस्तों का ताल्लुक़ है, तो हम उनकी हमेशा ही ख़ातिरदारी करते थे, रसद और फ़ौजी देकर मदद करते थे। हमसे बदला लेने के लिये बासमचियों ने कोकबुलाक़ चश्मे को तबाह कर डाला। जैसे-तैसे उन्होंने चश्मे का मुंह बंद कर दिया और फिर दर्रे के ऊपर की चट्टानों को उड़ा दिया। अब वहां कंकरियों-पत्थरों के सिवा कुछ भी नहीं। मैं ख़ासा बूढ़ा आदमी हूं, किन्तु मैं भी सिर्फ़ अन्दाज़ से ही अब यह बता सकता हूं कि चश्मा कहां था। और अब यानग़ाक़साय नदी का वह मोड़, जो लगभग आध किलोमीटर लम्बा है, सारे का सारा ही कोकबुलाक़ कहलाता है।"

चन्द मिनटों तक कमरे में ख़ामोशी छायी रही। समोवर ने गुनगुनाना बन्द कर दिया। चाय के प्याले जैसे के तैसे बिना छुए पड़े रहे। नान और किशमिश को किसी ने चखकर भी नहीं देखा। छत की कड़ियों के आसपास एक परवाना फड़फड़ा रहा था, उसके रेशमी पंख सरसरा रहे थे।

अचानक आयक़िज़ ने सिर ऊपर उठाया और बड़े ग़ौर से आलिमजान को घूरा। उसकी आंखों में काले कांसे का सा रंग था। उसकी आंखों में कभी स्नेह की गर्मी देखी जा सकती थी, कभी ग़ुस्से की चिनगारियां, मगर उदासीनता कभी नहीं। पर इस समय उसकी आंखों में इसी उदासीनता की झलक थी।

मगर यह ग़लतफ़हमी थी।

आयक़िज़ ने अब बोलना शुरू किया, उसकी आवाज़ जोश से भरी हुई थी।

"हमें इन सभी चश्मों का फिर से मुंह खोलना होगा। यानग़ाक़साय के पानी का हमें पूरा-पूरा इस्तेमाल करना होगा। हमें इस नदी से फ़ायदा उठाना ही है और इसलिये हम इसका मार्ग बदलकर आलतिनसाय की तरफ़ कर देंगे। हमें यह करना ही होगा और हम यह कर भी सकते हैं। ज़रा ग़ौर कीजिये कि वह ज़मीन कब से, कितने लम्बे अरसे से, पिछले

कई हज़ार सालों से बेकार पड़ी हुई है! यह वह अछूती ज़मीन ही है जिसमें कभी एक बीज तक नहीं फूटा। हम जैसे भी होगा चश्मों को खोज निकालेंगे और पानी बाहर निकालेंगे। हम यानग़ाक़साय नदी का रास्ता बदलकर आलतिनसाय की सारी ज़मीनों को पानी देंगे।"

औरों की तो बात ही एक तरफ़, उम्रज़ाक़-अता, जो कि अपनी बेटी की रग-रग पहचानते थे, उसके इस सासहपूर्ण निश्चय से हैरान हुए बिना न रह सके। वह किसी भी चीज़ के बारे में अपनी राय झटपट देना पसन्द न करते थे। दिमाग़ की अपेक्षा ज़बान से ज़्यादा काम लेना तो उन्हें बहुत ही बुरा लगता था। "जिस तरह से एक बीज धरती के अन्दर ही अन्दर पककर फूटता है और तभी लोग उसे देख पाते हैं, ठीक वैसे ही किसी ख़्याल को पहले अन्दर ही अन्दर पकना चाहिये," यह था उम्रज़ाक़-अता का फ़लसफ़ा।

आलिमजान ने ही पहल की।

"तुम ठीक कहती हो, आयक़िज़!" वह चिल्लाया और उसने क़ालीन पर ज़ोर से मुक्का मारा। "हमें ग्रिगोरी के दिखाये हुए रास्ते पर ही चलना चाहिये, रूसी लोगों के रास्ते पर।"

"यह ग्रिगोरी कौन है? मेरे ख़्याल में मैंने पहले तो कभी यह नाम नहीं सुना," उम्रज़ाक़-अता ने जानना चाहा।

"मेरा मतलब लड़ाई के दिनों के अपने दोस्त ग्रिगोरी से है। आजकल वह बहुत दूर रह रहा है, वोल्गा क्षेत्र में कृषि-विशेषज्ञ के रूप में काम कर रहा है, मगर हमारी दोस्ती के बन्धन आज भी पहले की ही तरह मज़बूत हैं। मेरे पास कल ही उसका एक ख़त आया था। उसने लिखा है कि उन्होंने मिल-जुलकर सूखे पर धावा बोल दिया है। अगर वे वहां सूखे से मोर्चा ले रहे हैं, तो हम ही पीछे क्यों रहें? पीछे रहकर हमारा काम नहीं चल सकता। ख़ैर! मैं तो एक साझे काम में जी-जान से हाथ बंटाने को तैयार हूं। बढ़ाओ अपना हाथ, आयक़िज़, मैं तुम्हारा शुक्रगुज़ार हूं।"

आलिमजान ने आयक़िज़ की तरफ़ अपना हाथ बढ़ा दिया मगर आयक़िज़ का उसकी ओर ध्यान न गया। वह अपने ख़्यालों में डूबी जोश के साथ कहती गई:

"इस बड़े काम में हम सभी को हाथ बंटाना होगा। हमें अपने अन्दर हौसला पैदा करना चाहिये। मगर आलिमजान-आग़ा, क्या हममें हौसले

की कमी है? हमारी ज़मीनें प्यासी हैं, पानी के लिये तरस रही हैं। हम उन्हें पानी देंगे।"

उम्रज़ाक़-अता ने सिर झुका लिया। उनकी लम्बी सफ़ेद दाढ़ी कढ़े हुए मेज़पोश को छूने लगी। वह अन्दर ही अन्दर खीझ से बेचैन हो रहे थे। वह रह-रहकर अपना सिर हिला देते और ऐसा लगता मानो अपनी दाढ़ी से मेज़ को साफ़ कर रहे हों।

"हां, किसी अन्धे में और जल्दी मचानेवाले में कोई फ़र्क़ नहीं होता। दोनों ही किसी गड्‌दे में गिर सकते हैं," बूढ़े ने ग़ुस्से से कहा। "तुम्हें अच्छी तरह सोचना-समझना चाहिये, बेटी। यह ख़ासा बड़ा और मुश्किल काम है। बुवाई बन्द करके लोगों को चश्मे खोद निकालने के काम में लगाना होगा। कोलख़ोज़ का अध्यक्ष क़ादिरोव इसके लिये कभी तैयार न होगा। वह कहेगा कि अगर हमारी कोशिश बेकार गई तो? अगर हमें चश्मे न मिले तो?"

"हम उन्हें ज़रूर ही तलाश कर लेंगे!" आयक़िज़ ने ज़ोर देकर कहा। "और क़ादिरोव क्या कहेगा – इससे फ़र्क़ ही क्या पड़ता है? हमें लोगों की राय लेनी चाहिये।"

"तुम यह कहती हो कि जिस तरह भी होगा हम यानग़ाक़साय को अपने क़ाबू में करके उसके पानी का इस्तेमाल करेंगे। तुम लोग इसे सपना न मानकर सत्य साबित करना चाहते हो। अगर ऐसी ही बात होती तो क्या बहुत पहले ही लोगों ने यानग़ाक़साय को अपने क़ाबू में न कर लिया होता? पानी हासिल करने के लिये तो सदियों से संघर्ष चल रहा है!"

"अताजान, क्या आप यह कहना चाहते हैं कि यह कोशिश ही फ़ज़ूल है?" आलिमजान ने पूछा।

"फ़ज़ूल? फ़ज़ूल ही नहीं, ख़तरनाक भी है। बेकार ही लोगों को उनके काम से हटाओगे।"

बुज़ुर्ग गर्म होते चले गये, मगर आयक़िज़ अपने जोश में उनके अन्दाज़ के तीखेपन को महसूस न कर सकी।

आयक़िज़ के अब्बा मेहमान के सामने अपनी बेटी से बहस न करना चाहते थे। इसलिये वह मुड़े तेज़ क़दमों से दरवाज़े की तरफ़ बढ़े और झटपट दरवाज़ा खोलकर आंगन में जा पहुंचे।

"उन्हें क्या हुआ है?" आलिमजान ने परेशान होते हुए पूछा।

"उन्हें मेरी फ़िक्र है," आयक़िज़ कुछ इस तरह मुस्कराई मानो सब कुछ समझती हो। "उन्हें डर है कि मैं तजरबे की कमी की वजह से कोई ऐसी बड़ी भूल न कर बैठूं जो फिर कभी सुधारी ही न जा सके।" वह जल्दी-जल्दी मेज़ साफ़ कर रही थी। "ख़ैर, मैं तो हलक़ा-सोवियत जा रही हूं," उसने अचानक कहा। "तुम कोलख़ोज़ के दफ़्तर की तरफ़ जा रहे हो न? तब तो हम दोनों को एक ही तरफ़ जाना है, चलो इकट्ठे ही चलें।"

"ठीक है, रास्ते में मैं तुम्हें यह ख़त भी दिखा दूंगा।"

वे दोनों बाहर बरामदे में आये। उम्रज़ाक़-अता आंगन के दूसरे सिरे पर थे। वह अपनी गुलाब की झाड़ियों में पूरी तरह खोये हुए थे।

"मैं जा रही हूं, अब्बाजान," आयक़िज़ ने पुकारकर कहा।

"उम्रज़ाक़-अता, मैं भी इजाज़त चाहता हूं," आलिमजान ने भी ऊंची आवाज़ में कहा।

बूढ़े मियां ने घूमकर भी नहीं देखा। जवाब में कुछ बड़बड़ाकर ही रह गये।

गली में पहुंचते ही आलिमजान ने जेब से ख़त निकाला और आयक़िज़ को दे दिया।

"अदाब, प्यारे आलिमजान," आयक़िज़ ने पढ़ा। "तुम्हारा ख़त मिला। ख़त पढ़ते ही लड़ाई के दिनों की सभी यादें ताज़ी हो गईं और वे सभी मुसीबतें और मुश्किलें याद हो आईं जो कभी हमने एकसाथ सही थीं। मैं बयान नहीं कर सकता कि तुमसे दूर रहना किस बुरी तरह अखरता है, मेरे दोस्त। यहां तो मैं सिर से पांव तक काम में दबा-सा पड़ा हूं। सूखे की अब कोई गुंजाइश नहीं रही – हम एक लम्बी-चौड़ी मोर्चाबन्दी करके इसपर क़ाबू पा रहे हैं।

"तुम्हारे लिये एक ख़ुशख़बरी – मेरी बीवी वाल्या ने बेटे को जन्म दिया है। नन्हा ख़ासा मज़बूत है। चार किलोग्राम वज़न है उसका। पहली ही बार जब वह रोया तो बड़े ज़ोर से, बड़ा रोब है उसकी आवाज़ में। कुल मिलाकर मैं बहुत ख़ुश हूं अपने बेटे, अपने वारिस से। कोलख़ोज़ के सभी लोग ख़ुशी में शामिल हुए। तुम्हारा कैसा हाल-चाल है? तुम्हारी और आयक़िज़ की शादी तो हो गयी न?"

आयक़िज़ ने हाथ नीचे कर लिया। ख़त उसके हाथ ही में था। वह एक क़दम पीछे रह गयी। आलिमजान उसकी तरफ़ मुड़ा। आयक़िज़ ने ख़त फिर से आंखों के सामने कर लिया और आगे की पंक्तियों पर उसने अपनी नज़रें गड़ा दीं।

"...वाल्या और मेरी तरफ़ से तुम दोनों को शुभकामनायें," आयक़िज़ ने पढ़ा। "तुम दोनों कुछ दिनों के लिये हम से मिलने आओ। तुम्हारे आने से हमें बेहद ख़ुशी होगी। हम वचन देते हैं कि तुम्हारे यहां आने के अवसर को हम बड़े उत्साह के साथ मनायेंगे। फ़सलें कट जाने के बाद, इसी साल की पतझर में तुम महीना भर हमारे पास आकर क्यों नहीं रहते? ज़रूर आना, हम इन्तज़ार करेंगे।

तुम्हारे दोस्त,

ग्रिगोरी और वाल्या।"

कुछ देर तक वे चुपचाप साथ-साथ चलते रहे। आख़िर एक वक्ष की छाया में आकर ठहर गये। यहां उनके रास्ते अलग होते थे। आलिमजान ने ख़त अपनी जेब में ठोंसने की कोशिश की, मगर उसकी उंगलियां कांप उठीं और ख़त ने जैसे वापस जाने से इनकार कर दिया।

"जेब में इस तरह ख़त नहीं डाला जाता," आयक़िज़ ने धीरे से कहा और ख़त उसकी जेब में डाल दिया।

"वह अपने हर ख़त में यही पूछता रहता है," आलिमजान ने धीमे से कहा। "क्या जवाब दूं मैं अपने दोस्त को, आयक़िज़? जब तक मुझे अपनी रानी का जवाब मालूम न हो जाये, मैं उसे जवाब दे ही क्या सकता हूं?"

आयक़िज़ की आंखें वृक्ष पर जमी हुई थीं। वह पेड़ की भद्दी-मोटी छाल पर ऊपर की तरफ़ जा रही चींटियों की पांत को टकटकी बांधे देख रही थी।

"आयक़िज़," आलिमजान ने प्यार से पुकारा।

"कहो, आलिमजान?"

"कब आयेगा हमारी शादी का नेक दिन?"

आयक़िज़ ने वृक्ष को छुआ और अचानक ही दो चींटियां उसकी उंगली पर चढ़ गयीं। चींटियां चौंकीं, घबरायीं और जल्दी से उसकी बांह की तरफ़ भाग चलीं।

उसने आलिमजान की तरफ़ देखा। उसकी आंखों में चालाकी भरी चमक थी।

"ज़रा सोचो तो, बीच-बाज़ार खड़े होकर इसकी चर्चा कर रहे हो!" आयक़िज़ ने कहा। "इतना भी नहीं जानते कि गली में खड़े होकर ऐसी बातें नहीं की जातीं? और फिर ज़रा उधर तो देखो! देखो तो हलक़ा-सोवियत के वे सभी लोग मेरा इन्तज़ार कर रहे हैं!"

४

जिस ज़माने में लोगों पर अमीरों का दबदबा था, उम्रज़ाक़-अता आलतिनसाय गांव के बेहद ग़रीब लोगों में से एक थे। उनकी टूटी-फूटी झोंपड़ी में अभाव तो सदा ही बना रहता और भूख भी जब-तब मेहमान बन जाती। बच्चे पैदा होते ही दम तोड़ देते। उनकी ख़ालबीबी को तो जैसे मुस्कराये एक ज़माना ही हो गया था। उम्रज़ाक़ तो उसकी मुस्कान को जैसे भूल ही चुके थे। मसीबतों ने कुछ इस तरह उसका दम निकाल दिया था कि वह केवल फुसफुसाती ही, ऊंचा बोल तक न पाती। दुखों ने उसकी चमकदार आंखों की रोशनी छीन ली थी, ख़ूबसूरत चेहरे की चमक-दमक ग़ायब कर दी थी। वह आधी रात गये चौंककर जाग उठती और बेचैनी से अपने छोटे-छोटे बेटों की दिल की धड़कनें सुना करती। क्या वे ज़िन्दा हैं या चल बसे? उसका अलीशेर, उसका तैमूर?

इस परिवार के भाग्य ने उस दिन पलटा खाया जब सोवियत सत्ता ने उम्रज़ाक़-अता को बारह तनाब ज़मीन दी। ग़रीबी तो अब भी थी, मगर घर में सिर्फ़ उसी की तूती न बोलती थी। उम्रज़ाक़-अता के चेहरे पर कुछ रौनक़ आ गयी, उसका जिस्म भर गया और कंधे चौड़े हो गये। अलीशेर और तैमूर भी अब अच्छे मोटे-ताज़े होते जा रहे थे।

आयक़िज़ का जन्म तब हुआ जब बड़ा लड़का दस बरस का था।

पुराने वक़्तों में लड़की पैदा होने पर किसान लोग कभी शायद ही ख़ुश होते थे। उन्हें तो ज़रूरत होती थी किसी मददगार की, हाथ बंटानेवाले की। वे बेटी नहीं, बेटा चाहते थे। मगर उम्रज़ाक़-अता ने परम्परा के उलट चलते हुए अपनी बेटी का खुले दिल से स्वागत किया। उन्हें तो वह मानो स्वर्ग से भेजी गयी एक देवी लगी। ख़ालबीबी तो जैसे फिर से जवान होने लगी। उसकी हंसी में जवानी की अपेक्षा अब कहीं अधिक गूंज आ गई थी। वह नन्ही-सी गुड़िया को बड़े लाड़-प्यार से पालने लगी।

नयी ज़िन्दगी शुरू हुई। आलतिनसाय के गांववालों ने एक सामूहिक फ़ार्म – कोलख़ोज़ – की स्थापना की। कुलाकों के ख़िलाफ़ उन्होंने एक मोर्चा क़ायम किया। अमीरों का सूरज ढलती पर था। वे बासमचियों की मदद को आगे आये, मगर उनके किये-धरे कुछ न बना। उन्हें हज़ारों मज़बूत, निष्कपट और दृढ़-प्रतिज्ञ लाल फ़ौज के जवानों का सामना करना पड़ा।

इस तरह हंसी-ख़ुशी की वह नयी ज़िन्दगी टिकी रही, बनी रही। ख़ालबीबी को ऐसा लगता कि हर चीज़ इस ख़ुशी की रोशनी में नहा गयी है, जगमगा उठी है। यह ख़ुशी-ख़ुशहाली उसके बच्चों की स्कूली किताबों में झलकती और उसकी सहेलियों के भरे-पूरे घरों में। उम्रज़ाक़-अता के शान्त शब्दों में भी इसी ख़ुशी की गूंज सुनाई देती। बच्चों के चेहरों पर भी इसी ख़ुशी-ख़ुशहाली की छाप अंकित दिखायी देती। भूख तो जैसे अब उनके लिये बेगानी हो गयी थी। अभाव और असुरक्षा से पैदा होनेवाली निराशा पर आधारित लड़ाई-झगड़े अब उनके लिये पराये हो चुके थे।

अपने अलीशेर पर तो ख़ालबीबी को बहुत ही गर्व था। अपनी जमात में वह हमेशा ही अव्वल नम्बर पर आता था। उसने अपनी माध्यमिक शिक्षा पदक के साथ पूरी की थी। स्कूल का सर्टीफ़िकेट लेकर जब वह घर पहुंचा तो उसने अपने मां-बाप को बताया कि वह लेनिनग्राद जाने का पक्का इरादा कर चुका है। अक्तूबर क्रान्ति के जन्मस्थान लेनिनग्राद में जाकर वह एक शिक्षा संस्थान में दाख़िल होना चाहता था। ख़बर सूनते ही ख़ालबीबी का दिल जैसे बैठ-सा गया। उस महान नगर तक पहुंचने के लिये पूरे पांच दिन सफ़र करना पड़ता था। और सो भी घोड़ों पर चढ़कर नहीं, रेलगाड़ी से। हो सकता है कि वह रास्ते में बीमार पड़ जाये या फिर उसे और कुछ ही हो जाये। मगर अलीशेर का फ़ैसला अन्तिम था। वह टस से मस न हुआ। वह लेनिनग्राद जायेगा, ज़रूर जायेगा और इंजीनियर बनकर वापस आयेगा। "अलीशेर बड़ा ही अच्छा बेटा है," ख़ालबीबी मन ही मन सोच रही थी। "वह अपना इरादा तो कभी नहीं बदलेगा। जब वह पढ़-लिखकर बड़ा आदमी बनकर लौटेगा तब भी अपनी मां का आज ही की तरह आदर-सम्मान करेगा। मगर फिर भी..."

"तो फिर ऐसा ही सही," उम्रज़ाक़ ने गम्भीर मुद्रा बनाकर कहा। "ग्रालतिनसाय में एक इंजीनियर के जन्म से तो सारे गांव का ही नाम ऊंचा होगा।"

अगले बरस तैमूर भी गांव छोड़कर चला गया। वह कृषिविशेषज्ञ बनना चाहता था। कृषि संस्थान था ताशक़न्द में, मगर ताशक़न्द भी बहुत नज़दीक न था।

उस साल उनका कोलख़ोज़ अपने ज़िले में पहले नम्बर पर आनेवाला था। ख़ालबीबी गांव के सर्वश्रेष्ठ कार्यकर्त्ताओं में से एक थी। बेटों की फ़िक्र करने का उसके पास वक़्त ही न था। व्यस्त तो वह बहुत ही थी, मगर जैसे-तैसे छोटी आयक़िज़ को सजाने-संवारने और उसके लिये मीठी-मीठी, ज़ायकेदार चीज़ें बनाने का समय निकाल ही लेती थी। जब वह अपनी बेटी के लम्बे और काले बालों को संवारती, तो उसका दिल ममता से उमड़-उमड़ आता। आयक़िज़ के बाल उसके घुटनों को छूते थे। ख़ालबीबी उनकी तीस या चालीस चोटियां बना देती।

"आह! कैसे घने, कितने प्यारे बाल हैं तुम्हारे!" ख़ालबीबी कहती। फिर सहसा घबराकर पूछती, "ये तो बहुत ही भारी हैं, मेरी रानी बेटी, इनसे कहीं तुम्हारा सिर तो नहीं दर्द करने लगता?"

"ज़रा इसकी बरौनियों को तो देखिये," वह कहती, "ये बहुत लम्बी-लम्बी हैं। इनसे कहीं इसकी आंखें तो कमज़ोर नहीं हो जायेंगी?"

आयक़िज एक अच्छी, स्वस्थ और हंसोड़ लड़की के रूप में बड़ी हो गयी। अपने बचपन में ख़ुद ख़ालबीबी तो बिल्कुल ही दूसरी तरह की लड़की थी। उसकी बेठी का स्वभाव बिल्कुल दी अलग था, बड़ी बेचैनी थी उसकी तबीयत में। वह हर चीज की तह में पहुंचने की कोशिश करती, हर चीज़ जानना चाहती, हर चीज में उसकी दिलचस्पी होती। अभी वह छः बरस की ही थी कि अपने अब्बा से अक़्ल चकरा देनेवाले सवाल पूछती। वह बेचारे तो बस सिर हिलाकर रह जाते।

"दिन में तो वैसे ही रोशनी होती है फिर सूरज दिन के वक़्त क्यों चमकता है? रात को जब अंधेरा होता है और घर से बाहर खेलना सम्भव नहीं हो पाता, तब सूरज को सुस्ती क्यों आ जाती है?

"बगुले अपने घोंसलों में एक टांग पर क्यों खड़े होते हैं? क्या उनकी दूसरी टांग में दर्द होता रहता है?

"मुल्ला क्या बहुत लालची होता है? वह अपने सिर पर इतनी बड़ी पगड़ी क्यों बांधे रहता है? उसमें से तो छोटी-छोटी दस लड़कियों के लिये आठ पोशाकें बन सकती हैं।"

इन सवालों के जवाब देने के लिये दुनिया की काफ़ी जानकारी और किताबें पढ़ने की क्षमता होनी लाज़िमी थी। अलीशेर उसे अपनी गोद में बैठा लेता, दस लड़कियां बताने के लिये मेज़ पर दस तीलियां रख देता और फिर हर तीली के साथ कद्दू का एक-एक बीज रख देता, पोशाक के रूप में। इस तरह वह आयक़िज़ को यह सिखाने की कोशिश करता कि आठ और दस बराबर नहीं होते।

आयक़िज़ स्कूल जाने की उम्र से एक बरस पहले ही यह जानती थी कि आठ पोशाकें, दस लड़कियों में नहीं बांटी जा सकतीं। वह यह भी जानती थी कि बाक़ी, जोड़ और गुना नाम की कुछ चीज़ें भी इस दुनिया में होती हैं।

जहां तक मुल्ला का सवाल था, सो तो अलीशेर ने चुटकी बजाते में उसे समझा दिया। वह पुराने तौर-तरीक़ों का ग़ुलाम है। आयक़िज़ ने सहमत होते हुए सिर हिला दिया।

सच बात तो यह है कि आयक़िज़ सारे परिवार पर शासन करती थी। उम्रज़ाक़-अता दिन भर मेहनत करके चाहे कितने भी थके-मांदे क्यों न होते, फिर भी आयक़िज़ उन्हें चैन न लेने देती और तरह-तरह के सवाल पूछ-पूछकर परेशान करती रहती।

"बासमची दल के लोगों को उनकी मज़दूरी कौन देता है? किताबें किस चीज़ की बनी हुई हैं?"

तैमूर अपनी भूगर्भशास्त्र की पुस्तक पर सिर झुकाये विभिन्न खोजों में प्राप्त की गई जानकारी के बारे में तथ्य याद करने की कोशिश करता, मगर आयक़िज़ थी कि उसे कुछ भी न करने देती। वह तो उसी घड़ी यह जानना चाहती कि लोग पहाड़ों में किस चीज़ की तालाश कर रहे हैं और वे चट्टानें और कच्ची धातुयें आती किस काम हैं।

आख़िर आयक़िज़ के स्कूल जाने का दिन आया।

जब वह घर लौटी तो बिल्कुल गुम-सुम थी। ख़ालबीबी डरी कि बच्ची बीमार हो गई है। दूसरे दिन तो उसका चेहरा और भी उतर गया। और तीसरे दिन तो अपने होंठ काटते और आंसुओं को जैसे-तैसे रोके रहने

की कोशिश करते हुए उसने यह कह ही दिया कि स्कूल में उसका पढ़ना बहुत मुश्किल है।

"स्कूल में पढ़ना बहुत मुश्किल है?" उसके भाइयों ने एक दूसरे के चेहरे पर प्रश्न भरी दृष्टि डाली।

उम्रज़ाक़-अता निराशा से अपनी दाढ़ी थपथपाते रहे। ख़ालबीबी ने बच्ची को दिलासा देने की कोशिश की।

"कोई बात नहीं, बेटी! सब ठीक-ठाक हो जायेगा, रो नहीं।"

और तब आंसुओं की झड़ी लगाते हुए आयक़िज़ ने उन्हें बताया कि उसके लिए एक, दो और तीन घण्टे तक अपनी अध्यापिका से वही बातें सुनते रहना बहुत मुश्किल है जो अलीशेर और तैमूर उसे एक बरस पहले बता चुके हैं। उसके लिए अक्षर जोड़-जोड़कर वह किताब पढ़ना एक मुसीबत ही तो थी जिसे वह उसी दिन शुरू से आख़िर तक पढ़ गई थी, जिस दिन उसके अब्बा उसके लिए ख़रीदकर लाए थे।

आयक़िज़ ने एक श्रेष्ठ विद्यार्थी के रूप में सात वर्षीय स्कूल की शिक्षा समाप्त की। स्थानीय पुस्तकालय में जितनी भी पुस्तकें थीं, सभी उसने पढ़ डाली थीं। उसे अपना भविष्य साफ़ दिखाई दे रहा था—तीन वर्ष तक माध्यमिक स्कूल की पढ़ाई और उसके बाद वही कृषि संस्थान, जहां तैमूर ने अपनी पढ़ाई की थी। वह एक पढ़ी-लिखी कृषिविशेषज्ञा बनकर अपने कोलख़ोज़ में लौटेगी।

यूं तो आयक़िज़ उसी साल के बसन्त में संकटकालीन स्थिति पैदा होने पर अपनी योग्यता दिखा चुकी थी।

आकाश साफ़ था और धूप खिली हुई थी। दिन था ख़ुशी से भरपूर, आश्चर्यों का संकेत लिये हुए—ऐसा दिन जो चढ़ती जवानी के दिनों में बहुत समय तक याद रहता है। आयक़िज़ और सातवें दर्जे की दूसरी लड़कियां पहाड़ी खेतों में किसानों की मदद के लिए चल दीं। सदा की भांति, लाला और मेहरी, दो छोटी लड़कियों ने आयक़िज़ से कहा कि वह उन्हें भी साथ ले ले। सो वे भी साथ हो लीं।

ये दोनों लड़कियां आयक़िज़ की परछाइयां कही जाती थीं और सचमुच हर जगह ही उसके साथ-साथ रहती थीं। वे एक दूसरी से बिल्कुल भिन्न होती हुई भी पक्की सहेलियां थीं। झेंपू, गुपचुप, लम्बी-लम्बी टांगें—यह थी मेहरी। उसका बाप मुराद अली पहाड़ी चोटियों पर रहता था। वह सिर्फ़

उन्हीं दिनों नीचे आता जब बुवाई और कटाई पूरे जोबन पर होती। लाला थी गोल-मटोल और मोटी, ख़ूब मचाती थी शोर। वह आलिमजान की बहन थी। आलिमजान उस समय युवा कम्युनिस्ट लीग का सेक्रेट्री था। इन दोनों लड़कियों की सूरतें अलग-अलग थीं, स्वभाव और पसन्दें जुदा-जुदा थीं। उनकी दोस्ती का राज़ छिपा था आयक़िज़ के प्यार में, आयक़िज़ के प्रति उनके निष्कपट, अंधे और निस्स्वार्थ प्रेम में।

वे ढालू और तंग पगडंडी पर चलती हुई दर्रे तक पहुंच चुकी थीं। बसन्त की प्यारी-प्यारी धूप लड़कियों के चेहरों को सहला रही थी। हवा थी बिलौरी, छनी-छनी। नीचे की तरफ़ सेब के पेड़ों पर फूल आ चुके थे। कुछ ऊपर को पेड़ फूलने ही लगे थे। और चोटी पर, दर्रे के पास घास की कोमल और हरी-हरी पत्तियां दिखायी देने ही लगी थीं।

लड़कियां चोटी पर पहुंचीं और आराम करने के लिये बैठ गयीं। तभी आयक़िज़ ने यह देखा कि दर्रे के बायीं ओर वाला एक भारी पत्थर ज़मीन पर पड़ा हुआ है, जबकि वह यह अच्छी तरह जानती थी कि वह सीधा खड़ा रहता था और उसकी बारीक नोक आकाश की ओर उठी रहती थी। आयक़िज़ ने अपनी सहेलियों को वहीं छोड़ा और जांच-पड़ताल करने के लिये उस तरफ़ चल दी। पत्थर को हिलाना-डुलाना काफ़ी मुश्किल काम था, मगर फिर भी किसी ने इतना करने की तकलीफ़ की ही थी। चट्टानों के टूटकर गिरने का भी यह मौसम नहीं था। आख़िर किसे इसे गिराने की ज़रूरत हुई और सो भी क्यों? अचानक उसके पांवों के बिलकुल पास से ही पक्षियों का एक दल ऊपर को उड़ा।

आयक़िज़ ने पत्थर के आसपास चक्कर लगाया और घास में गेहूं के कुछ दाने पड़े हुए देखे।

उसके मन पर पहली प्रतिक्रिया जो हुई वह थी डर की। अभी तो वह उस स्थिति को अच्छी तरह समझ भी न पाई थी। पत्थर के नीचे से उसे एक फटी हुई बोरी का कोना दिखाई दे रहा था और तब वह यह समझ गयी कि यहां कोई अपराध किया गया है।

आयक़िज़ की सहेलियों ने उसे पुकारा। उसे लाला का ज़ोरदार ठहाका सुनायी दिया। मगर आयक़िज़ तेज़ी से नीचे की तरफ़ दौड़ गयी, जल्दी से घूमी और अखरोट के पेड़ों के बीच जा छिपी।

उसे सोचना-समझना था। इस बात का पता लगाना था कि कोलख़ोज़ का गेहूं किसने चुराया, किसने छिपाया। मगर सोचने-विचारने की कुछ ज़रूरत ही न थी – मामला बिल्कुल साफ़ था। गेहूं की बोरियों को वहां से ले जाने का काम उसके अपने ग़फ़ूर मामा के ज़िम्मे था। बोरियां लादकर ले जाने का काम सिर्फ़ वही करता था और इसलिये अगर कोई उन्हें चुरा सकता था, तो वही।

स्कूली पायनियर संगठन की नेत्री थी अध्यापिका ज़ुहरा। उसकी आयक़िज़ के बारे में बहुत ही अच्छी राय थी। "कोलख़ोज़ को लूटनेवाले इस आदमी को समझा क्या जाये? वह समाज का दुश्मन है, जान-बूझकर हानि पहुंचा रहा है। वह हमारी सारी सोवियत भूमि का दुश्मन है, मेहनत करनेवाले कामगारों का बैरी है। वह अनाज नष्ट करनेवाले कीड़ों से भी कहीं अधिक बुरा है..."

अब क्या लाभ था तर्क-वितर्क से – ग़फ़ूर मामा कोलख़ोज़ का दुश्मन तो था ही।

मां को जब यह मालूम होगा तो उसके दिल को भारी धक्का लगेगा।

आयक़िज़ उठी, उसने अपने बाल ठीक किये और धीरे-धीरे गांव की तरफ़ चल दी। प्यास के मारे उसका गला सूखा जा रहा था। पगडंडी के दोनों तरफ़ सेबों के पेड़ फूले हुए थे। आयक़िज़ को लगा कि पिछली बार जब उसने इन पेड़ों को देखा था, तब वह बहुत ही छोटी-सी लड़की थी। इतनी थोड़ी-सी देर में मानो इतना ज्यादा वक़्त बीत गया था।

स्कूल की देखभाल करनेवाली औरत ने आयक़िज़ को बताया कि ज़ुहरा को टेलीफ़ोन करके ज़िला पार्टी कमेटी के दफ़्तर में बुला लिया गया है और यह कि वह सन्ध्या तक नहीं लौटेगी।

"मैं शाम होने तक इन्तज़ार नहीं कर सकती," आयक़िज़ इतना कहकर बाहर चली गई।

वह शाम होने तक इन्तज़ार नहीं कर सकती थी – दर्रा सूना पड़ा था, सभी लोग बाहर खेतों में काम कर रहे थे। अंधेरा होते ही ग़फ़ूर मामा या तो अनाज लाद ले जायेगा या फिर कहीं दूसरी जगह छिपा देगा...

क़िस्मत ने उसका साथ दिया – सभी कोमसोमोल सदस्य तो बाहर खेतों में काम कर रहे थे मगर उनका सेक्रेटरी अपने दफ़्तर में बैठा हुआ कुछ लिखने में व्यस्त था।

"सलाम, आलिमजान-आग़ा," आयक़िज़ ने ऊंची आवाज़ में कहा, "मैं एक ज़रूरी काम से आई हूं।"

बात करने का अन्दाज़ गम्भीर था, सेक्रेट्री मुस्कराता हुआ उठ खड़ा हुआ। वह बहुत लम्बा, दुबला-पतला युवक था। उसकी छाती और कंधे बस अभी भरने ही लगे थे। उसमें और उसकी बहन लाला में कोई समानता न थी।

उसने अपना हाथ आयक़िज़ के सिर पर रख दिया।

"बताओ अपना ज़रूरी काम, लड़की। उम्रज़ाक़-अता की बेटी हो न तुम?"

आयक़िज़ ने अपने सिर को एक झटका दिया। आलिमजान का हाथ हवा में तैरता-सा रह गया।

"बैठ जाओ," आयक़िज़ ने झटपट कहा और ख़ुद भी फ़ौरन ही बैठ गयी।

जैसे ही आयक़िज़ ने अपनी बात कहनी शुरू की कि आलिमजान की मुस्कान न जाने कहां गुम हो गयी और वह बड़े ध्यान से उसकी बात सुनने लगा। उसने आयक़िज़ को न तो कहीं रोका, न टोका। आयक़िज़ के चेहरे पर अपनी आंखें जमाये वह गम्भीर होकर उसकी बात सुनता रहा। आयक़िज़ को उसका यह ढंग बहुत पसन्द आया। आयक़िज़ जो कुछ उसे या तो बता न सकी या बताना न चाहती थी, आलिमजान वह सभी कुछ ताड़-भांप गया। वह जानता था कि पहाड़ की चोटी पर भारी पत्थर के नीचे दबी हुई वे कम्बख़्त बोरियां ही आयक़िज़ के दिल पर एक भारी बोझ बनी हुई हैं।

"शुक्रिया, लड़की," आयक़िज़ जब अपनी बात पूरी कर चुकी तो आलिमजान ने कहा।

"शुक्रिया," आलिमजान ने दोहराया और उससे हाथ मिलाया। "हम उसे गेहूं न ले जाने देंगे।" आयक़िज़, आलिमजान के मज़बूत हाथ को अपने छोटे-से हाथ में थामे थी। आयक़िज़ ने महसूस किया कि वह आलिमजान पर पूरी तरह भरोसा कर सकती है। आयक़िज़ उसकी आंखों में झांककर देखने के लिये और नज़दीक आ गयी।

"पतझर के दिनों में मैं स्कूल लौटकर आठवें दर्जे की पढ़ाई शुरू करना चाहती थी और माध्यमिक स्कूल की पढ़ाई समाप्त करके कृषि संस्थान

में जाने की सोच रही थी," उसने कहा, "मगर अब मैं यह सोचती हूं कि मेरी पढ़ाई कुछ वक़्त तक बन्द रह सकती है। तुम क्या सलाह देते हो, आलिमजान-आग़ा? अगर मैं ख़ुद अपने हाथों से कुछ बुवाई और कटाई कर डालूं तो क्या यह बेहतर नहीं होगा? चोर ने जो गेहूं चुरा लिया है उसकी कमी तो पूरी हो जायेगी न?"

आयक़िज़ के मन के अन्दर जो उथल-पुथल मच रही थी, आलिमजान ने उसकी सराहना की। उसके दिल में उसके प्रति एक भाई के से स्नेह का तूफ़ान उमड़ आया। वह उठा और इस तूफ़ान पर क़ाबू पाने के लिये कमरे में इधर-उधर चक्कर काटने लगा।

"हमारा कोलख़ोज़ इतना गया-बीता नहीं कि हम अपने बच्चों को काम करने के लिये मजबूर करें," उसने कहा, "तुम एक ग़लत नतीजे पर पहुंची हो," वह कहता गया, "तुम्हें एक अच्छी और समझदार कृषिविशेषज्ञा बनना चाहिये–तुम्हें तो जी-जान से यही कोशिश करनी चाहिये। सो स्कूल मत छोड़ना। जितनी अधिक मेहनत से पढ़ोगी, कोलख़ोज़ का उतना ही ज़्यादा भला होगा। और वह, जो हमारे कोलख़ोज़ को लूट-खसोट कर हाथ रंगना चाह रहा था, उसे अपने जुर्म की सज़ा भुगतनी होगी।"

५

१९४३ की गर्मी के दिन थे।

आलिमजान कभी का मोर्चे पर जा चुका था।

अलीशेर और तैमूर भी मोर्चे पर थे। कभी-कभार उनके ख़त आते। ख़त संक्षिप्त होते और जल्दी में लिखे हुए। मगर आयक़िज़ तो उनमें ऐसे खो जाती गोया वे अच्छे-लम्बे उपन्यास हों।

लड़ाई शुरू होने के कुछ ही पहले कोलख़ोज़ ने उस्रज़ाक़-अता के लिये एक बड़ा मकान बनवा दिया था। अपने बेटों को लड़ाई में भेजने के बाद तो ख़ालबीबी काफ़ी बूढ़ी-बूढ़ी और लुटी-लुटी-सी दिखायी देने लगी। वह अपने बेटों के ख़त उन कमरों में रखती जो उनके अपने होनेवाले थे। उसकी नज़र में दो लड़कियां भी थीं। वह चाहती थी कि उसके लड़के उन्हीं से शादी करें...

आयक़िज़ की अपनी परेशानियां थीं, उसके अपने मन का ऊहापोह था। अभी तो स्कूल का एक और साल बाक़ी था और उसके बाद कालिज। मगर क्या यह अपनी चिन्ता का वक़्त था? अपनी पढ़ाई की फ़िक्र करने का समय था? इस वक़्त तो सभी के सामने एक ही लक्ष्य था – जी-जान से देश की मदद करना, जैसे भी हो लड़ाई जीतना। इसके लिये मोर्चे पर जानेवालों का कोलख़ोज़ में छोड़ा गया काम सम्भालना ज़रूरी था। शुरू-शुरू में उसे काम और पढ़ाई, दोनों को एकसाथ निभाना मुश्किल लगा। मगर फिर उसने मन ही मन सोचा कि "मोर्चे पर लड़नेवाले फ़ौजियों की कैसी हालत होगी? आलिमजान का क्या मुझसे बुरा हाल नहीं होगा? मैं पढ़ूंगी और काम भी करूंगी। जहां तक कालिज का ताल्लुक़ है सो तो मैं पत्र-व्यवहार पाठ्यक्रम द्वारा पूरा कर लूंगी।"

कोलख़ोज़ का काम करतीं औरतें, कमउम्र के लड़के-लड़कियां और बूढ़े लोग। आयक़िज़, कोलख़ोज़ के उपाध्यक्ष का काम भी करती और कोमसोमोल संगठन के सेक्रेट्री का भी। जितना वह कर सकती थी, काम उससे कहीं ज़्यादा था। मगर उसने पढ़ाई जारी रखी।

आख़िर उसे आलिमजान का ख़त मिला – बहुत इन्तज़ार के बाद। उसके अन्दर से आवाज़ आती थी कि वह ख़त लिखेगा ज़रूर। वह रात भर उस ख़त का जवाब लिखती रही। आलिमजान के जाने के बाद कोलख़ोज़ में जो काम हो चुका था, उसने विस्तारपूर्वक इसका वर्णन किया और यह भी लिखा कि निकट भविष्य में उनकी क्या योजनायें हैं। इसके बाद तो सवालों की भरमार थी। आयक़िज़ ने आलिमजान से प्रार्थना की कि वह उसे उसके पत्र का उत्तर अवश्य दे और एक मित्र के नाते अपनी सलाह भी दे। उस ख़त में उसके सभी तरह के सन्देह थे, शिकायतें और आशायें थीं।

इसके बाद तो चिट्ठी-पत्री का सिलसिला आलिमजान के सेना से छुट्टी पाने के समय तक नियमित रूप से जारी रहा। उनके ख़त मित्रों जैसे होते और उनमें वे खुलकर अपने मन की बातें कहते। इन्हीं ख़तों में कब और कैसे उनका प्रेम प्रगट हुआ, इसका न तो आयक़िज़ को पता लगा और न ही आलिमजान को।

फिर बसन्त आ गया था। जिस समय आयक़िज़ अपनी परीक्षाओं की तैयारी में जुटी हुई थी और आलिमजान बर्लिन के नज़दीक मोर्चे पर लड़ रहा था,

उम्रज़ाक़-अ्रता के घर में मातम छा गया। तैमूर लड़ाई में मारा गया और कुछ ही अर्से बाद अलीशेर।

जब यह बुरी ख़बर आयी तो उम्रज़ाक़-अ्रता उज़्बेक जनतन्त्र के किसानों की एक सभा के सिलसिले में ताशक़न्द गये हुए थे। वह अपने को जवान महसूस करते हुए ख़ुश-ख़ुश लौटे, बीवी और बेटी के लिये उपहार भी लाये। दहलीज़ पार करते ही वह यह समझ गये कि जो कुछ बुरे से बुरा हो सकता था, वह हो चुका है। ख़ालबीबी दस्तरख़ान के नज़दीक ऐसे बैठी थी मानो पत्थर हो गयी हो। मेज़ पर आंखों को चौंधियाता हुआ सफ़ेद मेज़पोश बिछा था और काग़ज़ के दो पुर्ज़े पड़े हुए थे। हर पुर्ज़े के पास कुछ पदक रखे थे।

"क्या यह सच है?" उम्रज़ाक़-अ्रता ने बुझी-सी आवाज़ में पूछा।

"हां," आयक़िज़ ने जवाब दिया और उसका सिर झुक गया।

उम्रज़ाक़-अ्रता ने पदक उठाये, उन्हें आंखों के पास किया और टकटकी बांधकर देखते रहे। एक पदक का किनारा टूटा हुआ था। गोली या छर्रा यहीं लगा था। उम्रज़ाक़-अ्रता फ़र्श पर गिर गये और मन ही मन रोते रहे।

शायद जीवन के ऐसे ही दारुण दुख के क्षणों में ही आयक़िज़ के माथे पर शोक की पहली रेखा उभरी।

बेटे जब से लड़ाई में गये थे ख़ालबीबी एड़ी-चोटी का पसीना एक करके कोलख़ोज़ में काम करती थी। वह कभी छुट्टी न लेती और हमेशा यही कहती कि लड़कों के सही-सलामत घर लौट आने पर ही छुट्टी लेगी। अब वह चौबीसों घण्टे बैठी रहती, ग़म में डूबी हुई सी, बहरी और गूंगी बनी हुई। अपनी बेटी के आंसुओं तक की भी परवाह न करती। इस भारी धक्के को सहने की उसमें हिम्मत न रही थी। कुछ ही अर्से बाद वह इस दुनिया से चल बसी। घर भर पर गहरे दुख की छाया पड़ गयी, सभी मातम में डूब गये।

इस सदमे से बूढ़े उम्रज़ाक़-अ्रता की पीठ तो झुक गयी, मगर आत्मा की दृढ़ता चट्टान की तरह मज़बूत बनी रही।

"बेटी," बीवी को दफ़नाने के फ़ौरन ही बाद उम्रज़ाक़-अ्रता ने आयक़िज़ से कहा, "अलीशेर और तैमूर तो न रहे मगर उनके साथी तो अभी तक मोर्चे पर डटे हुए हैं। बर्लिन भी अभी तक जीता नहीं गया।

मेरे बेटों के साथियों को रोटी की ज़रूरत होगी। मुझे बताओ मेरी बिटिया, क्या हम उनकी पहले से अधिक मदद नहीं कर सकते? क्या पहले से ज़्यादा मेहनत करना मुमकिन नहीं?"

इसके बाद तो उम्रज़ाक़-अता अपने काम पर ऐसे टूटे जैसे कोई भूखा जानवर किसी शिकार पर टूटता है। आयक़िज़ समझ गयी कि कड़ा परिश्रम करके वह अपना दुख कम करने की कोशिश कर रहे हैं। काम ही दर्द की दवा है। मगर फिर भी दुख कभी-कभी बाज़ी जीत ही जाता। तब उम्रज़ाक़-अता अपने बेटों के कमरों में चले जाते और उनके कपड़ों में मुंह छिपाकर फूट-फूटकर रोते।

वह अपने मन में सोचते कि आयक़िज़ यह सब कुछ नहीं जानती। मगर वह सब कुछ जानती थी। वह बड़ी कोशिश करके, अपने अब्बा की ख़ातिर, जैसे-तैसे अपने आंसुओं पर क़ाबू पाती। उम्रज़ाक़-अता के दुख का ज्वार जब उतर जाता तो आयक़िज़ बड़ी शान्त-सी मुद्रा बनाये हुए कमरे में जा पहुंचती और उन्हें बाहर ले जाती।

बूढ़े बाप के दिल का ज़ख़्म भर रहा था, मगर बहुत धीरे-धीरे। कुछ समय बाद घातक दुख की जगह ले ली चिन्तन और उदासी ने। दुख के साथ होनेवाले अपने संघर्ष में उम्रज़ाक़-अता ने जीत हासिल कर ली थी।

उम्रज़ाक़-अता का नाम न केवल गांव के लोग ही, बल्कि ज़िला भर के सभी लोग जानते थे। वे सभी उनकी बहुत इज़्ज़त करते थे और उन्हें समझदार, ईमानदार और मेहनती आदमी मानते थे। अब वे लोग उनका और भी अधिक सम्मान करने लगे। वे उनकी आत्मा की दृढ़ता और उसका निखार-सौंदर्य भी देख चुके थे। "हमारे दो अफ़सरों के अब्बाजान," वे उन्हें अब इस तरह पुकारने लगे। उम्रज़ाक़-अता के काम का अपना एक अलग और ऊंचा स्थान था।

ज़िले के अधिकारीगण अक्सर इनसे मिलने आते, वे न केवल श्रद्धा के फूल ही भेंट करते, बल्कि प्रबन्ध सम्बन्धी बहुत-से सवालों के बारे में इनकी राय भी लेते।

लगता था कि आयक़िज़ का मुश्किल समय ख़त्म हो गया है क्योंकि उसके अब्बा को अब उसके सहारे की ज़रूरत न रही थी। वह जब कुछ सम्भल गये, तो आयक़िज़ को अपने दुख की कटुता, जो कुछ छिन गया था, उसकी कभी पूर्त्ति न होने की बात बुरी तरह खटकने लगी।

भाई न रहे थे, मां भी छोड़ गयी थी। उसे सहारा था तो केवल ग्रालिमजान के ख़तों का। इन पत्रों में सहानुभूति होती थी, सूझ-बूझ होती थी ग्रौर होता था मूक प्रेम का संकेत।

ग्रालिमजान ने ग्रपने एक पत्र में लड़ाई के दिनों के ग्रपने एक मित्र के बारे में लिखा:

"शुरू से ही हम दोनों कंधे से कंधा मिलाकर लड़े हैं। जर्मनी में भी हम इकट्ठे रहे हैं। मेरे इस साथी का नाम है – ग्रिगोरी इवानोविच पेत्रोव। उसे ग्रब सेना से छुट्टी दे दी गयी है। मुझे तुम्हें एक छोटा-सा राज़ बताना है, ग्रायक़िज़। दर ग्रसल यही वह राज़ है जिसने हमें लड़ने ग्रौर जीतने की ताक़त दी। यह राज़ एक कहानी है जो मैं ग्रौर ग्रिगोरी, बारी-बारी से एक दूसरे को सुनाते थे। जैसे-जैसे हमने वह कहानी सुनायी, वैसे-वैसे वह लम्बी, ग्रौर लम्बी होती गयी।

"यह कहानी दो लड़कियों के बारे में है। दो फ़ौजियों को मोर्चे पर भेज दिया गया ग्रौर उन दो लड़कियों ने घर पर उनका काम सम्भाला। शायद वे इन फ़ौजियों को थोड़ा-सा प्यार भी करती थीं... ये लड़कियां उन्हें प्यारे-प्यारे ख़त लिखती थीं। हर ख़त के साथ हमारी कहानी लम्बी, ज़्यादा दिलचस्प ग्रौर घटनापूर्ण होती गयी। एक लड़की का नाम था वाल्या। ग्रिगोरी ग्रपनी कहानियों में वाल्या के ख़तों के कुछ हिस्सों का ज़िक्र करता। दूसरी लड़की का नाम था ग्रायक़िज़। ग्रायक़िज़ के ख़तों के कुछ हिस्सों की चर्चा मैं करता। तुम मेरी बात बिल्कुल सच मानना – मुसीबत ग्रौर तक़लीफ़ की घड़ियों में इन कहानियों ने हमें बहुत सहारा दिया।

"लड़ाई ख़त्म हुए ख़ासा ग्रर्सा हो चुका। मगर कहानियां ग्राज भी चल रही हैं। ग्रिगोरी तो वोल्गा प्रदेश में चला गया है ग्रपनी वाल्या की खोज में, ग्रौर मैं... नाराज़ मत होना मुझसे, ग्रायक़िज़, मेरे इस ग्रजीब-से ख़त के लिये। ग्रौर यह बताने के लिये कि तुम मुझसे नाराज़ नहीं हुई हो, मेरे ख़त का जरूर जवाब देना ग्रौर लाला के बारे में मुझे सब कुछ लिखना।"

नाराज़गी? क्या वह इस बात से नाराज़ हो सकती थी? "ग्रजीब ख़त" शायद पढ़ते ही वह इन शब्दों का सही मतलब न समझ सकी, इनकी तह तक न पहुंच सकी। ग्राख़िर हुग्रा क्या – यह तो ख़त ही है, वह ख़ुद तो बात नहीं कर रहा। लड़ाई ख़त्म हुई, जीत का सेहरा रूस

के सिर बंधा। सैनिक घर लौट आये, मगर आलिमजान को जर्मनी में रखे जानेवाले दस्तों के साथ रोक लिया गया।

आयक़िज़ इस समय पत्र-व्यवहार पाठ्यक्रम के तीसरे वर्ष में थी। मगर बाक़ी के दो सालों में अत्यधिक कड़े परिश्रम की अपेक्षा थी। इसके लिये पूरे समय के विद्यार्थी के रूप में ताशक़न्द के कालिज में जाकर पढ़ना ज़रूरी था। पर कोलख़ोज़ की अर्थव्यवस्था की बहाली अभी शुरू ही हो रही थी। आयक़िज़ ने यह अनुभव किया कि ऐसे समय में काम-काज छोड़कर कालिज में चले जाना, अपने कर्त्तव्य के प्रति बड़ी बेवफ़ाई होगी। आयक़िज़ ने इस बारे में आलिमजान को लिखा और यह प्रार्थना की कि वह उसकी समस्या सुलझाये।

मगर उसे मार्ग दिखाने का काम आलिमजान ने नहीं किया।

जुलाई का महीना था। आयक़िज़ खेतों में काम कर रही थी। सहसा उसकी नज़र कोलख़ोज़ के अध्यक्ष क़ादिरोव पर पड़ी। वह तेज़-तेज़ क़दम बढ़ाता हुआ उसकी तरफ़ आ रहा था। उसके चेहरे पर परेशानी झलक रही थी।

"ज़रा सुनो तो, आयक़िज़," उसने कहा, "मुझे सच-सच बताओ – तुमने ज़िला पार्टी कमेटी को क्या कुछ लिखा है?"

"नहीं तो, क्यों?"

क़ादिरोव को उसपर विश्वास न हुआ। वह उससे सवाल पूछता गया:

"हो सकता है कि तुमने कोई शिकायत की हो या कोई दूसरी ऐसी ही बात हो, क्यों?"

आयक़िज़ को उसका बात करने का यह ढंग अच्छा नहीं लगा।

"अभी तक तो इसकी नौबत नहीं आयी। मगर यह कि कोई दूसरा भी ऐसा नहीं करेगा इसका मुझे यक़ीन नहीं! तुम तो अपनी इज़्ज़त, अपने ऊंचे नाम के सिवा, दूसरी किसी चीज़ का ख़्याल ही नहीं करते!" खरी-खरी सुनाकर वह अपने काम की तरफ़ चल दी।

क़ादिरोव उसके साथ-साथ चलता गया और अपने हाथ हिलाता हुआ घबराया-सा कुछ बोलता गया:

"चली कहां जा रही हो? मालूम भी है, उन्होंने तुम्हें ज़िला पार्टी कमेटी के दफ़्तर में बुलाया है! मगर सवाल यह है कि किसलिये? क्यों? बात तो यही समझ में नहीं आ रही है! उन्होंने तुम्हें फ़ौरन आने के लिये

कहा है, तुम्हें सीधे पहले सेक्रेट्री के पास जाना है। अच्छी तरह समझ लो, तुम्हें फ़ौरन जाना है और मिलना है पहले सेक्रेट्री से। इसका तो सिर्फ़ एक ही मतलब निकलता है कि तुमपर कोई मुसीबत आनेवाली है। तुम्हें किसी शिकंजे में जकड़ देंगे।"

"मगर क्यों, मैंने किया क्या है?" आयक़िज़ ने पूछा। "हमसे कोई ग़लती हुई है क्या? या हमारा काम ढीला है?"

क़ादिरोव अब साफ़ तौर पर परेशान दिखाई देने लगा था।

"फ़िक्र मत करो, ऐब निकालना तो वे ख़ूब जानते हैं," उसने हताश होते हुए कहा और अपना सिर झटक दिया। मगर फिर अचानक ही उसके चेहरे पर चमक लौट आई। उसे एक नई बात सूझी जिससे उसकी कुछ हिम्मत बंधी, "मगर यह भी तो हो सकता है कि इसका ताल्लुक़ सिर्फ़ तुम्हीं से हो? शायद उन्हें कोमसोमोल के बारे में कुछ पूछ-ताछ करनी हो? ख़ैर, जो भी हो तुम्हें जल्दी करनी चाहिये। मैं उनसे कह आया हूं कि तुम्हारे लिये घोड़ा तैयार रखें।"

आयक़िज़ जब पार्टी कमेटी के दफ़्तर में पहुंची तो पहले सेक्रेट्री ने खड़े होकर उससे हाथ मिलाया। पहला सेक्रेट्री नाटे क़द का, पके बालोंवाला व्यक्ति था। उसके चेहरे पर कुछ ही समय पहले रोगमुक्त होनेवाले आदमी की सी झलक थी।

सेक्रेट्री ने हाथ मिलाते हुए आयक़िज़ को बड़े ध्यान से देखा।

"जूराबायेव," सेक्रेट्री ने अपना परिचय दिया।

"ओह, साथी जूराबायेव, कितने अधिक बदल गये हैं आप!" आयक़िज़ अपनी हैरानी न छिपा सकी।

लड़ाई शुरू होने से पहले जूराबायेव अक्सर उनके कोलख़ोज़ में आता था और आयक़िज़ के अब्बा से भी मिला-जुला करता था। आयक़िज़ ने कुछ ही समय पहले यह सुना था कि जूराबायेव के बुरी तरह घायल हो जाने पर उसे सेना से छुट्टी दे दी गई है और यह कि वह पहले सेक्रेट्री के अपने पुराने पद पर फिर से काम करने लगा है।

"तुम क्या सोचती हो कि तुममें कोई तबदीली नहीं हुई?" जूराबायेव ने स्नेह से मुस्कराते हुए पूछा। "चार बरस पहले, जब मैंने तुम्हें आख़िरी बार देखा था, तो तुम बिल्कुल बच्ची थीं। अच्छा ख़ैर, अपना हाल-चाल सुनाओ।"

न जाने क्यों आयक़िज़ को अपनी चार साल की पूरी दास्तान सुनाने में कोई कठिनाई अनुभव न हुई। आयक़िज़ ने उसे सभी कुछ बताया और यह कि जब मौत ने उसके दोनों भाइयों और मां को भी निगल लिया, तो उसके दिल पर क्या बीती, क्या गुज़री। जूराबायेव चुपचाप सुनता रहा। उसने आयक़िज़ को रोका-टोका नहीं।

जब वह अपनी बात पूरी कर चुकी तो जूराबायेव ने हार्दिक और सच्चे स्नेह से कहा:

"तुम्हारे बारे में मैं सभी कुछ जानता हूं, आयक़िज़। तुम्हें जो कुछ खोना-गंवाना पड़ा है, उसके लिये मैं तुमसे हानुभूति रखता हूं। तुम्हारे भाइयों को मैं अच्छी तरह जानता था, ख़ालबीबी को भी मैं भूला नहीं हूं। लड़ाई ने हमसे हमारे बहुत बढ़िया और ईमानदार लोग छीन लिये हैं। शायद ही कोई ऐसा परिवार होगा जिसने एकाध बलि न दी हो।"

क्षणभर के लिये चुप्पी रही। आयक़िज़ को सहसा इस बात का ध्यान आया कि इस आदमी ने ख़ ुद भी तो बड़ी मुसीबत उठाई है, उसकी अपनी तुलना में कहीं अधिक दुख झेले हैं। यह वह आदमी है जो शुरू से आख़िर तक लड़ाई में लड़ा है, जिसने आंखों के सामने मौत नाचती देखी है। और ऐसा एक आदमी उसके प्रति संवेदना प्रकट कर रहा है!

आयक़िज़ की आंखें छलछला आयीं।

"पढ़ाई कैसी चल रही है?" जराबायेव ने पूछा।

"चौथे साल में पहुंच गयी हूं," आयक़िज़ ने जवाब दिया। बातचीत का रुख़ अप्रत्याशित ढंग से बदल गया था।

"पत्र-व्यवहार पाठ्यक्रम द्वारा?"

"हां।"

"आगे क्या विचार है?"

आयक़िज़ ने कंधे झटके।

"यही पत्र-व्यवहार पाठ्यक्रम जारी रखना होगा," आयक़िज़ ने जवाब दिया। "कोलख़ोज़ में लोगों की कमी है।"

"मगर हमारी राय में तो तुम्हें ताशक़न्द जाना चाहिये।"

आयक़िज़ ने हैरान होकर नज़र ऊपर उठाई। उसे अपने कानों पर विश्वास नहीं हो रहा था।

"क्या मतलब आपका?" वह हकलायी। "यही कहा न आपने कि... मगर क्यों..."

"तुम्हें इस बात से हैरानी हो रही है कि ज़िला पार्टी कमेटी अपने विशेषज्ञों के प्रशिक्षण में दिलचस्पी ले रही है?" जूराबायेव ने यह कहा और मुस्करा दिया। "मुझे कहना ही होगा कि ज़िला पार्टी कमेटी के बारे में तुम्हारी बहुत अच्छी राय नहीं है।"

"मैं माफ़ी चाहती हूं। मेरा मतलब यह था..." आयक़िज़ अपनी बात पूरी न कर सकी।

"नहीं, तुम्हारे ख़िलाफ़ यह जुर्म तो रहेगा ही," जूराबायेव ने कहा। वह लड़की की घबराहट का मज़ा ले रहा था। "मैं तो यहीं बस नहीं कर सकता – मैं ज़ोर देकर यह कहता हूं कि तुम्हें ताशक़न्द जाना चाहिये।"

इस तरह आयक़िज़ का सपना साकार हो गया। ताशक़न्द संस्थान में उसने दो बरस तक दिन और रात ख़ूब कड़ा परिश्रम किया। दो बरस बाद वह अच्छी कृषिविज्ञा और कम्युनिस्ट पार्टी की सदस्या बनकर आलतिनसाय में अपने घर लौटी।

कोलख़ोज़ बदल चुका था। बच्चे बड़े हो गये थे और बड़े, अनुभव प्राप्त करके अधिक समझदार। अल्हड़ और गोल-मटोल लाला, अब अच्छी-ख़ासी ख़ूबसूरत लड़की बन गयी थी। वह अब भी गाती और पहले की तरह क़हक़हे लगाती थी, मगर अपने भविष्य-निर्माण के मामले में काफ़ी गम्भीर हो चुकी थी। इसलिये वह हर वक़्त कोलख़ोज़ के बाग़ों में ही बनी रहती और बूढ़े माली हलीमबाबा की मदद करती हुई, जितना कुछ हो सकता, सीखती भी जाती थी। और वह मेहरी, वह तो अभी भी पहले की ही तरह झेंपू थी और उसकी गतिविधि में अटपटापन भी बना हुआ था। ये तीनों सगी बहनों की तरह मिलीं।

आयक़िज़ के लौट आने के कुछ महीने बाद उसे हलक़ा-सोवियत में प्रतिनिधि और बाद में आलतिनसाय हलक़ा-सोवियत की अध्यक्षा चुन लिया गया।

यह बहुत बड़ी ज़िम्मेदारी का काम था। अक्सर आधी रात गये वह बायचीबार पर सवार होकर ज़िला पार्टी कमेटी के दफ़्तर में जा पहुंचती और जूराबायेव की मदद और सलाह हासिल करती। आयक़िज़ को

ज़ूराबायेव का लैम्प जलता मिलता और काग़ज़ों के एक बड़े ढेर के ऊपर उसकी हथघड़ी चमकती दिखाई देती। काम करते हुए वह अपनी घड़ी उतारकर मेज़ पर रख देता था। "मैंने सब कुछ गड़बड़ कर डाला है," आधी रात के वक़्त घोड़े की सवारी करते हुए आयक़िज़ मन ही मन सोचती। वह अपने को औसत दर्जे की योग्यता रखनेवाली समझती और यह अनुभव करती कि उसकी अयोग्यता ही सभी मुसीबतों के लिये ज़िम्मेदार है, कि वह भारी ज़िम्मेदारी के इस काम को सम्भालने में असमर्थ है। वह बड़ी मुश्किल से अपने आंसुओं पर क़ाबू पाती हुई, हताश और घबरायी-सी, ज़ूराबायेव के सामने जाती और बेचैनी से उसके कुछ बोलने का इन्तज़ार करती।

"कहो आयक़िज़, क्या मामला है?" ज़ूराबायेव पूछता। "अपनी सभी परेशानियां कह सुनाओ। पार्टी तुम्हारी मदद करेगी।"

पार्टी... कम्यनिस्ट पार्टी से बढ़कर और भी कोई चीज़ इतनी पवित्र है ज़िन्दगी में? आयक़िज़, पार्टी के बाहर, पार्टी से अलग अपने अस्तित्व की तो कभी कल्पना भी न कर सकती थी। ज़ूराबायेव ने उसे लेनिन के बताये हुए मार्ग पर चलने की शिक्षा दी थी – अपने काम में और अपनी निजी ज़िन्दगी में भी।

जैसे-जैसे आयक़िज़ का अनुभव बढ़ा, उसे यह बात अधिक स्पष्ट होती गयी कि सिंचाई की व्यवस्था किये बिना पहाड़ के दामनवाले क्षेत्रों का कोई भविष्य नहीं हो सकता।

आलिमजान के साथ उसका जो पत्र-व्यवहार चल रहा था उसमें सिंचाई की समस्या को अधिक से अधिक प्रमुख स्थान प्राप्त होता जा रहा था।

इनके बीच पिछले पांच बरसों से लगातार पत्र-व्यवहार चल रहा था और अब अचानक ही आलिमजान ने ख़त लिखने बन्द कर दिये थे। आयक़िज़ के अन्तिम चार पत्रों का उसे अभी तक जवाब नहीं मिला था। वह बहुत चिन्तित थी।

एक दिन वह घोड़े पर सवारी करती हुई कोकताग़ के दामन में उगे अखरोट के पेड़ों के झुरमुटों को पार कर रही थी कि अचानक ही उसकी नज़र आलिमजान पर पड़ी। सिपाही घर लौट रहा था।

६

कोलख़ोज़ के पार्टी ब्यरो की बैठक आध घण्टे में शुरू होनेवाली थी। छोटे-से कमरे में आलिमजान अकेला ही अपनी मेज़ पर काम में जुटा था। जब कभी वह किसी काम में बुरी तरह उलझता था तो अपने बालों को खींचता और इधर-उधर बिखराता रहता था। यह उसकी आदत थी और इस समय भी वह यही कर रहा था। वह अपने भाषण के लिये महत्वपूर्ण संकेत लिखता जाता था और उन शब्दों का चुनाव कर रहा था जो सबसे अच्छा प्रभाव डाल सकें और लोगों को सहमत करवा सकें।

किसी के पैरों की चाप सुनाई दी।

"सलाम, आलिमजान-आग़ा!"

"सलाम, आयक़िज़!" उसने जवाब में कहा और लड़की से हाथ मिलाया।

आयक़िज़ के अन्दाज़ में आत्मविश्वास की झलक तो देखने लायक़ थी। आलिमजान तो पहले से ही सब कुछ जानता था। कोलख़ोज़ का अध्यक्ष क़ादिरोव आयक़िज़ की योजना का कड़ा और ज़ोरदार विरोध करेगा, उसे यह मालूम था। उस्रज़ाक़-अता भी अपने सन्देहों को व्यक्त किये बिना न रहेंगे क्योंकि उन्हें भी इस बात का पक्का यक़ीन था कि आयक़िज़ अपने सम्मान, अपनी प्रतिष्ठा को ख़तरे में डाल रही है। वह लोगों को एक ऐसे काम में लगाने की सोच रही थी जिसकी सफलता के बारे में उन्हें बहुत ही अधिक सन्देह था।

आयक़िज़ भी यह जानती थी कि उसे अपनी योजना के लिये सभी लोगों का विश्वास प्राप्त नहीं है। मगर हिम्मत छोड़ने के बजाय वह अपने अन्दर एक नयी शक्ति, एक नया बल अनुभव करने लगी थी। वह आख़िरी दम तक लड़ेगी।

"क्या ख़ूब लड़की है यह!" मन ही मन उसकी प्रशंसा करते हुए आलिमजान ने सोचा।

आलिमजान ने उसे कुर्सी पेश की।

"हां तो, क्या नयी ख़बर है? काम-काज कैसे चल रहा है?" उसने पूछा।

"सब कुछ ठीक है।"

"क्या तुम्हारे अब्बाजान अभी भी अपनी बात पर अड़े हैं?"

"अगर सभी लोग एक बार ही सहमत हो जाते तो दुनिया में मतभेद नाम की कोई चीज़ ही बाक़ी न रहती। यह तो तुम जानते ही हो कि सभी उंगलियां एक जैसी नहीं होतीं।"

उसकी आवाज़ में एक अध्यापिका का सा बनावटीपन था। मगर उसकी आंखों की चमक ने उसकी पोल खोल दी।

"कुछ फ़िक्र मत करो," अपने स्वाभाविक ढंग में उसने कहा। "हम उन्हें इस बात का यक़ीन दिला देंगे कि हम सही रास्ते पर हैं। वे मान जायेंगे। मेरे अब्बाजान को तो तुम भी अच्छी तरह जानते ही हो न? मैंने बड़ी मेहनत की है अपने भाषण की तैयारी में। यह देखो। अच्छा-खासा उपन्यास लिख लाई हूं।"

आयक़िज़ ने एकसाथ सिली हुई दो कापियां मेज़ पर रख दीं।

आलिमजान उन्हें पढ़ने लगा। मगर वह अभी कुछ ही पन्ने पलट पाया था कि पार्टी ब्यूरो के सदस्य बैठक में भाग लेने के लिये आने लगे।

कोलखोज़ का अध्यक्ष क़ादिरोव नाटे क़द का, गोल कंधोंवाला और विशेष रूप से लम्बी और मज़बूत बांहोंवाला आदमी था। वह ट्रैक्टर ब्रिगेड के मुखिया बेकबूता के साथ बातचीत करते हुए अन्दर आया। क़ादिरोव की त्योरी चढ़ी हुई थी और उसकी आंखों में अविश्वास की झलक थी।

"स्कूली छोकरे और सपने देखनेवाले ही ऐसी बातें सोच सकते हैं!" कमरे में अन्दर आते हुए उसने चिढ़कर बेकबूता से कहा।

उसकी आवाज़ भारी और रोबदार थी। उसने बड़े इतमीनान से अपनी कुर्सी पीछे को खींची और बैठ गया।

मगर बेकबूता चुपचाप उसकी डांट-डपट सहने को तैयार न था।

"प्यारे साथी क़ादिरोव," उसने कहा, "उम्र में मैं आप से कुछ ख़ास छोटा तो हूं नहीं और इसलिये मेरा स्कूल का ज़माना ख़त्म हुए भी एक ज़माना हो चुका है। पर मुझे यह ज़रूर लगता है कि हमारे कुछ साथियों के दिमाग़ों को ज़ंग लग गया है। उनके दिमाग़ों ने काम करना बन्द कर दिया है। आपको यक़ीन दिलाता हूं कि न तो जवानी और न छोकरापन ही इसकी वजह है। इसकी तह में कोई दूसरी ही चीज़ है और हमें इसकी तलाश करनी होगी।"

उम्र में तो ये दोनों लगभग बराबर ही थे मगर यों देखने में बेकबूता अधिक जवान और जानदार लगता था। बेकबूता भी कोलखोज़ के बुज़ुर्ग मर्दों जैसा चोग़ा पहने था और गहरे बादामी रंग का रूमाल कमरबन्द के रूप में कसे था। वह घुटनों तक के जूते पहने था और अपने पतलून के सिरे उसने जतों नें खोंस रखे थे। दूसरी तरफ़ क़ादिरोव फ़ौजियों के ढंग के कपड़े पहनना पसन्द करता था। मगर इस क़िस्म के कसे हुए कपड़े उसे जंच नहीं रहे थे, क्योंकि वह बुरी तरह फैलता चला जा रहा था। बेकबूता का ढीला-ढीला चोग़ा भी उसकी साफ़ और सजीव चेष्टायें छिपाने में असमर्थ था। यह बताना भी ज़रूरी है कि बेकबूता को कुछ ही समय पहले सेना से छुट्टी दी गयी थी।

बेकबूता का खरा-खरा और दो टूक जवाब सुनकर क़ादिरोव चकरा गया। क़ादिरोव ने अपनी दृष्टि बेकबूता के चेहरे पर जमाये रखी और वह अन्दर ही अन्दर कोई ऐसा जवाब ढूंढ़ता रहा जो और भी अधिक चुभनेवाला हो। मगर इससे पहले कि उसे कोई जवाब सूझता, आलिमजान ने अपनी पेंसिल से मेज़ खटखटायी, सभी से चुप हो जाने की प्रार्थना की और सभा आरम्भ की।

"आज हमें जिस सवाल पर ग़ौर करना है, उसके तीन हिस्से हैं," उसने कहना शुरू किया। "पहला काम है – चश्मे साफ़ करना। दूसरे–नहर और जलाशय बनाना और तीसरे – अछूती ज़मीनों को कपास की बुवाई के लिये तैयार करना। इन ज़मीनों की सिंचाई के लिये हम चश्मों के पानी का इस्तेमाल करेंगे। हमारी इन महत्वपूर्ण योजनाओं के बारे में आप सभी लोग कुछ थोड़ा-बहुत तो जानते ही हैं। फिर भी मैं सुझाव पेश करता हूं कि इस सवाल पर बहस करने से पहले हम साथी उम्रज़ाकोवा के विचार सुन लें।"

आयक़िज़ खड़ी हुई। वह काफ़ी शान्त-सी लग रही थी, मगर चेहरे का रंग कुछ पीला-सा दिख रहा था। उसने अपनी कापी आलिमजान की मेज़ के सिरे पर रख ली और सरसराहट के साथ तेज़ी से पन्ने उलटने लगी।

आयक़िज़ ने अपना सिर उठाया कि उसकी नज़र क़ादिरोव की कठोर दृष्टि से मिली।

आयक़िज़ को बेचैनी महसूस हुई।

"मेरी योजना की धज्जियां उड़ाने की वह पूरी कोशिश करेगा। इस योजना में उसे यक़ीन ही नहीं हुआ। वह तो हमेशा ही ऐसा..." आयक़िज़ ने अनुभव किया कि उसके विचारों की शृंखला गड़बड़ हुई जा रही है। अपने आप को सम्भालने के लिये उसने क़ादिरोव के चेहरे से अपनी दृष्टि हटाकर बेकबूता की तरफ़ देखा। बेकबूता की नज़रों में मैत्री भाव और समर्थन था।

आयक़िज़ ने अपनी कापी बन्द कर दी। उसने कहना शुरू किया:

"हमारा कोलख़ोज़ पहाड़ियों पर, बिन-सींची ज़मीनों पर गेहूं उगाता है। बस, इतना ही तो हम करते हैं। हमारे हाथ बुरी तरह बंधे हुए हैं। हम आये दिन के सूखों के मारे न तो खेती लायक़ ज़मीनें ही बढ़ा सकते हैं और न ज़्यादा अनाज ही पैदा कर पाते हैं। इसके अलावा हम अपने असली काम – कपास उगाने के काम – से भी वंचित रह जाते हैं। और इतना होते हुए भी हमारा गांव हज़ारों हेक्टर उपजाऊ भूमि – कपास उगाने के लिये उपयुक्त भूमि – पर बसा हुआ है। फिर हमारे हाथ क्यों बंधे हैं? कौनसी अड़चन है हमारे रास्ते में? किस लिये हम पिछड़े हुए हैं? सिर्फ़ पानी की कमी की वजह से ही? तो हमारी मुख्य समस्या है पानी – हमारे खेतों के लिये सिंचाई का प्रबन्ध।"

"यह तो सभी जानते हैं, पुरानी बात है," क़ादिरोव गुर्राया। "सवाल तो यह है कि पानी आये कहां से?"

"पानी तो है!" आयक़िज़ चिल्लायी। उसने अपनी कापी से मेज़ पर ज़ोर की आवाज़ की। "पानी तो है! क्या हम यह नहीं जानते कि जब बाढ़ें आती हैं तो सैकड़ों घन मीटर पानी नदी-नालों में से बहता हुआ नीचे चला जाता है? यह सारा पानी बेकार जाते हुए देखकर क्या हमें दुख नहीं होता? तो इस पानी को जमा ही क्यों न कर लिया जाये? चश्मों को ही साफ़ क्यों न कर लिया जाये? अगर हम सच्चे बोल्शेविकों की तरह काम करें तो ज़रूर ही खेतों में पानी पहुंच सकता है।"

"शेख़-चिल्लियों के सपने हैं, बच्चों की सी बातें हैं," क़ादिरोव बड़बड़ाया, मगर इस तरह कि सभी सुन सकें। उसने यह ज़ाहिर करने के लिये अपना मुंह फेर लिया कि आयक़िज़ की बेसिरपैर की बातों से उसे चिढ़ महसूस हो रही है।

"साथी क़ादिरोव, मैं आपको यह याद दिलाना चाहता हूं कि सभा में

ढंग से व्यवहार करने की ज़रूरत होती है," ग्रालिमजान ने धीरे से कहा।

इसी बीच ग्रायक़िज़ ने एक बड़ा-सा काग़ज़ खोलकर मेज़ पर बिछा दिया। यह उस इलाक़े का विस्तृत रेखा-चित्र था ग्रौर उसमें कोलख़ोज़ की सभी ज़मीनें दिखायी गयी थीं। सभी उस नक़्शे को देखने के लिये क़रीब पहुंच गये।

"यह है नक़्शा हमारी ज़मीनों का," ग्रायक़िज़ कहती गयी। उसने क़ादिरोव की ग्रटपटी बातों की ग्रोर ध्यान न देने का फ़ैसला कर लिया था, "मैं उस घाटी की तरफ़ ग्रापका ध्यान ग्राकर्षित करना चाहती हूं जिसमें से होकर यह नदी बहती है। इसमें बहुत-से चश्मे दबे हुए हैं। यह तो ग्राप सब जानते ही हैं कि पहाड़ों पर चरवाहे पानी का कैसे इन्तज़ाम करते हैं – वे चश्मे साफ़ करके पानी का बहाव ग्रन्दर की तरफ़ मोड़ लेते हैं। यानग़ाक़साय घाटी में हमने बहुत-से चश्मों का ग्रध्ययन किया है। ग्रनुमान के मुताबिक हम इस नतीजे पर पहुंचे हैं कि ग्रगर इन चश्मों को साफ़ कर लिया जाये, ग्रौर एक नहर खोदकर हम खेतों को पानी दें, तो हमारे गेहूं उगानेवाले खेत, बहुत जल्द ही कपास उगाने लगें।"

ग्रायक़िज़ के शब्दों का लोगों के मन पर गहरा प्रभाव पड़ा। क़ादिरोव तक की ग्रांखों में भी हल्की-सी चमक दिखायी दी, कुछ दिलचस्पी की झलक मिली। "काश कि मैं इसके ग्रन्दर एक तूफ़ान पैदा कर सकती! मगर ख़ैर, कोई बात नहीं," ग्रायक़िज़ ने ज़रा मुस्कराकर सोचा, "ग्रगर ग्रब इसके दिल पर ग्रसर न पड़ सका तो न सही, बाद में देखा जायेगा। ग्रौर ग्रगर बाद में भी कुछ न बना तो... तो इसे ग्रपने ही को दोषी ठहराना होगा। हमारे लोग उन्हें सहन नहीं करेंगे जो उनके ग्राड़े ग्राते हैं, जो उनकी प्रगति के मार्ग में रोड़ा बनते हैं।"

ग्रायक़िज़ की बेचैनी ग्रब कम होती जा रही थी।

"साथी ग्रध्यक्षा, ग्रागे बढ़िये," बेकबूता ने बड़े उत्साह से कहा, "ग्राप लोगों का सुझाव बहुत ही महत्वपूर्ण है, बड़े मार्के की बात कही है ग्रापने।"

"बेशक, बात तो मार्के की ही है," ग्रायक़िज़ ने कहा, "हर साल, हज़ारों घन मीटर पानी हमारे गांवों के पास से गुज़र जाता है ग्रौर हम हैं कि ग्रपनी बुरी हालत का रोना रोकर ही रह जाते हैं, कुछ करते-धरते नहीं। ग्रौर फिर भी यह पानी क़ुदरत की बड़ी देन है, बहुत बड़ा भण्डार

है। इस पानी से न केवल हमारी ज़मीनें, बल्कि ग्रासपास के कोलख़ोज़ों की ज़मीनें भी सींची जा सकती हैं। हमारे पास बहुत बड़ा ख़ज़ाना, बहुत बड़ी दौलत है, साथियो! वक़्त ग्रा गया है कि हम इस मामले को ग्रपने हाथ में लें, बेकार जानेवाले इस पानी को इस्तेमाल करें। मैं तो यहां तक कहूंगी कि इस पानी को बरबाद करने का हमें हक़ ही नहीं है। देखिये, हमें करना यह चाहिये..."

ग्रायक़िज़ ने फुर्ती के साथ एक ग्रौर बड़ा-सा काग़ज़ मेज़ पर बिछा दिया।

इस नक़्शे में, पहले नक़्शे की सी चतुराई ग्रौर कौशल से काम नहीं लिया गया था। तो भी इसमें वह इलाक़ा साफ़ तौर पर दिखाया गया था, जहां नदी पहाड़ों में से बहती हुई घाटी से जा मिलती थी। मोटी-मोटी, दो लाल लक़ीरों से भावी नहर का मार्ग दिखाया गया था।

"यह है वह जगह जहां से हम पानी को ग्रपने खेतों की तरफ़ मोड़ देंगे," लकीर पर उंगली फेरते हुए ग्रायक़िज़ ने कहा। "इससे हमारे गांव की ग्रर्थव्यवस्था में एक क्रान्ति-सी हो जायेगी। तब हम ग्रपने कोलख़ोज़ों में कपास ग्रौर ग्रलफ़ालफ़ा उगा सकेंगे। फिर तो सभी रास्ते खुल जायेंगे। पानी पर ही सारा दारोमदार है। हमें तो पानी की एक बूंद भी बेकार न जाने देनी चाहिये। इस जगह से हम पानी को पहाड़ के दामनवाले क्षेत्रों में भेजेंगे – ग्रब मैं सभी कोलख़ोज़ों की साझी ज़मीन की चर्चा कर रही हूं। हमें सभी को चश्मे साफ़ करने ग्रौर नहर खोदने के काम में लगाना चाहिये। हम ग्रब एक मिनट का भी इन्तज़ार नहीं कर सकते। मिनट भर का भी नहीं! सभी कुछ हमारी हिम्मत, हमारी कार्यक्षमता पर निर्भर है। ग्रगर हम ढंग से काम करें तो इसी साल कपास उगायी जा सकती है।"

यह सब कोरी कल्पना, केवल सपना नहीं था। सोच-समझकर बनायी गयी बढ़िया योजना थी।

कुछ क्षणों तक चुप्पी रही।

सभी उन नक़्शों को देखते ग्रौर मामले को मन ही मन तौलते-परखते रहे।

सबसे पहले बोला बेकबता। उसकी ग्रांखें तो जैसे उन दो लाल लकीरों पर जमकर रह गयी थीं – उन दो लकीरों पर जो भावी नहर के

मार्ग का संकेत करती थीं। बोलने से पहले उसने अपना गला साफ़ किया और मेज़ का किनारा थपथपाया।

"क्या यह बात सही है कि इन चश्मों की बदौलत हमें वह सारा पानी मिल जायेगा?" उसने पूछा, "तुम ग़लत अनुमान तो नहीं लगा रही हो, आयक़िज़?"

"नहीं, बेकबूता। ग़लत अनुमान का तो सवाल ही नहीं पैदा होता," आयक़िज़ ने इस ढंग से जवाब दिया मानो वह क़सम खाकर विश्वास दिला रही हो, "जितना मैंने बताया है, इन चश्मों से तो उससे कहीं ज़्यादा पानी मिलेगा। मैंने जो आंकड़े दिये हैं उनमें तो जानबूझकर कम अनुमान लगाया गया है। और फिर भी... मैं यह बात कैसे समझाऊं... फिर भी इन्हें देखकर आदमी दंग रह जाता है। आप लोगों को यह भी ध्यान में रखना चाहिए कि हमने कोकबुलाक़ की गिनती नहीं की है। अगर हम अकेले उसी एक चश्मे को बहाल कर लें तो वह इतना पानी दे सकेगा जितना कि ये सभी मिलकर।"

"हां, यह तो ठीक है," बेकबूता ने टोककर कहा, "कोकबुलाक़ की मझे अच्छी तरह याद है। उसका पानी तो चट्टान चीरकर इस ज़ोर से बाहर आता था कि धरती हिलने-सी लगती थी। पानी की धार, ऊंट की गर्दन जैसी मोटी होती थी। अगर हम उस चश्मे को बहाल कर लें तब तो सचमुच कमाल हो जाये!"

"अगर हम सब मिलकर कोशिश करें तो ज़रूर ऐसा हो सकेगा," आयक़िज़ ने कहा।

क़ादिरोव अब अपनी खीझ पर क़ाबू न पा सका।

"भाषण झाड़ना एक बात है, और कुछ करना-धरना दूसरी," उसकी त्योरी चढ़ी हुई थी, "बेहतर यही है कि हम मतलब की बात करें और लम्बी-चौड़ी तक़रीरों के फेर में न पड़ें। इस्फ़नदियार-बेग के बासमची दल कोकबुलाक़ का मुंह बन्द करके उसे ज़मीन में दबा चुके हैं। लोगों का कहना है कि एक अंग्रेज़ अफ़सर उसका सलाहकार था। वह किसी नौसिखिये का किया हुआ काम नहीं। ऊपर की चट्टानें उड़ा दी गयी थीं। अब यह सही-सही बताना मुमकिन नहीं कि चश्मे का मुंह था कहां। कौन जाने चश्मे के मुंह तक पहुंचने के लिये कितनी मिट्टी और कितने पत्थर खोदने होंगे? तुमने क्या इन सब का अनुमान लगाया है? क्या ढंग से

इन्हें जोड़ लिया है? साधारण अनुमान के अनुसार भी इसे छः महीने तो लग ही जायेंगे। और फिर इसके लिये आदमी कहां से लाये जायेंगे? ख़ाली वक़्त कहां से निकला जायेगा?" क़ादिरोव बात पूरी किये बिना अचानक ही बैठ गया।

"आपने बीच में ही अपनी बात क्यों बन्द कर दी, साथी क़ादिरोव?" आलिमजान ने कहा। "साथी उम्रज़ाक़ोवा ने जो सुझाव दिया है, उसके बारे में हम आपकी सविस्तार और खरी-खरी आलोचना सुनना चाहते हैं। आप अपनी आलोचना को तर्कों और तथ्यों का बल देते हुए रचनात्मक बनाने की कोशिश करें। यह पार्टी ब्यूरो की बैठक है। दिल खोलकर अपनी बात कहिये और योंही इक्के-दुक्के वाक्य कहकर बात ख़त्म मत कीजिये। साथी क़ादिरोव, अब आपके बोलने की बारी है।"

कोलख़ोज़ का अध्यक्ष बड़े इतमीनान से उठकर खड़ा हुआ। मेज़ पर उसने अपनी हथेलियां रखकर उंगलियां फैला दीं, वह थोड़ा-सा आगे को झुका और धीरे-से उसने अपनी दृष्टि वहां बैठे लोगों पर दौड़ाई। उसके चेहरे पर पत्थर की सी कठोरता थी। उसने अपनी बात ऐसे शुरू की मानो अपने को बोलने के लिये मजबूर कर रहा हो।

"ज़ाहिर हैं कि पानी की ज़रूरत से कोई भी इनकार नहीं कर सकता। बेहद ज़रूरत है हमें पानी की। इतना ही नहीं, मैं..."

अचानक ही उसकी आवाज़ ऊंची हो गयी:

"इतना ही नहीं, मैं तो इसी पानी की ख़ातिर क़िज़िलक़ुम की आग की तरह जलती हुई बालू पर नंगे पांव भी जाने को तैयार हूं! इतना ही नहीं, मैं..." वह चिल्लाया, "इतना ही नहीं, मैं तो बिना हिचके-झिझके, फ़ौरन ही उम्रज़ाक़ोवा के सुझाव का समर्थन कर देता! आख़िर क्या चीज़ मुझे ऐसा करने से रोकती है? उम्रज़ाक़ोवा का सुझाव है कि हम चश्मे साफ़ करें, मगर यह कोई संतुलित, ढंग से सोचा-समझा सुझाव नहीं है। इस प्रश्न के पक्ष-विपक्ष में बहुत कुछ कहा जा सकता है। यानग़ाक़साय में बहुत ही थोड़ा पानी होता है, गर्मी में तो चुल्लू भर पानी भी नहीं रहता। सोचे-समझे बिना इतने बड़े काम को हाथ में ले लेना क्या ठीक होगा? चश्मों के पानी से खेतों की सिंचाई की बात हमसे पहले किसी दूसरे को क्यों नहीं सूझी? इसलिये कि इस सवाल पर अभी और अधिक खोज की ज़रूरत है या फिर इसलिये कि इसपर काफ़ी खोज की

जा चुकी है और इसे अमली न समझकर छोड़ दिया गया है। चश्मों के पानी से यदि खेतों की सिंचाई सम्भव होती तो वैज्ञानिकों ने हमें कभी का ऐसा करने के लिये कह दिया होता। हमारी सरकार ने भी कोई कोर-कसर न उठा रखी होती। मगर किसी ने भी तो हमें यह नहीं बताया कि हम ऐसा कर सकते हैं। इसलिये हमें जल्दबाज़ी नहीं करनी चाहिये। सहज पके सो मीठा हो – हमें यह कहावत याद रखनी चाहिये। किसी दूसरी जगह आज़माइश हो ले, फिर हम भी उनके पीछे-पीछे चल देंगे..."

"दूसरे हमला करके मैदान जीत लें और हम घर बैठे ऊंघते रहें। कहना ही होगा कि यह बहुत बढ़िया ढंग है लड़ाई लड़ने का," बेकबूता ने चिढ़ते हुए कहा।

आलिमजान ने बेकबूता की तरफ़ ऐसे देखा मानो कह रहा हो – यह ज़्यादती है। बात बेकबूता के मुंह में ही रह गयी। यह तो सांड़ को लाल झंडी दिखानेवाली बात थी। क़ादिरोव तो बुरी तरह भड़क उठा:

"यह कैसी बेकार की बात है – दूसरे हमला करके मैदान जीत लें और हम घर बैठे ऊंघते रहें?" वह ग़ुस्से में चिल्लाया। "आख़िर तुम कहना क्या चाहते हो? किस तरफ़ इशारा है तुम्हारा? घर पर रहकर भी हम अपना ही काम करते हैं। मुझे जो मोर्चे पर नहीं बुलाया गया तो शायद इसीलिये कि मेरा काम सम्भालनेवाला दूसरा कोई नहीं था। हर कोई तो यह काम कर नहीं सकता... सिर्फ़ सिरफिरे ही बिना किसी तैयारी के हमला करने के लिये दौड़ पड़ते हैं। मान लीजिये कि हम चश्मे साफ़ करने शुरू कर देते हैं और फिर इस नतीजे पर पहुंचते हैं कि बेकार ख़ून-पसीना एक किया जा रहा है, तो? लोगों को खेतों से बुलाकर हम बुवाई का काम चौपट कर डालेंगे, बस इतना ही तो। इसके लिये जितनी मुसीबत उठानी पड़ेगी वह काम उसके लायक़ नहीं है, क्योंकि पानी बहुत ही थोड़ा है। इलाक़े भर में हमारी बदनामी हो जायेगी। यह बहुत ही मेहनत का, बड़ा मुश्किल काम है और हमारे पास काम करनेवालों की कमी है। हमसे अकेले यह काम नहीं होने का। तो क्या हम अपने पड़ोसियों को हाथ बंटाने के लिये बुलायें? मैं तो इसके लिये तैयार नहीं हूं, बहुत जल्दबाज़ी होगी यह। फिर मदद करने को तैयार ही कौन होगा? उन सभी के हाथ बुरी तरह काम में उलझे हुए हैं। मैं उम्रज़ाक़ोवा के सुझाव का विरोध करता हूं, कड़ा विरोध करता हूं!"

क़ादिरोव अपना भाषण समाप्त करके बड़े ज़ोर से कुर्सी में धसक गया। कुर्सी उसके भार से चरमरा उठी। उसकी सांस ज़ोरों से चल रही थी। कुछ देर तक तो कमरे में बस यही एक आवाज़ सुनाई देती रही।

अब बेकबूता बोलने के लिये खड़ा हुआ।

"मैं सहमत नहीं हूं। हम इस काम को स्थगित नहीं कर सकते। योजना बड़ी सुलझी हुई और साफ़ है, हमारे लिये उज्ज्वल भविष्य की व्यवस्था करती है," उसने दृढ़ता से कहा। "हम अपने पड़ोसियों की मदद लेने से भी नहीं हिचकेंगे। जैसे ही उन्हें इस योजना का पता लगेगा, वे ख़ुद ही हमारी मदद को चले आयेंगे।"

आयक़िज़ यही सुनने की आशा कर रही थी।

बेकबूता के बाद, पार्टी ब्यूरो के दूसरे सदस्य भी बारी-बारी से बोलने के लिये खड़े हुए। सभी ने इस बात का समर्थन किया कि काम फ़ौरन शुरू किया जाये। विरोध में मत दिया तो केवल क़ादिरोव ने। उसके चेहरे के भाव से यह साफ़ पता चलता था कि उसपर किसी के कहने-सुनने का कुछ भी असर नहीं पड़ा। और यह भी कि उसे अपनी राय पर पूरा भरोसा था और सही भी वही था। वह दूरदर्शिता से काम लेने में असमर्थ था या फिर वह जान-बूझकर ऐसा करना नहीं चाहता था। नक़्शे में दिखायी गयी कोलख़ोज़ की सीमारेखायें उसे ऐसी लगीं मानो वे किसी मामूली काग़ज़ पर पेंसिल से खींची गयी मामूली रेखायें हों। इस नक़्शे को देखकर उसकी आंखों के सामने नीले पानी से भरी हुई किसी नहर का चित्र न उभरा, चश्मे के पानी से किनारों तक भरी छोटी-छोटी अनेकों नालियों और खाइयों का ध्यान उसे न आया। उसकी आंखों के सामने न तो पहले ही कभी बिन-सींची भूमि में अंगूरों के बगीचों की तस्वीर उभरी थी और न वह देख सका था क्षितिज को छूते हुए कपास के लहलहाते सागर की झलक।

वक्ता जैसे-जैसे भाषण समाप्त करके बैठते गये, वैसे-वैसे आलिमजान भी यह समझता गया कि उसकी तैयार की हुई तक़रीर बेकार होती जा रही है। आयक़िज़ के सुझाव को समर्थन की ज़रूरत न रही थी।

पार्टी ब्यूरो ने एक प्रस्ताव पास कर दिया। इसके अनुसार यह निर्णय किया गया कि चश्मे साफ़ किये जायें, नहर खोदी जाये और यह कि यानग़ाक़साय पर एक बांध बनाकर जलाशय बनाया जाये।

क़ादिरोव जब बाहर आया, तो बुरी तरह झकझोरा हुआ सा और ग़ुस्से से लाल-पीला होता हुआ।

हुआ क्या था, यह बात उसकी समझ में अच्छी तरह न आ रही थी। आलिमजान ने आयक़िज़ के सुझाव पर सभी के मत प्राप्त किये – उसके सिवा शेष सभी सदस्यों ने सुझाव के पक्ष में हाथ उठाये। यह बात उसे अच्छी तरह याद थी। जब आलिमजान ने यह पूछा था: "कोई विरोध में मत देना चाहता है?" तो उसने ग़ुस्से में अपना हाथ बहुत ऊंचा उठाया था, यह भी उसे अच्छी तरह याद था। दूसरे सदस्यों की आंखों से आंखें मिलने पर, घड़ी भर के लिये उसे घबराहट और परेशानी भी महसूस हुई थी। वह अपना हाथ नीचे कर चुका था। मगर तभी उसे अपने आप पर बहुत खीझ, बहुत ग़ुस्सा भी आया था। ग़ुस्सा इसलिये आया था कि उसके ढंग में एकरूपता न थी, क्योंकि उसका ढंग बढ़िया न था, क्योंकि वह उन्हें अपने दृष्टिकोण से सहमत करके उनका नेतृत्व न कर सका था, आयक़िज़ के सुझाव के विरुद्ध मत प्राप्त न कर सका था। आलिमजान और आयक़िज़ तो सिरफिरे जवान लोग थे, बच्चे थे। उन्हें यह एक नया खिलौना मिल गया था खेलने के लिए। हर नयी चीज़ को अपना लेना, उसपर अमल करना, अक़्लमन्दी का काम नहीं होता। नयी चीज़ को तभी कार्यरूप देना चाहिये जब वह परीक्षा की भट्ठी में से गुज़र चुकी हो। यह था क़ादिरोव के सोचने का ढंग! वह बड़ा अनुभवी व्यक्ति था। उसकी प्रतिष्ठा चट्टान की तरह दृढ़ थी और वह काफ़ी लम्बे अर्से से कोलख़ोज़ का अध्यक्ष था।

क़ादिरोव का सन्तुलन धीरे-धीरे लौट आया। ग़ुस्से की जगह ले ली उस खीझ और चिढ़ ने, जिसका शिकार होने पर अपने सिवा हर आदमी घृणित और बुद्धू दिखायी देने लगता है। तब इनसान सिर्फ़ अपने ही को चतुर और समझदार समझता है। आयक़िज़ के प्रति वह अपने रवैये को निष्पक्ष और बैठक के अपने बर्ताव को दोषहीन समझता था।

आयक़िज़ तो उसे नापसन्द न थी, मगर आलिमजान का ध्यान आते ही वह आग बबूला हो जाता।

"वह कौन होता है मुझपर रोब जमानेवाला?" क़ादिरोव ने अपने आप से कहा।

आलिमजान जिस दिन लड़ाई से लौटा था, उसी दिन से लोगों में बहुत लोकप्रिय हो गया था। लोगों ने उसके प्रति अपने स्नेह का परिचय

दिया उसे पार्टी संगठन का सेक्रेट्री चुनकर। सच बात तो यह है कि आलिमजान, क़ादिरोव के लिये एक अनबूझ पहेली बना हुआ था। "आख़िर वह चाहता क्या है?" वह यह सोच-सोचकर परेशान होता। "हम लोग ख़ूब मज़े में हैं। बेशक हम कपास नहीं उगाते, फिर भी हमारे कोलख़ोज़ का ज़िले में अच्छा नाम है। ईमानदारी की बात तो यह है कि कपास के बिना, कहीं ज़्यादा सुख-चैन है। मगर नहीं, वे तो मेरी एक भी सुनने को तैयार नहीं। वे तो कोलख़ोज़ को अनजानी राहों पर घसीटने का पक्का इरादा किये बैठे हैं। मैं अनुभवी आदमी हूं, शुरू से ही अध्यक्ष चला आ रहा हूं। आलिमजान छोकरा है और अनुभवहीन भी। अभी उसकी कोई मान-प्रतिष्ठा भी नहीं, मगर वह है कि लोगों को मेरे ख़िलाफ़ भड़काने में लगा है। सो भी उन्हीं लोगों को, जिन्होंने कोलख़ोज़ का प्रबन्ध-भार मुझे सौंपा! मैंने ही तो इस कोलख़ोज़ की स्थापना की थी! मेरे प्रबन्ध, मेरी देख-रेख में ही तो उसकी प्रतिष्ठा बनी, वह धनी-मानी हुआ और उसकी ख्याति बढ़ी। हर जगह मेरा आदर-सत्कार है और अब यह कल का छोकरा मेरे रास्ते में गढ़े खोद रहा है। लोग भी हैं कि अन्धाधुन्ध उसके पीछे चले जा रहे हैं। उसके पीछे चलनेवाले लोग ज़रूर ही ठोकर खायेंगे और उसी गढ़े में जा गिरेंगे जो वह मेरे लिये खोद रहा है।

"तो तुम मुझे नीचे गिराकर मेरी जगह सम्भालना चाहते हो? ईर्ष्या की आग में जल रहे हो? इसीलिए तुम्हें चैन नहीं मिलता?" उसके अन्दर प्रतिशोध की आग भड़क रही थी। इसी आग से प्रेरित होकर वह ऐसा सोचता था।

आलिमजान की महत्वाकांक्षायें अब उसे स्पष्ट दिखायी दे रही थीं। वह सिर से पैर तक कांप-सा गया। वह अपने घर के फाटक के सामने पहुंच चुका था और बहकी-बहकी आंखों से उसे देख रहा था।

क़ादिरोव घर में गया। उसने अन्दर से दरवाज़ा बन्द कर लिया।

कमरे में एक पलंग था जिसपर स्प्रिंगदार बढ़िया गद्दा बिछा था। गद्दे पर रेशमी चादर थी और चादर पर बर्फ़ जैसे सफ़ेद तक्यि रखे थे। खिड़की के नज़दीक रखी मेज़ पर दूध-सा सफ़ेद मेज़पोश बिछा हुआ था। ज़ाहिर था कि इस मेज़ का कभी इस्तेमाल नहीं होता था। कमरे में एक शानदार रेडियो सेट भी था। दीवार पर एक बड़ा-सा आईना था और फ़र्श पर बढ़िया क़ालीन।

सब कुछ साफ़-सुथरा था, न कहीं कोई दाग़, न धब्बा। वह सभी कुछ मालिक के काफ़ी ऊंचे सांस्कृतिक स्तर का प्रतिनिधित्व करता था।

मगर कमरे के बायीं ओर एक सन्दली थी और उसपर एक मैला-सा कम्बल बिछा था – ज़ाहिर था कि इसका हर दिन इस्तेमाल होता था।

क़ादिरोव बेंच पर बैठ गया और गाल फुलाकर ज़ोर लगाते हुए अपने लम्बे जते उतारने लगा। काफ़ी ज़ोर आज़माई हुई और तब कहीं वे उतरे। उसने अपने जूते पलंग के नीचे फेंक दिये।

ज़रा दम लेने के बाद उसने नसवारदानी निकाली, उसे खोला और हाथ से थपथपाया। मगर नसवार का तो नाम-निशान ही न था। क़ादिरोव अब बौखला उठा और नसवारदानी दरवाज़े से दे मारी।

फ़र्श पर पीले-पीले टुकड़े बिखर गये। क़ादिरोव ने एक गहरी सांस ली। आख़िर किसी चीज़ पर तो उसका ग़ुस्सा निकल ही गया था।

उसने अपनी क़मीज़ उतारकर उसे रेडियो पर फेंक दिया। फिर उसने फ़ौजी ढंग का तंग पाजामा उतारा और ठोकर मारकर उसे मेज़ के नीचे कर दिया। इसके बाद उसने खूंटी पर टंगा हुआ मैला-कुचैला रेशमी चोग़ा उतारा और अपने चारों ओर लपेट लिया। इसके बाद उसने बर्फ़-सा सफ़ेद तकिया सन्दली के सामने बिछे कम्बल पर फेंका और ज़मीन पर लेटकर अपने ख़िलाफ़ कमर कसकर खड़ी हो जानेवाली दुनिया की ज्यादती पर ग़ौर करने लगा।

७

दोपहर कभी की ढल चुकी थी, जब कोलख़ोज़ की दो कारें ज़िला पार्टी कमेटी की इमारत के सामने आकर रुकीं। दूसरी दो कारें पहले से ही वहां खड़ी थीं – एक तो बिल्कुल नयी, लौ देती हुई "पोबेदा" थी और दूसरी पुरानी और खस्ताहाल "एम-१", जिसके मडगार्ड जहां-तहां मुड़े-मुड़ाये और टूटे-फूटे थे।

आयक़िज़ और उस्त्राक-अता "मोस्क्वीच" कार से बाहर निकले। दूसरी गाड़ी – "पोबेदा" – को चलानेवाला था क़ादिरोव और पीछे की सीट पर बैठे थे आलिमजान और स्मिर्नोव। स्मिर्नोव ज़िला सिंचाई-विभाग का अध्यक्ष था। क़ादिरोव रास्ते भर मौन साधे रहा। उसने ऐसे ज़ाहिर किया

मानो कार चलाने में ही पूरी तरह खोया हुआ है और यह कि निर्माण-योजना के बारे में वे जो बातें कर रहे हैं, उसे उसमें कोई दिलचस्पी ही नहीं।

क़ादिरोव कार से बाहर निकलकर इधर-उधर टहलने लगा – टांगें सीधी करने के लिए। वह आलिमजान की तरफ़ घूमा और "पोबेदा" तथा "एम-१" की ओर संकेत करते हुए बोला :

"'अक्तूबर' कोलख़ोज़ का उस्मानोव तो यहां पहुंच भी चुका है। 'विजय' कोलख़ोज़वाले भी हमसे पहले ही यहां मौजूद हैं।"

"यही तो बात है," आलिमजान ने ज़रा हंसकर कहा, "और आपको यह डर था कि हमें सभी कुछ अकेले ही करना होगा। हमारे पड़ोसी हम से बाज़ी मार ले गये, हम से पहले यहां आ पहुंचे। ज़ाहिर है कि हमारी तरह उन्हें भी इस योजना में दिलचस्पी है। आपके शक बेबुनियाद थे।"

क़ादिरोव ने कोई जवाब न दिया, सामने की सीढ़ियों की तरफ़ बढ़ गया।

आलतिनसाय कोलख़ोज़ के पांचों नुमाइनदे एकसाथ इमारत में दाख़िल हुए और पहले सेक्रेट्री जूराबायेव के कमरे की तरफ़ चल दिये। मेहमानख़ाने में ही उससे मुलाक़ात हो गयी। पहला सेक्रेट्री, लोगों के एक बड़े दल को अलविदा कह रहा था।

आलतिनसाय कोलख़ोज़ के नुमाइनदों के साथ सलाम-दुआ हुई और फिर जूराबायेव अपने कमरे की तरफ़ चल दिया।

पहला सेक्रेट्री फ़ौजी ढंग की क़मीज़ और हल्के भूरे कपड़े का पाजामा पहने था। चाल थी कि घुड़सवारों की याद दिलानेवाली।

"मुझे अफ़सोस है कि आप लोग थोड़ी देर पहले यहां न पहुंचे, मेरे दोस्तो," जूराबायेव ने कहा। "जिन लोगों को अभी-अभी आपने मेहमानख़ाने में देखा, इनके साथ मेरी बड़ी ही अजीब बातचीत होती रही है। ये ज़िले के सबसे अच्छे उस्ताद थे। ख़ैर, आप लोग जहां भी बैठना पसन्द करें, बैठ जायें। परिचय इत्यादि करवाने की तो मैं कोई ज़रूरत ही नहीं समझता। मेरे ख़्याल में तो आप सभी लोग, एक दूसरे को अच्छी तरह जानते-पहचानते हैं।"

कमरे में बैठे हुए दूसरे लोग थे: "अक्तूबर", "विजय" और "मई दिवस" नामी कोलख़ोज़ों के अध्यक्ष और ज़िला कार्यकारिणी समिति का

प्रधान सुलतानोव। अपनी-अपनी सीट सम्भालते हुए उन्होंने एक दूसरे से मज़ाक़ किये और ज़ोरों के क़हक़हे लगाये। सिर्फ़ एक आदमी ही इस हंसी-ख़ुशी में शामिल न हुआ – क़ादिरोव। उसने दूसरों से हटकर अपने लिये एक तरफ़ को कुर्सी चुन ली और त्योरी चढ़ाये वहीं बैठ गया। सभा हुई, मगर वह शुरू से आख़िर तक चुपचाप बैठा रहा।

जूराबायेव बैठ गया और उसने जो कुछ कहना शुरू किया था, जारी रखा:

"हां, बात बहुत ही दिलचस्प थी, दिलचस्प भी और शिक्षाप्रद भी। ज़रा ग़ौर कीजिये," उसने उम्रज़ाक़-अता को सम्बोधित किया और कनखियों से आयक़िज़ और आलिमजान की तरफ़ देखा। "लगता यह है कि हम लोग अपने खेतीबारी के चक्कर में ही खोकर रह गये हैं, स्कूलों की बात बिल्कुल भूल ही गये। हमारी इस लापरवाही के बुरे नतीजे सामने आते भी देर न लगी। पिछले साल सिर्फ़ आलतिनसाय गांव में ही आठ छात्र परीक्षा में असफल रहे। इस साल तो उनकी संख्या और भी अधिक होने की सम्भावना है। यह सब हुआ कैसे? कम्युनिस्ट पार्टी संगठन, फ़ार्म-बोर्ड और हलक़ा-सोवियत, ये सभी संस्थायें क्या कर रही थीं? साथी उम्रज़ाक़ोवा, तुम्हें इस बारे में क्या कहना है?"

आयक़िज़ की तो यह हालत थी कि काटो तो ख़ून नहीं। वह मुजरिम थी।

"स्कूलों की बात तो मैं भूल ही गयी थी, साथी जूराबायेव," आयक़िज़ ने दिलेरी से अपना अपराध स्वीकार कर लिया, "इस बहुत ही ज़रूरी फ़र्ज़ की तरफ़ मैंने ध्यान नहीं दिया।"

जूराबायेव ने आलिमजान की तरफ़ देखा। पहले सेक्रेट्री की आंखें मानो यह कह रही थीं: "सबसे ज्यादा यह तुम्हारा ही क़सूर है।"

"इसके लिये मैं क़सूरवार हूं," शर्म से लाल होते हुए आलिमजान ने कहा, "हाज़िरियों के सवाल पर तो हमने एक बार ग़ौर किया था, मगर विद्यार्थियों की प्रगति के सवाल की तरफ़ हमारा अभी ध्यान नहीं गया।"

"तुम, आयक़िज़ या मैं, इसके लिये कोई भी दोषी क्यों न हो, मगर इससे बात तो जहां की तहां बनी रह जाती है। दोष तो यह हम सभी का है," जूराबायेव ने ज़रा ग़ुस्से से कहा और घबराहट-सी महसूस करते

हुए सिगरेट जलाई। "हम अपना सारा वक़्त फ़ार्म की देख-रेख में, इसी परेशानी में ख़र्च कर देते हैं और अपने बच्चों की सुध लेने का भी हमें ध्यान नहीं रहता। उस्त्रज़ाक़-अता, आपकी इस मामले में क्या राय है?"

"स्कूलों की तरफ़ ध्यान देना तो हमारा पहला काम होना चाहिये, मेरे बेटे। सपने में भी हमें उन्हें न भूलना चाहिये। पढ़े-लिखे बिना तो हम नयी ज़िन्दगी को शक्ल ही नहीं दे पायेंगे," बूढ़े मियां ने जवाब दिया।

किसी के मुंह से एक शब्द भी न फूटा। आयक़िज़ और आलिमजान, शर्म से आंखें झुकाये हुए थे। वे कहते भी तो क्या? जूराबायेव की बात सोलह आने सही थी। चाहिये तो यह था कि इनकी और भी कटु आलोचना की जाती। जो ग़लती हो गयी थी, वह इसी साल तो किसी तरह भी ठीक न हो सकती थी।

खिड़कियां पूरी तरह खुली हुई थीं, मगर कमरे में फिर भी घुटन थी। जूराबायेव ने अपने कालर का बटन खोला और रूमाल से गर्दन पोंछी। कंधे की हड्डी के बिलकुल पास ही एक लाल निशान दिखाई दिया।

"यह वही पुराना निशान है," आलिमजान ने सोचा और जैसे अनजाने ही अपनी क़मीज़ के अन्दर उसे अपने घाव की सख़्त चमड़ी का किनारा चुभता हुआ सा महसूस हुआ। ब्रेस्त के नज़दीक वह बुरी तरह घायल हुआ था।

"जाने यह घाव हुआ किस चीज़ से था?" आलिमजान सोचता रहा और उसने जूराबायेव के घाव के निशान को बड़े ध्यान से देखने की कोशिश की। "यह घाव न तो गोली का है और न ही छर्रे का... यह या तो संगीन का घाव है या छुरे का। मुझे याद है कि मैं बचपन से ही घाव का यह निशान देखता चला आ रहा हूं, मगर मुझे इसके बारे में कभी पूछने की हिम्मत नहीं हुई। मेरे ख़्याल में यह घाव हमले के वक़्त हुआ..."

जूराबायेव की भांति उसके अपने जिस्म पर भी घावों के निशान हैं, आलिमजान को इससे बड़ा गर्व हुआ। यही तो एक सिपाही की बहादुरी के निष्ठुर निशान, निर्मम प्रमाण हैं। आलिमजान को जूराबायेव का अतीत याद हो आया। वह उसकी पिछली ज़िन्दगी से भली भांति परिचित था।

युद्ध से पहले के सर्वोच्च सोवियत के निर्वाचन में आलिमजान ने चुनाव-प्रचारकार्य में हिस्सा लिया था। जूराबायेव ही तब आलतिनसाय

चुनाव क्षेत्र की तरफ़ से खड़ा किया जानेवाला उम्मीदवार था। जूराबायेव का बड़ा ही शानदार अतीत था, क्रान्ति के लिये सिर-धड़ की बाज़ी लगानेवालों में से वह एक था। बरसों तक वह लाल घुड़सेना में रहा था। १६२० की गड़बड़ी के दिनों में फ़्रून्ज़े ने लेनिन नामक सैनिक स्कूल के विद्यार्थियों को पूर्वी बुख़ारा में बासमचियों से लड़ने के लिये भेजा था। इस स्कूल की स्थापना उन्हीं दिनों की गयी थी। जूराबायेव इन्हीं विद्यार्थियों में से एक था। यह तो सभी जानते थे कि लाल सेना के कमांडर की तेज़ तलवार ने अंग्रेज़ों के ख़रीदे हुए अनेक बासमचियों के सिर धड़ से अलग किये थे।

बाद में कम्युनिस्ट पार्टी कार्यकर्त्ता बनने के लिये जूराबायेव ने पांच बरस तक अध्ययन किया। आलिमजान सहित ज़िले के सभी युवा कम्युनिस्ट, जूराबायेव के सुलझे हुए और सजग पथ प्रदर्शन का परिणाम थे। लड़ाई शुरू हुई तो लाल घुड़सेना का यह पुराना सवार फिर से लड़ाई के मैदान में जा पहुंचा। १६४४ में वह फिर से बुरी तरह घायल हुआ, लम्बे अर्से तक अस्पतालों में रहा और इसके बाद अपने पहले काम पर लौट आया। अधिक अच्छे पद उसे पेश किये गये, मगर उसने उन्हें स्वीकारा नहीं। घुड़सेना के इस पुराने सेनानी की मज़बूत काठी, घाव के बाद के प्रभाव भी सह निकली। और अब, कम से कम देखने-भालने में वह बिल्कुल स्वस्थ और अपनी असली उम्र से कहीं कमउम्र का दिखायी देता था। अगर उसके लहराते हुए काले बालों में पके बाल न होते, यदि आंखों के आसपास झुर्रियों का एक जाल-सा न बिछ गया होता, तो कोई भी यह अनुमान न लगा पाता कि उसकी उम्र चालीस से कहीं ऊपर है।

जूराबायेव, दस से अधिक सालों से इसी पद को सम्भाले है और इसलिये अपने ज़िले का चप्पा-चप्पा जानता है।

तभी जूराबायेव की आवाज़ सुनाई दी। लम्बी ख़ामोशी टूटी, आलिमजान के विचारों की गाड़ी रुकी।

"हां तो, किस तरह पानी के लिये संघर्ष शुरू करनेवाले हैं आप लोग? आप लोगों ने यह क्या शोर मचा डाला है! आपके पड़ोसी तीन कोलख़ोज़ों के अध्यक्ष ताबड़तोड़ यहां पहुंचे हैं। इन्हें आपके ख़िलाफ़ कुछ शिकायतें हैं।"

आयक़िज़ तो अब बिल्कुल ही घबरा गयी। ज़ूराबायेव की आवाज़ और अन्दाज़ गम्भीर था। आयक़िज़ की समझ में न आ रहा था कि आख़िर उनसे भूल क्या हुई है, किसलिये उन्होंने उनके ख़िलाफ़ शिकायतें की हैं। "अक्तूबर", "विजय" और "मई दिवस"–ये तीनों कोलख़ोज़ आलतिन-साय हलक़ा-सोवियत में शामिल थे और आयक़िज़ ने उनके अध्यक्षों से केवल एक ही दिन पहले बातचीत की थी। आयक़िज़ ने उन्हें बताया था कि आलतिनसाय कोलख़ोज़ ने चश्मों की सफ़ाई करने का काम शुरू करने का फ़ैसला किया है। इसपर उन तीनों कोलख़ोज़ों के अध्यक्षों ने बड़ी ख़ुशी ज़ाहिर की थी।

आलिमजान की समझ में भी कुछ न आ रहा था।

"हां, हां, उन्हें शिकायत है, आपसे शिकायत है," ज़ूराबायेव ने दोहराया। उसने अपनी सिगरेट राखदानी में बुझाई और मुस्करा दिया, "इन लोगों ने मुझे आकर बताया कि आपके ही कोलख़ोज़ के लोग पहाड़ी नदियों के कुल पानी के मालिक बनना चाहते हैं और यह कि अपनी ज़रूरतों के लिये सिर्फ़ अपने ही लिये एक बांध बनाना चाहते हैं। आपको इसके बारे में क्या कहना है, साथियो?"

आयक़िज़ इस दिल्लगी से खिल उठी। उसे लगा कि उसका पहलेवाला आत्मविश्वास लौट रहा है। उसने अपना थैला अपनी तरफ़ खींचा और चाहा कि अपनी टिप्पणियां निकालकर जवाबी भाषण दे। मगर फिर उसने अपना इरादा बदल लिया और कनखियों से कोलख़ोज़ों के अध्यक्षों को देखते हुए ज़ूराबायेव को सम्बोधित करके मामूली ढंग से जवाब देने लगी:

"'अक्तूबर', 'विजय' और 'मई दिवस' कोलख़ोज़ों को किसी क़िस्म की फ़िक्र न करनी चाहिये," उसने कहा, "आलतिनसाय कोलख़ोज़ तो सिर्फ़ शुरूआत कर रहा है, मगर जब काम शुरू होगा तो बाक़ी सभी को हाथ बंटाना होगा। हमें बहुत-से लोगों की मदद की ज़रूरत होगी। और जब हम पानी हासिल कर लेंगे... तो इसमें क्या है, बराबर-बराबर बांट लेंगे।"

"हम आपको सभी तरह की मदद देने को तैयार हैं," "अक्तूबर" कोलख़ोज़ के अध्यक्ष उस्मानोव ने झट से जवाब दिया, "हम अपने सभी ट्रैक्टर और मशीनें लेकर पूरे दल-बल के साथ आपकी मदद के लिये आयेंगे। बस, आपके इशारे की देर है कि कब और कहां पहुंचना है।"

"हम लोगों ने जो कच्ची योजनायें पहले बनाई थीं और जो अनुमान

लगाये थे, अब वे बेकार हो चुके हैं," आयक़िज़ ने कहा। "साथी स्मिर्नोव ने हमें सही रास्ते पर डाल दिया है और इसके लिये हम उसके बहुत शुक्रगुज़ार हैं। उसने बहुत अच्छी तरह से चश्मों और घाटियों की जांच-पड़ताल की है और नतीजे निकाले हैं। मेरे ख़्याल में तो अगर साथी स्मिर्नोव ख़ुद ही अपनी जांच-पड़ताल के बारे में रिपोर्ट पेश करे तो बेहतर होगा।"

ज़िला सिंचाई-विभाग का अध्यक्ष, इंजीनियर स्मिर्नोव धीरे से खड़ा हुआ। लम्बा क़द, छरहरा जिस्म, भूरे बाल, बेहद चमकदार गहरी नीली आंखें, चौड़ी ठोड़ी और उसपर मटर के दाने के बराबर एक मस्सा, जो बातचीत के समय ऊपर-नीचे होता रहता था – ऐसा था स्मिर्नोव। कपड़े उसके मामूली-से थे – ढीला पतलून जो घुड़सवारी और पहाड़ पर चढ़ाई, दोनों के लिये आरामदेह था, घुटनों तक के जूतों के अन्दर खोंसा हुआ। वह खुले गले की क़मीज़ पहने था। स्मिर्नोव था तो पचास का, मगर हिम्मती और फुर्तीला होने के कारण अपनी उम्र से कहीं छोटा दिखाई देता था। उसने क़मीज़ की आस्तीनें ऊपर को चढ़ाई हुई थीं। बांहें उसकी हड़ीली थीं, मगर असाधारण रूप से मज़बूत।

उसने धीरे-धीरे अपना खस्ताहाल थैला खोला, पिन लगा-लगाकर जोड़े हुए काग़ज़ों का एक ढेर बाहर निकाला, चश्मा उतारा और उसे अपने रूमाल से साफ़ किया।

अब उसने अपना भाषण शुरू किया – आवाज़ उसकी बैठी-बैठी और फटी हुई, मगर फिर भी मन को भानेवाली थी। उसकी आवाज़ ठीक वैसी ही थी जैसी कि अक्सर उन लोगों की होती है जिन्हें चिल्ला-चिल्लाकर ऊंचा बोलना पड़ता है और सो भी बाहर खुले में।

भाषण शुरू करने का भी उसका अपना ही ढंग था। वह उसे ऐसे शुरू करता था मानो किसी बातचीत का सिलसिला काफ़ी देर से चल रहा हो और उसमें कुछ बातों से जैसे उसका मतभेद हो।

"मेरा ख़्याल है," स्मिर्नोव ने कहा, "कि आलतिनसाय के हमारे साथियों ने पानी की मात्रा की सम्भावना के बारे में बहुत ही कम अनुमान लगाये हैं। निर्माण करते समय शायद उन्हें इस बात का अनुभव हो जायेगा। यानग़ाक़साय नदी और इस घाटी के चश्मों के बारे में वे जो कुछ

भी करना चाहते हैं, वह बहुत कम है। मेरी राय में तो इस योजना को विस्तृत करना और सुधारना चाहिये। हमें उज़ुमसाय और यानग़ाक़साय इन दोनों नदियों के पानी को मिला लेना चाहिये। साथियो, आलतिनसाय के सारे पानी को अपने कोलख़ोज़ों में पहुंचाने का काम हमारे अपने वश की बात है। यह काम मुश्किल, मगर मुमकिन ज़रूर है। सबसे पहले हमें यानग़ाक़साय की घाटी में जहां चश्मे हैं, गहरी खुदाई करवानी चाहिये। हम जितना गहरा खोदेंगे, उतने ही अधिक नये चश्मे निकलते आयेंगे और पानी की मात्रा बढ़ती जायेगी। हमारे अनुमान के अनुसार, यानग़ाक़साय के चश्मे अपनी वर्त्तमान बुरी अवस्था में भी चार-पांच सौ हेक्टर ज़मीन की पानी की ज़रूरत पूरी कर सकते हैं। काफ़ी गहराई तक सफ़ाई हो जाने पर पानी की मात्रा दस गुना हो जायेगी। इस तरह एक साल के अन्दर ही अन्दर हमारे पास काफ़ी पानी हो जायेगा। सबसे बड़े चश्मे, कोकबुलाक़ के पानी को हमने अपने हिसाब में शामिल नहीं किया है। वैसे बड़े-बूढ़ों के अनुसार अकेले उसी चश्मे का पानी बाक़ी तमाम चश्मों के कुल पानी से दुगुना है। मगर इस चश्मे को फिर से चालू करने का काम बेहद मुश्किल है और फ़िलहाल मैं यह कहने की हिम्मत नहीं कर सकता कि कोक-बुलाक़ को साफ़ करने में हमें ज़रूर कामयाबी मिलेगी। तो भी ख़ैर, कोकबुलाक़ की सफ़ाई के लिये कोलख़ोज़ को अपनी सबसे मज़बूत टोली काम में लगानी चाहिये।"

"हमारे पार्टी ब्यूरो ने कोकबुलाक़ की सफ़ाई का काम करनेवाली टोली का इंचार्ज मुझे बनाया है," आलिमजान, स्मिर्नोव के भाषण के बीच में ही बोल पड़ा, "अपनी टोली की ओर से मैं आपको यह यक़ीन दिलाता हूं कि कोकबुलाक़ को फिर से बहाल करने के लिये हम अपनी सिर तोड़ कोशिश करेंगे।"

ज़ूराबायेव यह जानता था कि आलिमजान कभी झूठे वादे नहीं करता। उसे प्रोत्साहन देने के लिये उसने सिर हिलाकर हामी भरी और उसकी इस घोषणा का स्वागत किया।

"साथी स्मिर्नोव, मुझे यह बताइये," ज़ूराबायेव ने कहा, "पहाड़ के दामनवाले क्षेत्रों की सिंचाई के लिये आलतिनसाय के पानी का आप किस ढंग से इस्तेमाल करेंगे? मेरा मतलब यह कि हमें इस बात को भी ध्यान में रखना है कि आलतिनसाय एक गहरी घाटी में से होकर बहती

है। मैं समझता हूं कि यह घाटी अगर अधिक नहीं तो बीस मीटर गहरी तो ज़रूर ही है।"

"यह ठीक है। इसकी गहराई बीस मीटर से ज्यादा है," स्मिर्नोव ने जवाब दिया, "सही तौर पर इस नदी की सतह पहाड़ के दामनवाले इलाक़े की सतह से चौबीस मीटर नीची है। मगर आलतिनसाय हलक़ा-सोवियत के कोलख़ोज़ों के लिये यह चिन्ता या डर की बात न होनी चाहिये," स्मिर्नोव, आयक़िज़ और आलिमजान की तरफ़ मुड़ा। "घाटी गहरी, मगर तंग है। इसके अलावा आलतिनसाय में पानी भी काफ़ी होता है। दूसरे शब्दों में यह नदी इस योग्य है कि इसपर मेहनत की जाये। इस जगह पर," उसने एक नक़्शा निकालकर ज़ूराबायेव के सामने रख दिया, "इस जगह पर हमें एक बांध बनाकर आलतिनसाय को इस घाटी में बन्द कर देना होगा। घाटी ढालू और तंग है। इसलिये बांध के पीछे के हिस्से में वह बहुत जल्द ही पानी से भर जायेगी। यह है वह जगह जहां से हमें नहर खोदनी होगी। जिस जगह से इस नदी का बहाव बन्द किया जायेगा, उस जगह की गहराई का ध्यान रखते हुए हमें पानी को इक्कीस या अधिक से अधिक बाईस मीटर ऊपर उठाना होगा। इससे अधिक नहीं।"

"मगर बांध, बांध के बारे में आपकी क्या राय है?" ज़ूराबायेव ने पूछा। "यह बांध तो ख़ासा बड़ा होगा। आपके अनुसार इसकी ऊंचाई पचीस मीटर होगी। अपने ही साधनों से क्या हम इतना बड़ा बांध बना सकेंगे?"

कोलख़ोज़ों के अध्यक्षों की नज़रें स्मिर्नोव के चेहरे को घूर रही थीं। स्मिर्नोव ने यह महसूस किया। उसने ज़ूराबायेव को जवाब दिया:

"हां, बना सकेंगे। बांध का बाहरी ढांचा हम पत्थरों का बनायेंगे। पत्थर तो हमें ज़रूरत के अनुसार ठीक इसी जगह पर मिल जायेंगे। पत्थरों को तोड़ने के लिये हमारे पास बारूद भी है और यह काम करनेवाले आदमी भी। बांध-निर्माण का काम करने के लिये हमें जितने लोगों की ज़रूरत होगी, वे कोलख़ोज़ों से मिल जायेंगे..."

"इसका इन्तज़ाम हम कर देंगे!" अध्यक्षों ने झटपट हामी भरी।

ज़िला कार्यकारिणी समिति के अध्यक्ष सुलतानोव ने अपनी कुर्सी पीछे की ओर खिसकाई और दबे पांव स्मिर्नोव के पीछे जा खड़ा हुआ। वह इंजीनियर के कंधे के ऊपर से उसकी टिप्पणियों पर नज़र दौड़ाने लगा।

सुलतानोव अधेड़ उम्र का आदमी था, मोटा और कुछ-कुछ पिलपिला-सा। उसे सलीक़े से रहना बहुत पसन्द था। इतनी सख़्त गर्मी में भी वह कोट और टाई डाटे था।

"इसपर ख़र्च कितना आयेगा?" स्मिर्नोव जब अपना भाषण ख़त्म कर चुका तो उसने साफ़ ही पूछ लिया।

स्मिर्नोव इस सवाल का जवाब देने के लिये भी तैयार था।

"बेशक ख़र्च तो काफ़ी होगा," अपने काग़ज़ों पर नज़र डाले बिना ही उसने कहा। "मैंने इसका हिसाब भी लगवा दिया है। चश्मों की खुदाई और बांध तथा नहर निर्माण – इन सभी का कुल ख़र्च लगभग पचीस या तीस हज़ार काम के दिन होंगे। मगर हो सकता है कि बाद में काम करते हुए हमारा ख़र्च और भी ज़्यादा बढ़ जाये – बहुत मुमकिन है कि ऊपर के घिसे हुए पत्थर अलग करने के बाद हमें ठोस चट्टानों से दो-चार होना पड़े।"

सुलतानोव ने हल्की-सी सीटी बजायी। कोलख़ोज़ों के अध्यक्षों की प्रतिक्रिया जानने के लिये उसने बारी-बारी से उनकी तरफ़ नज़र दौड़ायी। मगर इन आंकड़ों से वे घबराये नहीं थे। उन सभी ने अपनी सहमति प्रगट की और अपना पक्का इरादा ज़ाहिर करने के लिये मेज़ पर बन्द मुट्ठियां टिका दीं।

जूराबायेव जल्दी-जल्दी कुछ लिखता जा रहा था।

"खुदाई का काम हाथों से करवाने की सोच रही हो?" उसने आयक़िज़ से पूछा।

"हां, साथी जूराबायेव।"

जूराबायेव का चेहरा कुछ तन गया। उम्रज़ाक़-अता ने यह देखा और बोलने की इजाज़त चाही। अपना दायां हाथ दिल पर रखे हुए उम्रज़ाक़-अता उठे और धीमी आवाज़ में जूराबायेव को सम्बोधित करके कहने लगे:

"हमारे कोलख़ोज़ के लोग पानी हासिल करके रहेंगे, यह उनका पक्का इरादा है। वे यह फ़ैसला कर चुके हैं – मैं तुमसे इल्तिजा करता हूं, मेरे बेटे, कि तुम हमारे हिसाब-किताब पर फिर से एक नज़र डाल लो, अच्छी तरह से जांच-पड़ताल कर लो और यह देख लो कि हम जो योजना बना रहे हैं, वह ठीक भी है या नहीं। रही हमारे जोश की बात, उसकी तुम कुछ फ़िक्र मत करो। लोग किसी काम को करने की

एक बार ठान लें, तो फिर पीठ दिखाना नहीं जानते। अगर हमारे पास मशीनें नहीं हैं, तो हम अपने हाथों से काम करेंगे। हाथों की तो हमें कुछ कमी है नहीं। और उनमें ज़ोर भी काफ़ी है। हमें सलाह दो, मेरे बेटे, कि हम किस ढंग से यह काम करें ताकि पूरी कामयाबी मिले। और इसके साथ ही हमें शुरू करने का हुक्म भी दो।"

"प्यारे उम्रज़ाक़-अता, मैं तो ख़ुद आपकी सलाह जानना चाहता था। यह बड़ा संजीदा मामला है। आप हमें सलाह दें कि इसे किस ढंग से पूरा करें।"

"यह तुम क्या कह रहे हो, बेटा! मैं ठहरा बूढ़ा आदमी, कुछ जानता-वानता भी नहीं। मैं क्या सलाह दे सकता हूं! यह तो पढ़े-लिखे लोगों का काम है। इंजीनियर ही इस बारे में बढ़िया राय दे सकते हैं। मिसाल के तौर पर ये हमारे साथी स्मिर्नोव..."

"अपने इंजीनियरों की सलाह तो हम हमेशा मानते ही हैं," जूराबायेव ने मुस्कराकर कहा। "मगर इनकी राय की हम चाहे कितनी भी क़द्र क्यों न करें, हमें आप जैसे अनुभवी आदमी की सलाह की तरफ़ भी बहुत ध्यान देना चाहिये। ज़िन्दगी और काम, दोनों का आपको बेहद तजरबा हासिल है, उम्रज़ाक़-अता! सवाल चाहे बड़ा हो या छोटा, अपने लोगों से सलाह लेना हम कम्युनिस्ट कभी नहीं भूलते। यह बात इस मामले में भी ठीक है। यानग़ाक़साय की घाटी काफ़ी गहरी है, खुदाई होने पर बहुत-सी मिट्टी निकलेगी। उस मिट्टी को हम ज़मीन की तह से बाहर कैसे निकालेंगे?"

"यह कौन-सा मुश्किल काम है? अपनी पीठों पर लाद-लादकर बाहर निकालेंगे, मेरे बेटे। आख़िर पहली बार तो हम लोग यह काम कर नहीं रहे हैं। फ़रग़ाना नहर कैसे बनी थी, सो तो याद ही होगा? हां, तो हम मिट्टी को अपनी पीठों पर लाद-लादकर बाहर लायेंगे।"

"हम घोड़ों और ठेलों का इस्तेमाल करेंगे," आलिमजान ने कहा।

"इस ढंग से तो काम पूरा करने में आप लोगों को दो-तीन महीने लग जायेंगे। और तब तक बुवाई के लिये काफ़ी देर हो जायेगी। आप लोग तो नई सींची गई ज़मीनों पर इसी साल कपास बोने का कार्यक्रम बनाये बैठे हैं, ठीक है न?"

"साथी जूराबायेव," स्मिर्नोव ने टोककर कहा, "मैंने अपना अनुमान इस ढंग से लगाया है कि बांध बनाने, चश्मों की सफ़ाई करने और नहर खोदने के ये तीनों काम तीस दिन में पूरे हो जायें। मगर ऐसा करने के लिये कुछ कामों में तो मशीनों की मदद लेनी ही होगी।"

"आप ठीक कहते हैं," जूराबायेव ने सहमति प्रगट की, "मशीनों की मदद ज़रूरी है। इनके बिना हम वक़्त पर काम पूरा करने की उम्मीद नहीं कर सकते।"

सुलतानोव दबे पांव इधर-उधर चक्कर लगा रहा था।

"ज़िले में जितनी मशीनें हैं, वे सभी हम तुम्हें दे देंगे," उसने कहा।

"काश कि हमें कहीं से एक्सकेवेटर मिल जाता! एक ही काफ़ी होता!" आलिमजान ने अपनी इच्छा ज़ाहिर की।

जूराबायेव तो अब खिलखिलाकर हंस पड़ा।

"ओह! क्या अजीब लोग हैं आप! अभी एक मिनट पहले तो आप पहाड़ों को अपनी पीठ पर लादने को तैयार थे और अब दूसरे ही मिनट एक्सकेवेटर की मांग करने लगे हैं!"

"एक्सकेवेटर की हमें उस वक़्त ज़रूरत पड़ेगी, जब हम बांध का पाट खोदने और नहर काटने लगेंगे," स्मिर्नोव ने कहा, "मगर मैं आशा करता हूं कि चश्मों की सफ़ाई के लिये तो हम हाथ से भी काम चला लेंगे बशर्ते कि हमें बैल्ट-कन्वेयर मिल जायें। इनकी संख्या कम से कम चार, और उनमें से एक तो बहुत ही मज़बूत होना चाहिये। कोकबुलाक़ के लिये हम इसी का इस्तेमाल करेंगे," स्मिर्नोव ने कहा।

"आपको चार बैल्ट-कन्वेयर मिल जायेंगे," जूराबायेव ने वादा दिया। "साथी स्मिर्नोव, आप अपने अनुमान साथ ले आये यह बहुत अच्छा किया। आज शाम को ज़िला पार्टी कमेटी की बैठक में हम इस सवाल पर विचार करेंगे। एक प्रस्ताव पास करके हम सभी स्थानीय संगठनों के लिये यह अनिवार्य कर देंगे कि वे आपको हर तरह की मदद दें। मेरे ख़्याल में हमें अपने सभी साधनों का इस्तेमाल करते हुए चश्मे साफ़ करने और नहर खोदने का काम शुरू कर देना चाहिये। लगभग दस दिन बाद हम लोग बांध पर काम शुरू करेंगे। पानी के बिना खेतों के मुंह सूखे जा रहे हैं। तीस दिन में या अधिक से अधिक चालीस दिन में यह बांध ज़रूर ही पूरा

होना चाहिये। इस उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए हम आपको तीन एक्सकेवेटर दे देंगे। एक और सवाल – आप लोगों ने यह भी सोच लिया है कि किन खेतों को सबसे पहले पानी दिया जायेगा?"

"हां! हम तो उन्हें तैयार भी करने लगे हैं," आयक़िज़ ने झटपट जवाब दिया।

ज़ूराबायेव उठकर खड़ा हो गया। बाक़ी सदस्यों ने भी वैसा ही किया।

"प्यारे साथियो," ज़ूराबायेव ने भावुक होते हुए कहा, "यह तो आप सभी जानते हैं कि पहाड़ के दामनवाले इलाक़ों में क़ायम बहुत-से हमारे कोलख़ोज़ पानी न होने की वजह से न तो कपास ही उगा पाते हैं और न ही प्रगति के पथ पर आगे बढ़ पाते हैं। बात यहीं पर ख़त्म नहीं हो जाती। इन कोलख़ोज़ों के अलावा पहाड़ों के ठीक बीच सैकड़ों और ऐसे भी गांव हैं जिनमें खेती करने लायक़ ज़मीन नहीं है। उन्हें भी हमारी मदद की ज़रूरत है। हमारे ज़िले की जो परिस्थिति है, उसमें हम उनकी सिर्फ़ यही मदद कर सकते हैं कि वे पहाड़ों को छोड़कर यहां, नीचे आ बसें। हज़ारों हेक्टर ज़मीनों को पानी देकर आप उन सब लोगों के लिये भी समृद्धि का पथ तैयार करेंगे। पहाड़ के दामनवाले हमारे इलाक़ों में पानी के लिये संघर्ष करने के काम में पहल आप लोगों ने की है। सोवियत लोग ख़ुश्क हवाओं और सूखे के ख़िलाफ़ जो महान संघर्ष कर रहे हैं, आप लोगों का आरम्भ किया हुआ काम उसमें सहायक होगा। आप लोग हिम्मत, दिलेरी, दृढ़ता और कड़े परिश्रम का आंचल थामे रखें, विजय आप की ही होगी। आपकी जीत दूसरों का पथ-प्रदर्शन करेगी। दूसरे लोग अपनी आंखों से देख लेंगे कि काम शुरू करने और कठोर मेहनत करने से उनके खेतों में भी पानी पहुंच सकता है। साथियो, मैं आपकी सफलता की कामना करता हूं!"

८

जिस दिन काम शुरू होना था, उससे पहली रात आयक़िज़ देर तक हलक़ा-सोवियत के दफ़्तर में रही।

योजना की सफलता की कल्पना करके वह अपने अन्दर गुदगुदी-सी महसूस कर रही थी। आज तक उसने जो कुछ किया था, जो कुछ जाना-समझा था, जितनी सफलता प्राप्त की थी – वह उसकी इस नयी योजना की तुलना में बहुत तुच्छ और बहुत ही मामूली लग रही थी। उसने अपनी आंखों के सामने पूरी योजना का चित्र उभारने की कोशिश की, मगर उसके सामने आये अलग-अलग हिस्से और अलग-अलग काम। वह उन्हें एक ही तार में पिरो न सकी। कभी-कभी उसे डर भी लगता। वह महसूस करती कि जो ज़िम्मेदारी उसे सौंपी गयी है, उसे निभा न सकेगी।

स्मिर्नोव को निर्माण-कार्य का संचालक नियुक्त किया गया। आयक़िज़ उसकी सहायिका और बांध-निर्माण विभाग की निरीक्षिका बनाई गई। सभी कोलख़ोज़ों ने कामगारों की टोलियां बना दीं और फ़ोरमैनों ने उन जगहों का अच्छी तरह से अध्ययन कर लिया जहां उन्हें काम करना था। ज़ूराबायेव ने चार बैल्ट-कन्वेयर देने का वचन दिया था – तीन पहुंच चुके थे और चौथा, सबसे अधिक शक्तिशाली, दो या तीन दिन में पहुंचनेवाला था।

एक्सकेवेटर भी उनके अनुमान से पहले ही आनेवाले थे।

फिर भी आयक़िज़ घबराई हुई थी। कल सुबह आठ बजे किसानों की एक पूरी फ़ौज पहाड़ों पर हल्ला बोलेगी। किसानों की यह सेना जीवन देनेवाले पानी को होंठों पर जीभ फेरती हुई सूखी धरती में ले जाने का काम शुरू करेगी। कल आयक़िज़ और आलतिनसाय के दूसरे कम्युनिस्टों की परीक्षा का दिन होगा। कल उनकी सूझ-बूझ, परिपक्वता, लोगों का पथ-प्रदर्शन करने की क्षमता और उनमें उत्साह पैदा करने की योग्यता कसौटी पर कसी जायेगी।

वे इस कसौटी पर खरे भी उतर सकेंगे?

आधी रात से भी अधिक समय हो चुका था। आयक़िज़ जब दफ़्तर से बाहर आई, तो बिल्कुल अंधेरा था और चारों ओर इतना गहरा सन्नाटा था कि आयक़िज़ को अपने दिल की धड़कन तक सुनाई दे रही थी।

वह घर पहुंची, उसने फाटक को ताला लगाया और दबे पांव अपने कमरे में चली गयी। वह अपने पिता की नींद ख़राब न करना चाहती थी। बुरी तरह थकी-टूटी तो थी ही – जैसे ही बिस्तर पर लेटी, गहरी नींद सो गई।

सुबह जब उसकी ग्रांख खुली, तो हल्की-हल्की सफ़ेदी खिड़कियों से झांकने लगी थी। वह शीशे के सामने जा खड़ी हुई, सुबह की हल्की-हल्की रोशनी में उसने बालों की चोटियां गूंथीं ग्रौर फुर्ती से कपड़े पहने।

बाहर ग्रांगन में उम्रज़ाक़-ग्रता सूं-सूं करते हुए समोवर के गिर्द दौड़ धूप कर रहे थे।

"सलाम, ग्रब्बाजान!" ग्रायक़िज़ ने ऊंची ग्रावाज़ में कहा।

"सलाम, बिटिया, सलाम!" उम्रज़ाक़-ग्रता ने प्यार से जवाब दिया। "बिल्कुल तैयार हो न, बेटी? बायचीबार तो क़ाबू से बाहर हुग्रा जा रहा है, घास भी नहीं खा रहा। मुंह-हाथ धो लो ग्रौर जल्दी से नाश्ता कर लो। पौ भी नहीं फटी थी कि लोगों के दल के दल मैदान में इकट्ठे होने लगे थे।"

ग्रायक़िज़ बायचीबार की तरफ़ दौड़ गई ग्रौर उसे चीनी का एक डला खिला ग्राई।

बाप-बेटी नाश्ता करने बैठे। नाश्ते की मेज़ छोटी थी ग्रौर उसपर एक पुराना मेज़पोश बिछा हुग्रा था।

गली में से लोगों की ग्रावाज़ें ग्रा रही थीं, मोटरकारों के हार्न सुनाई दे रहे थे, ऊंट चीख़ रहे थे ग्रौर गधे रेंग रहे थे। मैदान में किसानों की एक फ़ौज पहाड़ों पर धावा बोलने के लिये तैयार खड़ी थी।

ग्रालतिनसाय हलक़ा-सोवियत के सभी कोलख़ोज़ों के लोगों से खचाखच भरी हुई ट्रकें ग्रौर छकड़े भारी संख्या में मैदान में पहुंच रहे थे। हलक़ा-सोवियत की इमारत के सामने मैदान में पहुंचकर लोगों की छोटी-छोटी नदियां जैसे एक सागर में विलीन हो जाती थीं। ट्रकों ग्रौर छकड़ों पर लाल झण्डे लहरा रहे थे ग्रौर वे बसन्त के शुरू के फूलों से ख़ूब सजे हुए थे। लोगों के हर दल के ग्रागे-ग्रागे एक ट्रक होती जिसके ऊपर उस कोलख़ोज़ का झण्डा लहराता दिखाई देता। लोगों का हर दल बाजे-गाजे के साथ ग्राता। बाजे बजानेवाले ग्रपना पूरा ज़ोर लगाते ग्रौर उनके बाजों की बेमेल ग्रावाज़ों से ग्रासपास की सभी जगहें गूंज उठतीं। बाजों की ग्रावाज़ें बेमेल होते हुए भी दिल ख़ुश करनेवाली थीं।

हलक़ा-सोवियत की इमारत की छत पर राजकीय झण्डा लहरा रहा था। यह झण्डा कई किलोमीटरों की दूरी से ही दिखाई दे रहा था ग्रौर

लोग ख़ुशी-ख़ुशी एक दूसरे को यह ख़बर सुना रहे थे–आलतिनसाय के किसान पानी के लिये आज अपनी लड़ाई शुरू करेंगे।

आयक़िज़ जब अपने घोड़े पर सवार होकर हलक़ा-सोवियत के मैदान में पहुंची, तो लड़के-लड़कियां वहां नाच रहे थे। भिन्न-भिन्न कोलख़ोज़ों के सर्वश्रेष्ठ नृत्यकार घेरे के अन्दर आ-आकर अपना-अपना कला-कौशल दिखा रहे थे। वे एक दूसरे को मात देने और दर्शकों की भीड़ की अधिक से अधिक प्रशंसा पाने की कोशिश करते।

आयक़िज़ ने बायचीबार को बांधा और तेज़ी से बरामदे की सीढ़ियों की तरफ़ दौड़ गयी। सामने के कमरे से आलिमजान बाहर आया, उत्तेजित और मुस्कराता हुआ।

"सलाम, आयक़िज़!" उसने ऊंची आवाज़ में कहा। "देखो तो क्या रंग जम रहा है! अभी तो सात भी नहीं बजे! और तो और हमारे क़ादिरोव का रवैया भी बदल गया है। मेरी टोली में उसने तीन और आदमी दे दिये हैं। कहता है कि यहां मैं ख़ुद अकेला ही सब कुछ सम्भालने की कोशिश करूंगा।"

आलिमजान को इसी रूप में देखना आयक़िज़ को सबसे अधिक पसन्द था–दृढ़प्रतिज्ञ, साहस और उत्साह से भरपूर।

"क्या कोकबुलाक़ हमारा हो जायेगा?"

आयक़िज़ ने बहुत ही धीरे से यह बात पूछी। सिर्फ़ प्यार से भरा हुआ दिल ही इस सवाल को सुन सकता था।

"अगर ज़रूरत हुई तो हम कोकताग़ की एक-एक इंच ज़मीन खोद डालेंगे, मगर कोकबुलाक़ को अपना बनाकर छोड़ेंगे," आलिमजान ने भी आयक़िज़ की तरह धीरे से जवाब दिया।

कन्धे से कन्धा मिलाकर चलते हुए वे हलक़ा-सोवियत की इमारत के अन्दर गये। हाल खचाखच भरा हुआ था।

नाटा और दुबला-पतला एक जवान सेक्रेटरी मेज़ पर बैठा हुआ पहुंचनेवालों की हाज़िरी लगाता जाता था।

"सभी लोग पहुंच चुके हैं क्या?" आयक़िज़ ने उससे पूछा।

"अब तक ११७२ आदमी पहुंच चुके हैं। 'मई दिवस' कोलख़ोज़ के लोग अभी तक नहीं पहुंचे," उसने जवाब दिया।

"तुम्हें झूट न बोलना चाहिये, नौजवान," आयक़िज़ के पीछे से किसी ने शिकायत की।

"मई दिवस" कोलख़ोज़ का अध्यक्ष मेज़ के सामने आकर खड़ा हो गया।

"लो, लिखो: 'मई दिवस' कोलख़ोज़ के ३७६ आदमी। हमारे कोलख़ोज़ ने अपने सर्वश्रेष्ठ आदमी भेजे हैं।"

आयक़िज़ मुस्कराई और अपने कमरे की तरफ़ घूम गई। उसके कमरे में भी लोगों की भीड़ लगी हुई थी। स्मिर्नोव और आलिमजान, आयक़िज़ की मेज़ पर बैठे थे। कोलख़ोज़ों के अध्यक्ष और टोलियों के फ़ोरमैन आपसी प्रतियोगिता की शर्तें तय कर रहे थे।

आयक़िज़ जब अन्दर आई तो स्मिर्नोव उठकर खड़ा हो गया। उसने उसका औपचारिक ढंग से स्वागत किया। "तीन बैल्ट-कन्वेयर तो पहले से ही निर्माण-स्थल की तरफ़ जा चुके हैं," स्मिर्नोव ने आयक़िज़ को बताया, "और चौथा, जिसका इस्तेमाल कोकबुलाक़ के लिये किया जायेगा, आज शाम तक या अधिक से अधिक आज रात तक पहुंच जायेगा।"

"मतलब यह कि आलिमजान की टोली को आज तो अपनी पीठों पर ही पत्थर ढोने होंगे? कोई ठेले-वेले तो वहां जा नहीं सकते।"

"तो कुछ परवाह नहीं," आलिमजान ने फ़ौरन जवाब दिया, "बैल्ट-कन्वेयर के पहुंचने तक अगर हम लोग एक दिन पत्थर ढो लेंगे तो हमारी पीठें टूट तो न जायेंगी!"

आलिमजान की टोली और "मई दिवस" कोलख़ोज़ की टोली के बीच प्रतियोगिता की शर्तें तय हो गईं।

अब ये सभी बाहर गली में आ गये। आयक़िज़, स्मिर्नोव, आलिमजान और कोलख़ोज़ों के अध्यक्ष अपने-अपने दलों के मुखियों के रूप में आगे-आगे हो लिये। रेशमी झण्डे धीरे-धीरे लहराये। झण्डों के पीछे बाजेवालों ने अपनी क़तार बनायी। अब क्या था – ढोल बजे, बिगुल गूंजे और आकाश को चीरता हुआ एक हुर्रा सुनाई दिया। डेढ़ हज़ार आदमियों की एक मज़बूत फ़ौज कोकताग़ पहाड़ पर धावा बोलने के लिये आगे बढ़ी।

९

दोपहर होते तक आलतिनसाय कोलख़ोज़ के बड़े-बूढ़ों ने, पहाड़ के ठीक दामन में एक ढालू टीले पर, एक शानदार तम्बू लगवा दिया। फिर बिजली की व्यवस्था की गई। निर्माण-कार्य के कर्मचारियों का यही मुख्य कार्यालय बनाया गया।

आयक़िज़ जब यहां पहुंची तो दिन ढल चुका था। वह दिन भर यहां से वहां घोड़ा दौड़ाती फिरती रही थी—पहले दिन के काम-काज का निरीक्षण करती हुई। उसके मन में न तो अब सन्देह ही रहे थे, न चिन्तायें ही उसे घेरे थीं। उसे इनसे मुक्ति मिल गई थी। आयक़िज़ को लग रहा था मानो वह किसी घुटे-घुटे कमरे से निकलकर बाहर खुले में आकर ताज़ी हवा में सांस ले रही है। काम शुरू हो चुका था। खड्डों की तहों से टनों मिट्टी खोद-खोदकर निकाली और किनारों पर जमा की जा चुकी थी।

यह सही है कि लोग अभी अपने पूरे रंग में नहीं आये थे—काम का पहिया जैसे उनके हाथों से खिसक-खिसक जाता था। मगर कल तक इस पहिये की गति में अधिक स्थिरता और एकरूपता आ जायेगी।

बड़ी बात तो यह थी कि काम का श्रीगणेश हो गया था।

आयक़िज़ टीले की चोटी पर पहुंचकर घोड़े से नीचे उतरी। उसने बायच्चीबार को हरी-हरी घास खाने के लिये छोड़ दिया।

मुख्य कार्यालय के लिये चुनी गई जगह बहुत अच्छी थी। यहां से—यानग़ाक़साय और उज़ुमसाय—दोनों घाटियां साफ़ दिखाई देती थीं। इस वक़्त तो ये घाटियां बिल्कुल पहचानी ही न जाती थीं। ऐसा लगता था मानो ये रंग-बिरंगे फूलों से भर गई हों। इन घाटियों को तरह-तरह के रंग मिले थे—काम करनेवाले लोगों की रंग-बिरंगी क़मीज़ों से। इन लोगों के हाथों में इस्पाती फावड़े थे जो धूप में चमक रहे थे। स्ट्रेचरों पर मिट्टी लाद-लादकर ले जानेवाली लड़कियों ने एक गीत गाना शुरू कर दिया।

उनके गीत की आवाज़ दूर से लहराती और धीरे-धीरे पास आती हुई एक लहर की भांति आयक़िज़ के नीचेवाली पहाड़ी से आकर टकराने लगी।

चुप रहूं भला मैं कैसे, दिल कहता मुझसे गाओ!
मैं मुक्त, खुली सब राहें ओ, गीत गगन में छाओ।

मधुऋतु, जब प्यारी आती, तब शीतल झोंके आते।
ललनाओं को सहलाते॥

उनकी रेशम-सी अलकें, तारों-सी आंखें, पलकें।
दांतों में मोती झलकें॥

अपनी धरती में हम तो, जैसे ख़ुशियों का मधुबन।
सब ओर मचलता यौवन॥

सदियों की लानत बुर्का, उससे भी पिंड छुड़ाया।
नव जीवन हमने पाया॥

जैसे वसन्त आने पर, खिल उठता सारा उपवन।
ऐसा अब अपना जीवन॥

पर यह सारा सुख-वैभव, सोवियत सत्ता ही लाई।
वह ही तन-मन में छाई॥

दिल कहता यह ही गा ओ।
ओ, गीत गगन में छाओ॥

लड़कियों की इन्हीं आवाज़ों में अब एक पुरुष की आवाज़ भी मिल गई – यह आवाज़ थी काफ़ी ज़ोरदार और जैसे कि उसके दिल से निकलती हुई।

आयक़िज़ ने अपनी आंखें बन्द कर लीं। गीत में विश्वास की झलक थी और ख़ुशी की ललक। धीरे-धीरे और लोगों की आवाज़ें भी शामिल होती गईं और थोड़ी ही देर बाद घाटियों की गहराइयों से सैकड़ों आवाज़ें एकसाथ गूंजती हुई छूने लगीं आकाश के ओर-छोर।

मगर गूंज सिर्फ़ गीत की ही नहीं थी – लय में बंधे हुए साज़ों की आवाज़ें भी उसमें शामिल थीं। ये आवाज़ें थीं फावड़ों की इस्पाती टंकारों की, चरमराते हुए बैल्ट-कन्वेयरों की, एक दूसरे को पुकारते लोगों और पत्थरों को धमाधम तोड़ते हथौड़ों की।

इनसान का सदियों पुराना सपना सत्य हो रहा था। सपना सच होगा – पानी हासिल होगा।

पानी, पानी... आयक़िज़ ने अपनी आंखों के सामने पानी की मोटी धार निकलती हुई देखी। यह धार गरजती और तेजी से बहती हुई

आलतिनसाय की ज़मीनों की तरफ़ बढ़ चली। उसे पानी की ताज़गी महसूस हुई। नीले पानी की यह नदी साफ़ किये हुए पेटे में हंसती हुई निर्बाध गति से बहने लगी। मगर अचानक ही आयक़िज़ ने अपनी कल्पना में देखा कि बड़ी ऊंची-ऊंची चट्टानें इस नदी का रास्ता रोककर खड़ी हो गई हैं। पानी अब इन चट्टानों से सिर तोड़ने, ग़ुस्से से लाल-पीला होने और मुंह से झाग उगलने लगा है। ज़ोर से पानी का एक रेला आया – लहरें ऊपर को उछलीं और चट्टान में से अपना रास्ता बनाने के लिये संघर्ष करती हुई नदी ग़ुस्से से चीख़ी-चिल्लाई।

आयक़िज़ की आंखों के सामने कल्पना ने रंग भर-भरकर अब एक दूसरी तसवीर तैयार की। यह तसवीर थी पहाड़ के दामनवाले इलाक़ों की, जहां पहली बार खेतों में हल चलाया गया था और जहां हज़ारों की संख्या में कपास के पौधे लहलहाते दिखाई दे रहे थे। फिर एक और तसवीर उभरी बड़ी-बड़ी खत्तियों की, नीचे से ऊपर तक कपास से भरी हुई, वे वर्फ़ से ढके हुए पहाड़ों जैसी सफ़ेद-सफ़ेद दिखाई दीं।

ज़ोर का एक धमाका हुआ – हथौड़े ने किसी एक बड़े पत्थर को चूर-चूर किया। आयक़िज़ का स्वप्न टूट गया। वह धरती पर लौट आई। संध्या हो चुकी थी। कितनी जल्दी-जल्दी और कैसे छिपे-छिपे, चुपके-चुपके सांझ घिर आई थी! पहाड़ी की चोटी पर अभी भी कुछ-कुछ रोशनी थी, मगर गहरी और तंग घाटियों पर तो अंधेरे की चादर बिछ भी चुकी थी और वहां काली-काली परछाइयां घूमती-सी दिखाई देने लगी थीं। धीरे-धीरे फावड़ों की चोटों की आवाज़ और मशीनों की गड़गड़ाहट ख़त्म हो गई। नीचे घाटी में सैकड़ों अलाव जल उठे और उनका कड़वा धुआं आकाश में फैलने लगा।

रात के सन्नाटे में लोगों की आवाज़ें ज़्यादा साफ़ और ऊंची सुनाई देने लगीं।

आयक़िज़ ने पैरों की आहट सुनी, फिर एक पत्थर आवाज़ करता हुआ नीचे की तरफ़ लुढ़क पड़ा। स्मिर्नोव और आलिमजान धीरे-धीरे पहाड़ी पर चढ़ रहे थे।

उनके चेहरों पर पहली नज़र पड़ते ही आयक़िज़ यह भांप गई कि वे परेशान और निराश हैं। उसने एक भी सवाल न किया।

दूसरे फ़ोरमैन भी जल्द ही वहां आनेवाले थे।

जब सभी लोग आ गये तो दिन भर के काम का जायज़ा लेने के लिये एक सभा हुई। सिर्फ़ मेज़ पर ही लैम्प की मद्धिम और धीमी-धीमी रोशनी पड़ रही थी। बाक़ी सारी जगह अन्धकार में डूबी हुई थी।

"हमने आज के काम की योजना गड़बड़ कर डाली। इसकी वजह क्या थी? क्यों हमसे यह योजना गड़बड़ हुई? मैं इसकी वजह बताता हूं। वजह यह है कि ज़रूरत से ज्यादा लोग छोटे-मोटे कामों में लगे हुए हैं। फ़ोरमैनों को चाहिये कि हमारे आज के कड़वे तजरबे से सबक़ लें और फ़ौरन ही मामले को ठीक-ठाक कर दें। रही कल की बात, तो कल से जितने भी लोग मिल सकें उन्हें खुदाई के काम में लगा देना चाहिये। सो पहली बात ख़त्म। दूसरी चीज़ यह है कि अभी हम अपने काम में पूरी तरह मन नहीं लगा पाये। ऐसा नहीं हुआ कि एक बार जो काम में जुटे तो बस जुटे ही रहे। बैल्ट-कन्वेयरों को अच्छी तरह भरा नहीं जाता। हमारा फ़र्ज़ है कि हम कल जितनी भी जल्दी हो सके इस कमी को दूर करें। आज सबसे घटिया काम किया आलिमजान की टोली के लोगों ने। यह सही है कि उनके पास बैल्ट-कन्वेयर नहीं है, इसके अलावा वहां किनारे बहुत ढालू हैं और इसलिये इनका ज्यादा वक़्त और ताक़त, मिट्टी बाहर निकालने में लग गयी। इतना ही नहीं, इस जगह काम करना भी बहुत मश्किल है। चट्टानों के सिवा वहां और कुछ है भी तो नहीं। इन चट्टानों को बारूद से उड़ाना होगा। यह काम करनेवाले लोग भी पहुंच चुके हैं। तड़के ही वे इन चट्टानों को उड़ा देंगे। सुबह ही हमें एक मज़बूत बैल्ट-कन्वेयर भी मिल जायेगा। अब कल अपने अच्छे नतीजे दिखाने की ज़िम्मेदारी आलिमजान और उसकी टोली के लोगों पर है।"

स्मिर्नोव ने अगले दिन की योजना का विवरण दिया और अपनी सीट पर बैठ गया।

इसके बाद फ़ोरमैनों के बोलने की बारी आई। अपनी ग़लतियों के लिये उन्होंने ख़ुद अपनी कड़ी आलोचना की और साथ ही दूसरों की ग़लतियां भी बताईं। उदास-उदास-सा तम्बू इन लोगों के जोश से मानो सजीव हो उठा। इनकी बातें सुनकर, इनका जोश देखकर स्मिर्नोव को लोगों के चट्टान की तरह मज़बूत इरादे और अपनी ताक़त पर भरोसे

के बारे में कुछ भी शक नहीं रहा। उसे विश्वास हो गया कि आख़िर जीत इन्हीं लोगों की होगी।

सिर्फ़ आलिमजान ही गुम-सुम रहा। उसने इस बातचीत में कोई हिस्सा भी नहीं लिया। जब थोड़ी देर के लिये शोर बन्द हुआ तो आयक़िज़ को ऐसे लगा कि मानो वह आलिमजान की मुश्किल से ली जा रही सांस की आवाज़ सुन रही है।

बहस जब ख़त्म हो चुकी तो आलिमजान बोलने के लिये उठा।

"हमने आज के काम का जायज़ा लिया और उससे यही ज़ाहिर हुआ कि मेरी टोली ही सबसे पीछे रही। बैल्ट-कन्वेयर न होने की वजह से हमें बहुत ही मुश्किल का सामना करना पड़ता है। मगर हमारी मुश्किल यहीं ख़त्म हो जाती हो, ऐसी बात नहीं है। सबसे बुरी बात तो यह है कि हमें पत्थरों को हटाना पड़ता है। उनमें से कुछ एक तो अच्छे-ख़ासे मकान के बराबर हैं। उन्हें तो न कोई ट्रक और न कोई बैल्ट-कन्वेयर ही लादकर ले जा सकता है। आप लोगों को यह तो याद ही होगा कि बासमचियों के दल के लोगों ने कोकबुलाक़ के ऊपरवाली बहुत बड़ी चट्टान को उड़ा दिया था। यह काम बहुत होशियारी और बड़ी चालाकी से किया गया था।"

आयक़िज़ ने महसूस किया कि अपनी उस दिन की असफलता के कारण वह बहुत घबराया हुआ और बहुत निराश है। वह बड़ी बेसब्री से बैठक के ख़त्म होने का इन्तज़ार कर रही थी। वह चाहती थी कि लोगों के जाने के बाद वह आलिमजान को कुछ दिलासा दे, दो-चार शब्द कहकर उसकी हिम्मत बढ़ाये। वह उसे प्यार जो करती थी! उसने फ़ोरमैनों को बाहर जाते देखा और आलिमजान... वह भी कहीं दिखाई नहीं दिया—सबसे पहले ही खिसक गया था। वह जल्दी-जल्दी तम्बू से बाहर आई। उसे यक़ीन था कि वह बाहर पहाड़ी पर खड़ा उसका इन्तज़ार करता होगा। मगर वह वहां भी नज़र न आया। उसके दिल को गहरी चोट लगी, बड़ी निराशा हुई। आयक़िज़ का मन हुआ कि फूट-फूटकर रोये। कुछ क्षणों तक वह वहीं पहाड़ी पर खड़ी रही, नीचे घाटी में जलते हुए और धीरे-धीरे एक-एक करके आंखों से ओझल होते हुए अलावों को देखती रही।

रात धरती को अपनी गोद में लेटी जा रही थी।

अचानक उस अंधेरे में उसने सिमनोंव को पुकारते सुना:

"आलिमजान! घड़ी भर के लिये रुक जाओ! रे ओ दीवाने! ज़रा मेरा इन्तज़ार करो! अभी इसी वक़्त तो वे उन चट्टानों को उड़ाने से रहे! ये सब तो कल सुबह ही होगा!"

आयक़िज़, आलिमजान का जवाब न सुन सकी।

आयक़िज़ को बड़ी निराशा हुई कि वह उससे बात करने के लिये भी न रुका। उसके दिल को ठेस लगी। मगर उसे ख़ुशी भी हुई कि आलिमजान ऐसे पक्के इरादे से, ऐसे डटकर अपनी मंज़िल की तरफ़ बढ़ रहा है।

१०

सूरज आग उगल रहा था। गर्मी धरती का रस सोखती जा रही थी और धरती के ओंठों पर पपड़ियां जमती जा रही थीं। मगर मैदानों की घास अब भी हरी-भरी थी।

आलिमजान की टोली यानग़ाक़साय की तंग और गहरी घाटी में काम कर रही थी। इस टोली के लोग गर्मी से परेशान न थे। पहाड़ की चोटियों से आनेवाले ताज़ी और ठण्डी हवा के झोंके उनकी नंगी बांहों और पीठों को सहला जाते, ठण्डक पहुंचा जाते।

शक्तिशाली बैल्ट-कन्वेयर हर दिन लगातार काम करता रहता। धूप में झुलसे हुए अधनंगे लोग फावड़े भर-भरकर इसमें जल्दी-जल्दी मिट्टी, कंकरियां और पत्थर डालते जाते। ऐसी तेज़ रफ़्तार से काम करते हुए उन्हें काफ़ी थकान महसूस होती। पहाड़ी हवा के ठण्डे झोंके भी उनकी पीठों को ठण्डक न दे पाते। तेज़ धूप से इनकी आंखें चौंधिया जातीं। सूरज की किरणें साफ़-सुथरी पहाड़ी हवा में घुल-मिलकर उसे गर्मा देतीं। सूरज कभी न बुझनेवाला आग का एक गोला-सा लगता। उदास और भूरी-भूरी चट्टानें धूप में बेहद सफ़ेद-सी लगतीं – आंखों को चकाचौंध करनेवाली एक बड़ी भट्ठी में चमकनेवाले इस्पात की तरह। कामगारों की नंगी पीठें चिकनी और काली दिखाई देतीं।

सत्रह दिनों से आलिमजान की टोली कोकबुलाक़ चश्मे की तलाश में सुबह से शाम तक कड़ी मेहनत कर रही थी। मगर इन लोगों को उस मशहूर चश्मे से अभी तक पानी की एक भी बूंद नहीं मिली थी, चश्मे के मुंह तक का भी पता नहीं लगा था। ये लोग तीन बार बारूद भी

इस्तेमाल कर चके थे। हर बार बड़े ज़ोरों के धमाके हुए जो पूरी घाटी में गूंज गये, बड़ी-बड़ी चट्टानें टुकड़े-टुकड़े होकर गिर गईं और चश्मे की तरफ़ जाने का रास्ता साफ़ होता गया।

मगर चश्मा था कि फिर भी दिखाई नहीं दिया।

जब वे धमाकों से टूटे बड़े पत्थरों को घाटी की तह से साफ़ कर चुके तो कंकरों की एक तह दिखाई दी। पानी के अब किसी भी क्षण बाहर निकल आने की आशा की जा सकती थी। मगर एक के बाद एक दिन गुज़रता गया और चश्मा अब भी ज़मीन की गहराई में ही कहीं छिपा रहा। बैल्ट-कन्वेयर टनों-टन ख़ुश्क और मटमैले कंकरों को ही उठा-उठाकर दूर ले जाता रहा।

कंकरों की तह के नीचे चट्टानी दीवार में ही कहीं वह दरार थी जिसमें से बरसों पहले बड़ा और ज़ोरदार कोकबुलाक़ चश्मा निकलकर बहता था। आलिमजान और उसकी टोली के सामने अब मुख्य काम था इस दरार को ढूंढ़ना, साफ़ करना और पानी की धारा को आज़ाद करना।

दरार के ढूंढ़ लिये जाने पर ही सब कुछ निर्भर था। यह दरार वास्तव में थी कहां? यह बात पुराने से पुराने शिकारी भी, जो शिकार की तलाश में उम्रभर पहाड़ों में घूमते रहे हैं, न बता सके। बारूद से उड़ाई गई ऊपरवाली चट्टान के नीचे की सारी घाटी ही अब कोकबुलाक़ कहलाती थी।

बड़े-बूढ़ों के दिमाग़ में इस चश्मे की याद बाक़ी थी। आलिमजान बड़े सब्र से और लगातार इनसे ढेरों सवाल पूछता। इनकी कहानी और इनकी बताई हुई बातों में ताल-मेल बैठाता और इस तरह धीरे-धीरे उस जगह के नज़दीक पहुंचता जाता था, जहां चश्मे का मुंह होना चाहिये था।

इस टोली के लोग पिछले सत्रह दिन से इस चट्टानी दीवार में से अपना रास्ता बनाने में जुटे हुए थे।

ये लोग पिछले सत्रह दिनों से ख़ून-पसीना एक कर रहे थे और ऐसा लगता था कि जैसे वे सदा इसी तरह संघर्ष करते जायेंगे।

टोली तीन हिस्सों में बांट दी गई थी। टोली का एक दल उन पत्थरों को तोड़ने में लगा हुआ था जो बारूद के धमाके से भी नहीं टूटे थे और जो बेहद भारी होने की वजह से बैल्ट-कन्वेयर में डालकर किनारे पर भी नहीं पहुंचाये जा सकते थे। दूसरा दल कंकर-पत्थरों को खोदने में लगा हुआ था और वह इस तरह से नीचे जमी हुई कूड़े-करकट की तहों को

साफ़ करता जा रहा था। तीसरा दल लगातार बैल्ट-कन्वेयर को भरता जा रहा था।

बेकबूता तीसरे दल में काम कर रहा था। उसने अपना फावड़ा रखा और पसीने से तर-ब-तर चेहरे को रूमाल से साफ़ किया। रूमाल मिट्टी से लथपथ था। बेकबूता थक गया था। उसने अपनी चांद को धूप से बचाने के लिये उसपर लाल कमरबन्द बांध रखा था। इस कमरबन्द की वजह से इस साबिक़ सिपाही का चेहरा, उसके मिज़ाज के ख़िलाफ़ भुनभुनाया-सा लग रहा था। घड़ी भर आराम करने के बाद, बेकबूता ने कुछ कहना शुरू किया। बेकबूता ही वह पहला आदमी था जो आज सुबह से कुछ बोला था।

"यह बैल्ट-कन्वेयर भी ख़ूब चीज़ है!" उसने कहा, "बरबस इसके लिये अपने आप ही इज्ज़त से सिर झुक जाता है। यह अकेला ही दस आदमियों का काम करता है और तम्बाकू का दम लगाने के लिये भी कभी नहीं रुकता। मगर क्या यह दस आदमियों का ही काम करता है? देखो तो हम कुल मिलाकर तीस हैं। मगर फिर भी इसका साथ नहीं दे पाते। तीस के मुक़ाबले में यह अकेला है और फिर भी हमारा दम फूल-फूल जाता है। सुवानक़ुल, क्या ख़्याल है तुम्हारा, बिगाड़ दिया है न उसने हमारा हुलिया?"

सुवानक़ुल ने जवाब में सिर्फ़ अपना सिर ही हिलाया। वह अपना फावड़ा और भी तेजी से चला रहा था। उसके अन्दर का सजग आदमी बेकबूता की बेकार की बातों की कमी पूरी कर रहा था।

"तुम ठीक-ठाक हो, सुवानक़ुल?" बेकबूता उसे तंग करता गया। "थकान और गर्मी से तुम्हारी जीभ तालू से लगकर तो नहीं रह गई? तुम जवाब क्यों नहीं देते?"

सुवानक़ुल इस बार भी चुप रहा।

"नहीं, क़सूर इसकी जीभ का नहीं," किसी दूसरे ने बेकबूता के मज़ाक़ को जारी रखते हुए कहा, "बात कुछ दूसरी ही है। हमारे सुवानक़ुल-आग़ा काम में इस बुरी तरह जुटे हुए हैं कि अपने मुंह को भी वे बेकार ख़ाली नहीं रहने देना चाहते। जनाब अपने मुंह में शाम के खाने के लिये सेर भर दूध का दही जमा रहे हैं। इसीलिये तो बोल नहीं सकते।"

सुवानक़ुल बिल्कुल मौन साधे था, मगर यह बात उसे लग गई।

"चपर-चपर करते जाग्रो," उसने तड़ाक से जवाब दिया, मगर फावड़ा पहले की भांति चलाता रहा, "तुम्हारी ज़बान तो गाय की पूंछ से भी लम्बी है।"

अपने मज़ाक़ के जवाब में खरी-खोटी सुनकर वह दूसरा ग्रादमी तो चुप हो गया, मगर बेकबूता चुप न हुग्रा।

"यह सच है कि उसकी ज़बान लम्बी है, मगर उसका फावड़ा भी कुछ कम लम्बा नहीं है," बेकबूता ने कहा, "जहां तक मेरा सवाल है तो बेशक मुझे मज़ाक़ करना पसन्द है, मगर मैं अपनी मज़दूरी ज़बान से नहीं, फावड़े से कमाता हूं। यह फावड़ा चलाने का काम तुम मुझपर छोड़ दो, मेरे दोस्त, ग्रौर थोड़ी देर ग्राराम कर लो। सचमुच ऐसा लगता है कि जैसे थकान ग्रौर गर्मी से तुम्हारा मुंह सूख गया है। तुम थोड़ा ग्राराम करो ग्रौर मैं दोनों का काम करूंगा।"

"ज़रा सूरत तो देखो इस सूरमा की," सुवानक़ुल बड़बड़ाया, "बातें तो ऐसे करता है कि जैसे ग्रकेला ही पूरा पहाड़ ढा देगा ग्रौर कोकबुलाक़ को बाहर निकाल लेगा! वाह रे सूरमा! दो हफ़्ते हो गये हमें यहां ख़ून-पसीना एक करते हुए ग्रौर तुम्हारी बड़ी-बड़ी डींगों ग्रौर बहादुरी के कारनामों के बावजूद भी पानी की एक बूंद ग्रब तक नहीं मिली!"

बेकबूता से ग्रब कोई जवाब नहीं बन पड़ रहा था। सुवानक़ुल ने जो ताना दिया था, उसका सम्बन्ध सिर्फ़ बेकबूता से ही न था। ये शब्द ग्रालिमजान ने भी सुने ग्रौर मज़ाक़ में कहे गये ये शब्द उसके दिल में तीर की तरह जा लगे।

"हमारी नाकामयाबी का तो ग्रब सभी ज़िक्र करने लगे हैं," उसने सोचा, "दूसरी जगहों पर तो हर मिनट बड़ी तेज़ी से काम ग्रागे बढ़ रहा है ग्रौर इधर हम हैं कि बस, टनों मिट्टी ग्रौर चट्टानें ही साफ़ करते जा रहे हैं, मगर बनता-बनाता कुछ नहीं।"

वह खीझ ग्रौर ग़ुस्से से बुरी तरह बेचैन हो उठा। ज़ोर के एक झटके के साथ उसने बहुत-सी मिट्टी इकट्ठी की ग्रौर बेल्ट-कन्वेयर की तरफ़ फेंक दी। नहीं, नहीं! न तो अपने दिल में सिर उठानेवाले शकों ग्रौर न ही साथियों के ताने-बोलियों से ही हिम्मत हारेगा। इससे तो उसका इरादा ग्रौर मज़बूत होता है। वह जानता है कि उसे क्या हासिल करना है ग्रौर हर क़ीमत पर उसे हासिल करके रहेगा।

आलिमजान को पूरा यक़ीन था कि चश्मे का मुंह इसी जगह बन्द किया गया है। उन्हें उसे खोजना भर था। उसकी टोली यह काम करेगी।

फावड़े और सब्बल धड़ाधड़ चोटें लगा रहे थे। टूटते हुए पत्थर चिनगारियां छोड़ते और सीटियां बजाते हुए उछल-उछलकर हवा में तैर रहे थे।

आलिमजान के दिमाग़ में तरह-तरह के ख़्याल आ रहे थे, "दूसरी टोलियां हर सभा में अपनी नयी-नयी खोजों के बारे में रिपोर्टें देती हैं। मगर मुझे हर बार ही क्या कहना पड़ता है? यही कि इतनी मिट्टी निकाली और चट्टानें साफ़ कीं। इसका मतलब यह हुआ कि हमारा काम ढीला है। सभी तो हमें मात दिये जा रहे हैं। हमें और ज़्यादा हिम्मत करनी होगी, मेहनत करनी होगी। हम शर्म से चुपचाप सिर झुकाये नहीं रहेंगे, हरगिज़ ऐसा नहीं करेंगे।"

आलिमजान के पास शुरू के दिनों में ही कई ख़त आ चुके थे। क़ादिरोव ने लिखा था कि एक्सकेवेटर हासिल हो चुका है और स्मिर्नोव ने बांध बनाने की जगह पर सबसे अच्छे कामगारों की टोली लगा दी है। नहर खोदने का काम एक दूसरी टोली को सौंपा गया है।

"मैं आजकल बड़ी मुसीबत में फंसा हुआ हूं," उसने लिखा था, "हमारे अच्छे कामगारों में से अकेला मैं ही यहां रह गया हूं। सभी लोग या तो तुम्हारे साथ काम कर रहे हैं या करीम के साथ नहर खोद रहे हैं। तुम्हारी बला से, तुम्हें इस सब की क्या परवाह – तुम्हें तो बस एक ही धुन सवार है – कोकबुलाक़ चश्मे की तलाश। मगर मैं बिल्कुल अकेला रह गया हूं और मुझे अकेले ही यह सारा भार अपने कन्धों पर उठाना पड़ रहा है। नई ज़मीनों में से ठूंठ निकालने हैं और उन्हें साफ़ करना है। ग़ुलामों की पहाड़ी के दायीं तरफ़वाली ज़मीन के टुकड़े पर मैं काम शुरू करना चाहता था। मगर अपने लोगों से कोई क्या उम्मीद कर सकता है? यहां तो सिर्फ़ बूढ़े और बच्चे ही बाक़ी रह गये हैं और इसीलिये वे मनमानी करते हैं। वे लोग तो बड़ी नहर के साथवाली ज़मीन साफ़ करने पर तुले हुए हैं। और फिर ज़मीन में हल कब चलाया जायेगा? बुवाई का क्या होगा?"

क़ादिरोव का शिकवा-शिकायत पढ़कर आलिमजान नफ़रत से दांत पीसकर रह गया।

"हमारे अध्यक्ष के आराम के दिन अब हवा हो चुके हैं," उसने सोचा, "हमारे लोग नई ज़मीनों पर खेती करने का पक्का इरादा किये बैठे हैं। बूढ़े खूसट को अपने रंग-ढंग बदलने होंगे, वरना वह अकेला ही पीछे टापता रह जायेगा।"

दूसरा ख़त ट्रैक्टर टोली के फ़ोरमैन पोगोदिन का था। ख़त जल्दी-जल्दी में घसीटा गया था। इसमें बताया गया था कि टोली को एक नया ट्रैक्टर मिल गया है।

"अब हम बुरी से बुरी अछूती ज़मीन को ठीक कर सकते हैं। हमारे हाथ लगने की देर है कि वह भी रेशम-सी नर्म हो जायेगी," उसने लिखा था, "अब हम बढ़िया कपास भी उगायेंगे। बस, सिर्फ़ तुम जल्दी करो, कोकबुलाक़ का मुंह खोल दो। हमें पानी दो, काफ़ी पानी, बाक़ी सब कुछ हम कर लेंगे।"

कोलख़ोज़ से आनेवाली ख़बर अच्छी थी। मगर आलिमजान का दिल उदास हो गया।

उसके दोस्त यह सुनने को बेक़रार थे कि कोकबुलाक़ फिर से पानी देने लगा है। मगर उसके पास क्या था उन्हें बताने के लिये?

वह अपने काम में डूबा हुआ था। उसकी सारी ताक़त एक ही चीज़ में लगी हुई थी – ज़ोरदार, लय-ताल में बंधी हुई फावड़े की चोटें लगाने में। मगर बाहरी तौर पर वह बिल्कुल थका-मांदा न लग रहा था। वह सुबह से शाम तक लगातार काम करता जाता – सिर्फ़ दोपहर के खाने के लिये थोड़ी देर को रुकता। उसकी दृढ़ता और फुर्ती उसकी मददगार बनतीं। इन्हीं के सहारे वह इस मुश्किल ज़मीन की खुदाई में भी टोली के सभी लोगों की हिम्मत बढ़ाता और वे प्रतिदिन की निश्चित मात्रा से कहीं अधिक खुदाई करते।

तोड़ी गई चट्टानों के टुकड़ों के बीच काम करते हुए लोग न तो गाते, न मज़ाक़ करते और न ही बातों का रस लेते। घाटी की दीवारें बैल्ट-कन्वेयर की गड़गड़ाहट और पत्थरों से टकराते हुए इस्पात की टनटनाहट ही सुन पातीं। ये लोग चुपचाप और दृढ़ता से अपनी लड़ाई में लगे रहते। ये लोग इनके और पानी के बीच रास्ता रोककर खड़े हुए क़िले पर लगातार धावे बोल रहे थे।

सत्रहवां दिन था आज उनकी इस चढ़ाई का।

"कहो दोस्तो! क्या हाल है?"

आलिमजान अपने फावड़े का सहारा लेकर खड़ा हो गया, उसने नज़र ऊपर उठाई तो स्मिर्नोव को सामने खड़े देखा। वह एक ऊंची चट्टान पर टांगें चौड़ी किये खड़ा था।

"आज भी वही हाल है, मिट्टी और पत्थरों के सिवा कुछ भी हाथ नहीं लग रहा," बेकबूता ने जल्दी से जवाब दिया, "मगर जब गाना भी ख़त्म हो जाता है तो एक दिन काम भी ज़रूर ख़त्म होगा। मेरी तो यही राय है कि हमारा कोकबुलाक़ जल्द ही कलकल-छलछल करता बहने लगेगा।"

आलिमजान मुंह ऊपर को उठाये स्मिर्नोव को एकटक घूर रहा था। स्मिर्नोव ने धूप से झुलसे हुए आलिमजान के चेहरे पर अपनी दृष्टि डाली। उसे आलिमजान की आंखों में चिन्ता की झलक मिली।

स्मिर्नोव चुपचाप नीचे कूदा। धूल का एक बादल-सा उड़ा।

"हाय-हाय, यह भी ख़ूब रही!" सुवानक़ुल ने गहरी सांस ली। वह इंजीनियर के इस पागलपन से भौंचक्का-सा रह गया था। "अरे, कुछ नहीं तो कम से कम यह चार मीटर गहरी जगह तो ज़रूर होगी। तुम्हारी टांग-बांह ही टूट सकती थी।"

बेकबूता ने अपने मोटे और संजीदा दोस्त पर हिक़ारत भरी एक नज़र डाली।

"उसे अपने जैसा मत समझो," उसने कहा, "वह इंजीनियर है। काफ़ी ज़माना देखा है उसने। नहरों की खुदाई के मामले में काफ़ी मशहूर भी है। पच्चीस बरसों से सिंचाई के महकमे में काम कर रहा है। मोर्चे पर भी ख़ूब बहादुरी से लड़ा है। तुम जैसे ढीले-ढालों को सबक़ सिखाने का वह यही तरीक़ा ठीक समझता है।"

बेकबूता ने झटपट और अच्छा करारा जवाब दिया। उसे इस बात की बहुत ख़ुशी हुई। उसने अपने हाथ पर थूका और फिर से अपना फावड़ा सम्भाल लिया।

स्मिर्नोव ने आलिमजान को साथ लिया और ये दोनों आदमी इस जगह की अच्छी तरह से जांच-पड़ताल करने लगे। पानी कहीं नज़दीक ही है, इस बात के उन्हें कोई संकेत, कोई निशान न मिले। मटमैली ठोस दीवार के अलावा वहां कुछ भी न था।

सारी खुदाई को देखने-भालने के बाद वे एक समतल पत्थर पर बैठ गये। पत्थर की ऊपरी सतह चूल्हे की तरह गर्म थी। स्मिर्नोव ने अपना तम्बाकू का बटुआ निकाला, एक सिगरेट बनाई और चुपचाप आलिमजान की ओर बढ़ा दी।

दोनों सिगरेटों के कश लगाने लगे।

"मैंने कोकबुलाक़ को कभी बहते नहीं देखा। इसलिये मैं इसकी ठीक-ठीक जगह नहीं बता सकता," स्मिर्नोव ने धीरे से कहा। उसकी आंखें हवा में ग़ायब होते हुए सिगरेट के नीले धुएं पर जमी हुई थीं। "मगर सभी बातों को ध्यान में रखते हुए मैं समझता हूं कि यह चश्मा इस जगह होना चाहिये; देखते हो?" उसने घाटी की पथरीली दीवारों की तरफ़ इशारा किया। "मैं इस सारी जगह की अच्छी तरह से जांच-पड़ताल कर चुका हूं। इसी काम में मेरे घुटने भी बुरी तरह छिल गये हैं। पानी तो यहां बेतहाशा है, मगर इस चश्मे का मुंह कहीं नज़दीक ही नज़र नहीं आता। दूसरे चश्मे, हम जिन्हें खोदने में लगे हुए हैं, नीचे हैं। वे अपना पानी दूसरी जगहों से पाते हैं। कम से कम मुझे तो ऐसा ही लगता है। मेरा एक और अनुमान यह भी है कि चट्टान की इस दीवार के पीछे ज़मीन में काफ़ी गहराई पर बना हुआ कोई एक जलाशय भी ज़रूर है। और उससे जो चश्मा निकलता है, वह सिर्फ़ कोकबुलाक़ ही है। मैं तो ऐसा ही सोचता हूं। अब सिर्फ़ सवाल है उसे खोजने का।"

"सवाल को तो मैं भी जानता हूं, मगर उसे हल कैसे किया जाये?" अपने सूखे हुए होंठों को बड़ी मुश्किल से हिलाते हुए आलिमजान ने पूछा।

स्मिर्नोव ने उसके चेहरे पर एक तिरछी नज़र डाली।

"अगर तुम्हें कोकबुलाक़ न मिला तो हम यह सारी की सारी दीवार ही उड़ा डालेंगे और इस तरह पानी के बाहर आने का रास्ता बना लेंगे। मगर है यह ख़तरे का मामला। पौ बारह भी हो सकते हैं और तीन काने भी। बेहतर तो यही है कि बारूद के बिना ही काम चल जाये।"

"जानते हो मैं क्या सोचता हूं? जिस समय कोकबुलाक़ को बारूद से उड़ाया गया था, हो सकता है कि उस वक़्त चट्टानें इस बुरी तरह से गड़बड़ हो गई हों कि चश्मे का मुंह न सिर्फ़ दब ही गया हो, बल्कि हमेशा के लिये रुक गया हो।"

स्मिर्नोव ने अपनी अनुभवी और समझदार आंखों से उस दीवार को एक बार फिर से देखा और सिर हिला दिया।

"नहीं," उसने बड़े विश्वास के साथ कहा, "नहीं, यहां इतनी तबदीली नहीं हो सकती। इसके लिये तो उन्हें सारी की सारी दीवार को ही बारूद से उड़ाना पड़ता, मगर तुम तो अपनी आंखों से देख सकते हो कि यह दीवार बिल्कुल नई जैसी लग रही है। हज़ारों-हज़ार बरसों में भी इसमें कोई तबदीली नहीं हुई। तुम ठीक रास्ते पर चल रहे हो। चश्मे का मुंह यहीं कहीं है।"

स्मिर्नोव के शब्दों से आलिमजान की हिम्मत बंधी। पिछले सोलह दिनों से वह अपने दिल-दिमाग़ पर एक बोझ-सा महसूस कर रहा था। इन दिनों में उसने बेहद सिगरेटें फूंक डाली थीं।

"हां, तो तुम मुझे अपना हाल-चाल क्यों नहीं सुनाते?" आलिमजान ने सावधानी से पूछा। "नीचे कैसे काम चल रहा है? बांध का क्या हाल है?"

"बांध तो जल्दी ही बनने लगेगा। पेटा तो क़रीब-क़रीब तैयार हो चुका है," स्मिर्नोव ने जवाब दिया। "नहर भी लगभग तैयार हो चुकी है। उम्रज़ाक़-अता और उनके साथी उन ज़मीनों को साफ़ करने में लगे हुए हैं जिनकी आगे चलकर सिंचाई की जायेगी। उन्होंने तो हल भी चलाने शुरू कर दिये हैं।"

"करीम की कोमसोमोल टोली कैसा काम कर रही है?"

"करीम तो सबसे बढ़िया काम करनेवालों में से एक है। उसकी कोमसोमोल टोली के साथी भी उसी जैसे हैं। नहर की खुदाई में और ग़ुलामों की पहाड़ी पर भी उन्होंने ख़ूब कमाल का काम किया है। वह जगह तो बिल्कुल साफ़ कर दी गई है और मुझे यही लगता है कि हमारी उम्मीदों पर पानी नहीं फिरेगा।"

स्मिर्नोव ने अपनी एक भौंह सिकोड़ी और मुस्करा दिया।

"मगर तुम्हारा काम ज़्यादा दिलचस्प है। यह सही है कि तुम्हें बहुत-सी कठिनाइयों का सामना करना पड़ रहा है, मगर क्या तुमने कभी ऐसे सोवियत लोगों के बारे में भी सुना है जो अपने लिये आसान रास्ता चाहते हैं? मुझे पूरा यक़ीन है कि तुम आज जो मुसीबतें झेल रहे हो, जल्द ही तुम्हें उनका बहुत अच्छा फल भी मिलेगा। मैंने तो कभी एक मिनट के

लिये भी यह नहीं सोचा, आलिमजान, कि तुम कोकबुलाक़ को फिर से बहाल न कर सकोगे। मेरे दिल में कभी भूलकर भी ऐसा सन्देह पैदा नहीं हुआ। तुम ज़रूर कोकबुलाक़ की तलाश कर लोगे और वह भी जल्द ही। मैं समझता हूं कि यह जगह आज रात तक साफ़ हो जायेगी। कल सुबह मैं फिर यहां आऊंगा और तब हम ख़ूब अच्छी तरह से इसकी जांच-पड़ताल करेंगे। कोकबुलाक़ तुम्हें धोखा नहीं दे सकता, तुम्हारे हाथों से बचकर निकल नहीं सकता। ऐसा बिल्कुल मुमकिन नहीं। वह ठीक यहीं कहीं है।"

"शुक्रिया, इवान निकीतिच! हिम्मत बढ़ाने और दिलासा देने के लिये शुक्रिया," आलिमजान ने जोश में आकर कहा, "यक़ीन तो हमें भी है अपनी जीत का। दूसरी टोलियां बेशक अपना काम जल्दी ख़त्म कर लें, हम कुछ दिनों तक और मेहनत करते रहेंगे, मगर अपने कोलख़ोज़ में ख़ाली हाथ न लौटेंगे।"

"तुम लोगों का क्या ख़्याल है, दोस्तो?" उसने अपने साथियों को पुकारकर पूछा।

"वही, जो तुम्हारा है!" सभी ने मिलकर जवाब दिया।

"घाटी में पानी इतनी तेज़ी से बहेगा कि कोई तेज़ रफ़्तार घोड़ा भी उसकी ताब न ला सकेगा," जोश में अपने शब्दों को जल्दी-जल्दी उगलते हुए बेकबूता ने कहा। उसके अन्दाज़ में मज़ाक़ भी था और गम्भीरता भी। "मैं ठीक कहता हूं न? हां, बिल्कुल ठीक कहता हूं। और जब यह पानी कलकल-छलछल करता हुआ कोलख़ोज़ों की नहरों में बहेगा तो हमारे लोग कहेंगे कि सावधान! कोकबुलाक़ के सूरमा जीत के डंके बजाते हुए घर लौट रहे हैं!"

"हां, ऐसा ही होगा। मैं दिल से तुम लोगों की कामयाबी चाहता हूं। अच्छा, अब मैं जा रहा हूं," स्मिर्नोव ने उठते हुए कहा। उसने सभी से हाथ मिलाया और पहाड़ी से नीचे उतरने लगा।

११

दोपहर तक पत्थर और कंकर साफ़ हो गये। फावड़े अब ज़्यादा आसानी से चलने लगे। मिट्टी ज़रा भूरी-भूरी थी। उसमें छोटे-छोटे कंकर मिले हुए थे। मगर धरती में रेत का अभी भी नाम-निशान न था। इसका

मतलब तो यही होता था कि जो तह साफ़ की गई थी वह नदी की स्वाभाविक तह न थी। बासमचियों के दल के बारूदी धमाके से जो पत्थर-कंकर वहां जमा हो गये थे, ये वही थे।

आलिमजान को जब इस बात का विश्वास हो गया तो उसने अपनी टोली के काम का पुनर्गठन किया। बैल्ट-कन्वेयर को भरने का काम उसने सात आदमियों को सौंपा और बाक़ी सभी को छोटे-छोटे टुकड़ों की खुदाई के काम में लगा दिया।

आलिमजान ने सोचा कि इस तरह काम करते हुए इस बात की बहुत सम्भावना है कि कोई न कोई आदमी चश्मे के कुछ चिन्ह, कुछ निशान ढूंढ़ ले। इन निशानों में बढ़िया चमकते हुए कंकरों और सफ़ेद धुली हुई रेत आदि की गिनती की जा सकती थी।

उसने अपने लिये जो जगह चुनी, वह ठीक बीच में थी।

आलिमजान ने फावड़े से वह जगह खोदी, बेकबूता ने वह मिट्टी सुवानक़ुल की तरफ़ ढकेल दी। सुवानक़ुल बड़ी मेहनत और इतमीनान से काम कर रहा था। उसने वह मिट्टी बैल्ट-कन्वेयर में भर दी।

दो घण्टे बाद आलिमजान घुटनों तक गहरे एक गड्ढे में खड़ा था। गड्ढे की चौड़ाई लगभग डेढ़ मीटर थी। उसके साथियों ने भी उसके साथ ही खुदाई शुरू की थी, मगर आलिमजान बाज़ी मार ले गया था। उसके काम की रफ़्तार में ज़रा भी कमी न आई थी। जो रफ़्तार शुरू में थी, वही अब भी थी।

अचानक ही फावड़ा चलना बन्द हो गया। बेकबूता ने आलिमजान पर प्रश्न भरी दृष्टि डाली।

पूरे ज़ोर से अपना फावड़ा ताने आलिमजान जड़वत खड़ा था। उसकी आंखें किसी चीज़ को घूर रही थीं। धीरे-धीरे और सावधानी से उसने अपना फावड़ा नीचे किया और उसे एक तरफ़ रख दिया। अब वह नीचे झुककर हाथों से मिट्टी खोदने लगा, छोटे-छोटे स्याही-मायल समतल पत्थर निकालने लगा।

"क्या मिल गया तुम्हें?" बेकबूता चिल्लाया और गड्ढे में कूद गया।

"सुराही!" आलिमजान धीरे से बड़बड़ाया। उसकी आवाज़ उत्तेजना के कारण कांप रही थी। "टूटी सुराही। तुम इसका मतलब समझते हो?"

"समझता हूं," बेकबूता फुसफुसाया। उसकी आवाज़ में भी उत्तेजना

थी। दोनों हाथों से वह भी आलिमजान की भांति, बड़ी सावधानी से मिट्टी खोदने और टूटी सुराही के टुकड़े बाहर निकालने लगा। "मगर यह भी तो हो सकता है..."

"नहीं, और कुछ भी नहीं हो सकता," आलिमजान ने एक अजीब और शान्त-सी आवाज़ में जवाब दिया। "कोई अपनी सुराही चश्मे के पास छोड़ गया और वह धमाका होने पर मिट्टी के नीचे दब गयी, बस।"

"तो क्या... तो क्या चश्मा मिल गया?" बेकबूता ने पहले की भांति ही फुसफुसाकर पूछा। उसकी आंखों में आशा की चमक थी और वे आलिमजान के चेहरे पर जमी हुई थीं।

सुवानक़ुल तेज़ी से उनकी तरफ़ बढ़ा और चिल्ला उठा:

"मिल गया! मिल गया!"

सभी भागते हुए आये और गड्ढे के गिर्द जमा हो गये। अपने फ़ोरमैन के आदेश के बिना अब सब लोग उसी जगह को खोदने लगे जहां से आलिमजान को सुराही मिली थी। इन सब के जिस्म में एक नई फुर्ती आ गई थी मानो इन्होंने चश्मे का पानी पी लिया हो – जैसे कि अमृत पी लेने के बाद इनकी काम करने की शक्ति दस गुना बढ़ गयी हो, सो भी दिन भर की कड़ी मेहनत के बाद। खोदी हुई मिट्टी बैल्ट-कन्वेयर द्वारा किनारे पर पहुंचती रही।

आख़िरकार चश्मे का पुराना पेटा दिखाई दिया – पानी से धुले और चमकते हुए कंकरों की एक मोटी तह दिखाई दी। अब तो कोई शक बाक़ी न रह गया था – उनकी लम्बी और कड़ी मेहनत का फल मिलनेवाला था।

कोकबुलाक़ ढूंढ़ लिया गया था – यह वह मशहूर चश्मा था जिसे बासमचियों ने मेहनतकशों से छीन लिया था।

लोग चुप्पी साधे अपने काम में जुटे हुए थे। उनकी नैतिक और शारीरिक शक्तियां पूरी तरह इसी काम में लगी हुई थीं जिसपर पूर्ण अधिकार पाने के लिये वे बड़े सब्र के साथ जुटे हुए थे। अगर कोई आवाज़ सुनाई देती थी तो वह थी तीस मज़बूत आदमियों के ज़ोर-ज़ोर से सांस लेने की आवाज़ और या फिर उनकी गैंतियों और सब्बलों की आवाज़।

मिट्टी का आख़िरी ढेर भी बेल्ट-कन्वेयर ने साफ़ कर दिया। सुवानक़ुल ने बड़ी एहतियात से वह बाक़ी मिट्टी भी हटा दी जो मोटी बालू के साथ मिली हुई कंकरों की तह पर जमी थी। चश्मे का पेटा बिलकुल साफ़ दिखाई

देने लगा। यह पहाड़ी नदी अपने साथ हज़ारों दूसरे चश्मों को बहाती हुई घाटी में जा पहुंचती थी। इस वक़्त इसका पेटा सूखा था। शुरू में तो इससे किसी को कोई हैरानी न हुई। वे सभी जानते थे कि कोकबुलाक़ चट्टान की दीवार में से एक धारा के रूप में बाहर निकलता था और कंकरों तथा रेत की तह में से नीचे से बाहर नहीं आता था। इसलिये इसका तो सीधा-सादा यही मतलब होता था कि चश्मे के मुंह की तलाश दीवार में करनी होगी।

आलिमजान और उसके साथियों ने लम्बी मटमैली दीवार को घूरा। दीवार में जगह-जगह दरारें, कटाव और तहें सी थीं। हज़ारों साल तक हवा, सूरज, बारिश और ठण्ड ने चट्टान के मस्तक पर अपने निशान छोड़े थे। एक दरार जो ऊपर से बहुत बारीक थी और बड़ी मुश्किल से दिखाई देती थी, नीचे आती-आती चौड़ी हो गई थी। नीचे पहुंचते तक यह लगभग आध मीटर चौड़ी हो गई थी। यह दरार फिर एक ठोस तह के सामने आ जाने से अचानक ही रुक गई थी।

दरार मिट्टी और कंकरों-पत्थरों से भर गई थी। बरसों तक इसी तरह भरी रहने से वह असली चट्टान की तरह ठोस और मज़बूत हो गई थी।

सभी लोग चुपचाप इसी दरार को देखते रहे।

"मेरे ख़्याल में तो यही कोकबुलाक़ है," सुवानकुल ने ख़ामोशी तोड़ी।

वह अपनी ही आवाज़ से चौंक उठा था।

"हां, यही है कोकबुलाक़," आलिमजान ने कहा।

आलिमजान ने दरार के अन्दर भरे हुए रंग-बिरंगे पत्थरों में से एक चमकदार लाल पत्थर को ज़ोर से पकड़ लिया। यह पत्थर थोड़ा-सा बाहर को निकला हुआ था। पूरी ताक़त से उसने उसे हिलाया। मगर पत्थर टस से मस न हुआ।

"बेकबूता, मुझे एक सब्बल देना!"

आलिमजान ज़ोर-ज़ोर की चोटें लगाकर उस दरार को साफ़ करने लगा। सभी लोग सांस रोककर आलिमजान की तरफ़ देख रहे थे। वह एक के बाद एक चोट लगाता जा रहा था। वह आख़िरी अड़चन, आख़िरी रुकावट साफ़ कर रहा था। उसने एक और चोट लगाई। मगर क्या यह आख़िरी चोट थी? क्या कोकबलाक़ बरसों के बन्धन तोड़कर बाहर निकल आयेगा? क्या वह कलकल-छलछल करता, लहराता, चमकता और एक

असीम झालर का सा रूप धारण करता हुआ घाटी में पहुंच जायेगा और उसके बाद खेतों में?

आलिमजान तनी हुई पीठ से और दांत भींचकर चट्टान पर ज़ोरदार चोटें लगाता रहा। चटाख की आवाज़ के साथ उस दरार के नीचेवाले कोने से कंकरों-पत्थरों की एक ठोस तह कटकर अलग हो गई और आलिमजान के पैरों के पास आ गिरी। आलिमजान ने उसे उठाकर ध्यान से देखा। अपने सन्देह को विश्वास में बदलने के लिये उसने उस सुराख़ में भी हाथ डाला जहां से वह तह निकलकर बाहर आई थी।

"यही है! यही है कोकबुलाक़!" वह ज़ोर से चिल्लाया और सीधे होकर उसने अपने मुंह से पसीना पोंछा। "इस दरार की ज़मीन ऐसी चिकनी और समतल है जैसी कि हाथ की हथेली! पानी ने ही इसे रगड़-रगड़कर ऐसा सपाट कर दिया है।"

बेकबूता अब इन्तज़ार न कर सकता था। उसने धीरे से, मगर दृढ़ता के साथ आलिमजान को एक तरफ़ कर दिया, उसका सब्बल उठाया और काम में जुट गया।

आलिमजान बिल्कुल थक-टूटकर एक पत्थर पर बैठ गया। इस वक़्त वह अपने अन्दर क्या अनुभव कर रहा था, उसे वह बयान न कर सकता था – यह बेहद ख़ुशी की अनुभूति थी या बेहद थकान की। वे जिस ध्येय के लिये संघर्ष कर रहे थे, उसकी पूर्ति होती दिखाई दे रही थी, मंज़िल आंखों के सामने नज़र आ रही थी।

"अरे! यह तो अंधेरा भी होने लगा है!" उसने हैरान होकर कहा। "देखो तो, दिन कितनी जल्दी ख़त्म हो गया है! मगर पानी तो अभी तक नहीं मिला। क्या रुकावट हो सकती है इसके रास्ते में? उसे तो इसने कभी का दूर कर लिया होता। यहां तो पानी का दबाव बहुत ही ज़्यादा होगा। तो फिर मुसीबत क्या है?"

आलिमजान घुटनों पर अपनी कोहनियां टिकाये बैठा था। वह अपनी नज़र घुमाकर पत्थर की दीवार के अन्दर झांकने की कोशिश कर रहा था। लड़ाई के दिनों में भी वह दुश्मन के पिल-बक्सों को इसी ढंग से देखा करता था। उसके दस्ते को इन्हीं पर हमला जो करना होता था।

"आलिमजान-आग़ा, ए आलिमजान-आग़ा!" नीचे से किसी ने उसे पुकारा।

"यह कोलख़ोज़ की सेक्रेट्री, मेहरी है," आलिमजान ने उसकी आवाज़ पहचान ली, "आख़िर उसे मेरी किसलिये ज़रूरत पड़ गई है?"

आलिमजान उठा और मुंह के आगे हाथ रखकर ज़ोर से चिल्लाया:

"क्या बात है?"

"नीचे आओ! एक सभा है, हम तुम्हारा इन्तज़ार कर रहे हैं!" मेहरी की आवाज़ अब ज़्यादा नज़दीक आ गई थी।

सचमुच ही अब तक तो काम ख़त्म करके उन्हें नीचे चले जाना चाहिये था। बाक़ी टोलियों के लोग तो नीचे बैठे हुए शायद पुलाव पर हाथ साफ़ कर रहे होंगे।

"साथियो, अब बस करो!" आलिमजान ने अपनी टोली के लोगों से कहा। "आज तुम लोगों ने बहुत अच्छा काम किया है। अब तुम्हें आराम करना चाहिये।"

आलिमजान ने अपनी क़मीज़ उठाई। यह क़मीज़ आज उसने सुबह ही उतार फेंकी थी।

१२

आलिमजान जब तम्बू की तरफ़ जा रहा था, तो काफ़ी रात हो गई थी। यह दक्षिणी रात थी, घनी-काली। आकाश में बड़े-बड़े सितारे चमक रहे थे और उनकी रोशनी स्थिर-सी थी।

आलिमजान को नीचे घाटी में जलते हुए अलाव दिखायी दिये। उसे आग की लपटें दिखायी दीं और उनके आसपास लोगों की आकृतियां भी। ऊंचाई पर ये अलाव एक दूसरे के अधिक नज़दीक दिखायी दे रहे थे। ये एक दूसरे के और अधिक पास होते जा रहे थे और मानो उड़ने को तैयार-से नज़र आ रहे थे। दूरी पर जाकर तो वे ज्वालाओं का एक सूत्र-सा बन गये थे जो दूर-दूर होती हुई आंखों से ओझल होती जाती थीं। ये ज्वालायें उस जगह जाकर आंखों से ओझल होती थीं, जहां घाटी एकदम ही कोकबुलाक़ की तरफ़ घूम जाती थी।

आलिमजान पहाड़ी की चोटी पर पहुंच गया। तम्बू के सामने की जगह खचाखच भरी हुई थी। एक छोटी-सी और पतले-पतले पायोंवाली मेज़ वहां रख दी गयी थी और सिर्फ़ एक ही लैम्प जल रहा था। बाक़ी हर चीज़ अन्धकार की चादर में लिपटी हुई थी।

तीन आदमी – जूराबायेव, आयक़िज़ और स्मिर्नोव – सभा का सभापतित्व कर रहे थे। वे किसी मज़ेदार बातचीत में लगे हुए थे जबकि स्मिर्नोव उनकी बातें सुनता हुआ भी अंधेरे में घूर-घूरकर देख रहा था मानो किसी के आने का इन्तज़ार कर रहा हो।

"क्या मेरा इन्तज़ार हो रहा है?" आलिमजान ने सोचा। "तब तो बड़ी भद्दी बात है।"

किसी को अपना इन्तज़ार करवाना उसे अच्छा नहीं लगता था। उसे अपने आप पर ग़ुस्सा आया, उसने अपने क़दम तेज़ कर दिये और लोगों के एक और दल के पास, प्रकाश के घेरे से काफ़ी दूरी पर ही बैठ गया।

लोग तो उसे अन्धेरे में भी फ़ौरन पहचान गये। फिर क्या था – सवालों की झड़ी लग गई, तरह-तरह के मज़ाक़ होने लगे:

"हां तो, क्या बना तुम्हारे कोकबुलाक़ का?"

"पानी पर किया हुआ जादू-टोना अभी तक टूटा या नहीं?"

एक लम्बा दुबला-पतला युवक, जो चुस्त धारीदार रेशमी चोग़ा और सिर पर कढ़ी हुई टोपी पहने था, "ए, आलिमजान-आग़ा!" चिल्लाया, "तुम्हें ज़रा अच्छी तरह से कान लगाकर सुनना चाहिये! ज़मीन से कान लगाना और सुनना चाहिये। जहां तुम्हें कलकल-छलछल की आवाज़ सुनाई दे, वहीं खुदाई करना ठीक होगा।"

"मेरे ख़्याल में तो यह 'अक्तूबर' कोलख़ोज़ का सेक्रेट्री है," आलिमजान ने सोचा। उसने अंधेरे में उस युवक का चेहरा पहचानने और साथ ही कोई चुभता हुआ और मज़ेदार जवाब सोचने की भी कोशिश की।

तभी किसी दूसरे आदमी ने आलिमजान की हिमायत की।

"यह तो सभी जानते हैं कि आलिमजान-आग़ा शराब नहीं पीते हैं," उसने कहा, "इसलिये छलछलानेवाली किसी चीज़ से इनकी जान-पहचान नहीं हो सकती। इस मैदान के खिलाड़ी हो तुम्हीं, बाबाजान! कोकबुलाक़ की खोज करने के लिये तुम्हें ही भेजा जाना चाहिये था। छलछलानेवाली हर चीज़ तुम्हें ज़्यादा अच्छी तरह सुनाई देती है।"

सभी लोग ठठाकर हंस पड़े। जवाब ख़ूब मज़ेदार था। नहले पर दहला।

बाबाजान की तो यह बदक़िस्मती ही थी कि छेड़छाड़ कर बैठा। उसे मुंह की खानी पड़ी। अब वह चुपचाप अंधेरे में हो गया। उसे तो अपनी नई रेशमी पोशाक का भी ध्यान न रहा और लोगों के एक और दल के

पीछे ज़मीन पर ही जा बैठा। वह लोगों के ताने-बोलियों से बचना चाहता था।

ज़ूराबायेव ने जब अचानक ही ज़ोरों का क़हक़हा सुना तो उसने आयक़िज़ से बातचीत बन्द कर दी और नज़र ऊपर उठाकर जिज्ञासा से इधर-उधर देखने लगा कि क्या मज़ाक़ हुआ था?

स्मिर्नोव खड़ा हुआ।

"तो साथियो, अब हम सभा शुरू करते हैं," उसने कहा। "हमें जिसका इन्तज़ार करना हो—ऐसा तो अब कोई बाक़ी नहीं रहा। सभा में जिन्हें हिस्सा लेना था, वे सभी आ चुके हैं। मैं एक बार फिर दोहराता हूं," आयक़िज़ की प्रश्न भरी दृष्टि का जवाब देते हुए उसने कहा, "सभी लोग आ चुके हैं। सबसे पहले ज़िला पार्टी कमेटी के सेक्रेट्री साथी ज़ूराबायेव आपके सामने अपने विचार रखेंगे।"

"प्यारे दोस्तो," ज़ूराबायेव ने कहा। "मैं आपको एक बढ़िया ख़ुश-ख़बरी सुनाने आया हूं। कुछ ही वक़्त पहले हमने सरकार से इल्तिजा की थी कि वह आलतिनसाय की ज़मीनों को खेती के लायक़ बनाने के लिये हमारी मदद करे। हमने बहुत ही मामूली-सी मदद की इल्तिजा की थी। हम लोग जिस काम को अपने हाथ में ले रहे थे उसकी सही शक्ल और यह भी नहीं समझ पाये थे कि उसका दायरा कितना बड़ा है। सरकार ने हमें हमारी ग़लती बताई है। सरकार ने एक प्रस्ताव पास किया है जिसमें कहा गया है कि चट्टानी इलाक़ों के रहनेवालों को पहाड़ के दामनवाले इलाक़ों में बसाने की मंज़िल की यह पहली सीढ़ी है। हमें बहुत-सा रुपया और बहुत-सी मशीनरी दी गई है ताकि हम अपना निर्माण-कार्य तेज़ी से और अच्छी तरह पूरा कर सकें। सरकार का प्रस्ताव हमारी ऊंची से ऊंची आशाओं से भी बढ़कर है। मैं अब यह प्रस्ताव आपको पढ़कर सुनाता हूं।"

ज़ूराबायेव ने अपना थैला खोला, प्रस्ताव निकाला और ऊंची आवाज़ में इसे शुरू से आख़िर तक पढ़ा।

सभी लोग सांस रोककर बैठे रहे, वे ज़ूराबायेव का एक-एक शब्द सुनना चाहते थे।

अचानक ही एक लड़की की बारीक-सी आवाज़ उस सन्नाटे में गूंज गई। आवाज़ डरी-डरी-सी भी थी और ख़ुशी से भरी हुई भी:

"ओह शुक्रिया, बहुत शुक्रिया!"

ज़ोरों से तालियों की गड़गड़ाहट हुई और लोग ऊंची आवाज़ में वाह-वाह कर उठे। सभी लोग उठे और एक दूसरे से गले मिलने लगे। फिर तो वह शोर हुआ कि कान पड़ी आवाज़ सुनाई न दी। ख़ुशी के इसी हल्ले-गुल्ले में एक ऊंचा नारा सुनाई दिया –

"कम्युनिस्ट पार्टी ज़िन्दाबाद! हमारी सरकार ज़िन्दाबाद!"

यह ख़ुशख़बरी सुनकर लोगों के मन पर जो पहली तूफ़ानी प्रतिक्रिया हुई थी, उसका प्रभाव अब कम होने लगा। धीरे-धीरे अब सभी लोग फिर से अपनी-अपनी जगह पर बैठ गये। मगर स्मिर्नोव और आयक़िज़ की बेहद कोशिश के बावजूद पहले की सी ख़ामोशी न लौट सकी और काम-काज का उचित वातावरण न बन सका।

जब कुछ ख़ामोशी हुई तो जूराबायेव ने सरकारी प्रस्ताव को अधिक विस्तार के साथ लोगों को समझाया।

चश्मों की खुदाई, बांध-निर्माण और नहर की खुदाई। इन तीनों कामों को पूरा करने की अलग-अलग तारीख़ें तय कर दी गई थीं। जलाशय का आकार और भावी बिजलीघर से पैदा की जानेवाली बिजली की शक्ति का लक्ष्य भी निर्धारित कर दिया गया था। प्रस्ताव की अंतिम धाराओं में सिंचाई की सुविधा प्राप्त करनेवाली ज़मीनों के क्षेत्र की चर्चा भी की गई थी और कोलख़ोज़ की एक नयी बस्ती के निर्माण की तिथि भी बताई गई थी। प्रस्ताव में पहाड़ी लोगों को सिंचाई की सुविधा प्राप्त करनेवाली नई ज़मीनों में बसाने की सभी हिदायतें विस्तारपूर्वक दी गई थीं। आलतिनसाय के सभी कोलख़ोज़ों को जनतन्त्र के कपास उगानेवाले कोलख़ोज़ मान लिया गया था।

जूराबायेव ने जब अपना भाषण ख़त्म किया तो ख़ामोशी छाई हुई थी। लोगों ने जिन सवालों की चर्चा की थी, सभाओं में और अपने ख़ाली समय में जिन बातों पर विचार किया था, अब वे सभी बातें, सभी विचार, एक ठोस प्रस्ताव का रूप ले चुके थे, अब उन्हें अमली शक्ल दी जा रही थी। अब ये तमाम चीज़ें एक क़ानून का रूप धारण कर चुकी थीं। वह एक ऐसा प्रस्ताव था, जिसको निश्चित वक़्त पर पूरा करना था ताकि बांध के पीछे एक बड़ा जलाशय बनकर तैयार हो जाये, ताकि एक बड़े दर्पण की भांति उसमें सूर्य की किरणें प्रतिबिम्बित हो सकें, ताकि खेतों

में कपास का सागर लहरा सके, ताकि बिजली के तारों से शक्ति हासिल करके मशीनें चल सकें, लोगों के घर जगमगा सकें, गर्माये जा सकें।

"मेरे दोस्तो!" जूराबायेव ने कहा, "हम लोग शेख़चिल्ली के सपनों से वाक़िफ़ हैं। बीते ज़माने में हमारे लोगों की प्यारी से प्यारी आशायें भी केवल सपने बनकर रह जाती थीं। वे कभी भी सचाई न पाती थीं, क्योंकि बालू की दीवारों के सहारे कोई पक्की इमारत खड़ी नहीं की जा सकती। मगर आज हम लोगों के सपने सिर्फ़ सपने ही नहीं रह गये, वे हक़ीक़त और सचाई बन गये हैं। हमारी सरकार लोगों की तमन्नाओं और चाहों की तरफ़ पूरा-पूरा ध्यान देती है। सोवियत भूमि में आम जनता के सपने मज़बूत क़ानूनी शक्ल ले रहे हैं और बड़े ढंग से उन्हें अमली जामा पहनाया जा रहा है।

"सदियों तक क़िज़िलक़ुम की रेत उन खेतों की तरफ़ आती रही, उनमें फैलती रही, जहां आदमी हल चलाता था। मगर फिर सोवियत लोगों ने उस रेत से कहा कि रुक जाओ! और वह रुक गई। इतना ही नहीं, सोवियत लोगों ने दुश्मन को पीछे धकेलना शुरू किया और क़िज़िलक़ुम पीछे हटने लगा।

"यह छोटा-सा पुर्ज़ा," जूराबायेव ने काग़ज़ को ऊपर उठाकर हिलाया, "अपने में वह शानदार चीज़ छिपाये है जो हमने पहले कभी नहीं जानी थी।

"मेरे दोस्तो! आलतिनसाय में हम अब पहली बार कपास उगायेंगे।"

इसके बाद कोलख़ोज़ों के अध्यक्ष, टोलियों के फ़ोरमैन, टीमों के अगुआ बारी-बारी मंच पर आये। उन सभी ने यह चर्चा की कि किस तरह कम से कम वक़्त में काम को पूरा किया जा सकता है। सबका यही ख़्याल था कि अगले चार दिनों में बाक़ी सारा काम पूरा हो जायेगा।

"अक्तूबर" कोलख़ोज़ का अध्यक्ष अपनी लहराती हुई लाल दाढ़ी को थपथपाता रहा। बहुत सोच-विचार के बाद उसने इस बात की घोषणा की कि उसके विभाग का काम सबसे अधिक मुश्किल है। और यह कि उसके लिये चार दिन काफ़ी न होंगे।

"आप लोग तो यह जानते ही हैं कि जिस ज़मीन पर हमें काम करना पड़ रहा है—वह ठोस चट्टान के सिवा कुछ भी नहीं," उसने शिकायती लहजे में कहा और सभा के दूसरे सदस्यों के चेहरों पर चालाकी उड़ती-सी भरी

नज़र दौड़ाई। "करीम को ही ले लीजिये। उसके ज़िम्मे लगाई गई ज़मीन तो मक्खन से भी ज़्यादा नरम है। ऐसी ज़मीन पर काम करना तो ख़ैर बात ही दूसरी है..."

मगर लोगों ने उसे अपनी बात पूरी करने का मौक़ा नहीं दिया। लोगों ने खीझ और ग़ुस्से से भरी आवाज़ें लगाईं और इस चालाक बूढ़े को चुप करा दिया।

"ज़रा देखो तो सही इसे! बेचारा पहाड़ों के पहाड़ खोद चुका है। और अब गिड़गिड़ाने लगा है!" किसी ने व्यंग्य किया।

"तुम्हारी और तुम्हारे कोलख़ोज़ की बहादुरी तो हम तब मानते जब कोकबुलाक़ को खोद निकालते! नानी याद आ जाती तुम लोगों को! यह तो आलिमजान ही है जो पहले ही दिन से ठोस चट्टानों से निपट रहा है!"

"ओह नहीं साथियो, यह हम लोगों को बना रहा है! इस वक़्त आंसू बहा रहा है, मगर कल ख़ुशी से उछलता-कूदता आयेगा और इस बात का एलान करेगा कि मेरा काम पूरा हो चुका! बड़ा घाघ है, पूरा घुटा हुआ है!"

"बूढ़ा घाघ" बड़बड़ाता रहा, शिकायत करता रहा। मगर अन्त में यह मान गया कि चार दिन काफ़ी हैं। उसने यह भी कहा कि वह तो तीन दिन में ही अपने काम के ख़त्म होने की रिपोर्ट कर देगा।

"यह हुई न बात! यह है शराफ़त का ढंग!" बहुत-सी आवाज़ें एक साथ सुनाई दीं। "और अब ज़रा कोमसोमोल की टोली के लोग अपना हाल-चाल सुनायें। कहां है कोमसोमोल टोली का फ़ोरमैन? वह चुपचाप क्यों बैठा है?"

कोमसोमोल टोली का फ़ोरमैन, करीम, चुप रहने का कोई इरादा न रखता था। अपने अच्छे स्वभाव के अनुसार वह मुस्कराता हुआ मंच की तरफ़ बढ़ गया। जब वह बोलने लगा तो उसके झाग जैसे सफ़ेद दांत चमचम करने लगे।

"नहर का काम तो बहुत-सा बाक़ी पड़ा है," उसने कहा, "अगर हम अपनी मामूली रफ़्तार से चलते रहें, तो सात-आठ दिन और लटकते रहेंगे। मगर साथी ज़ूराबायेव की बातें सुनने के बाद हम लोगों ने एड़ी-चोटी का ज़ोर लगा देने का फ़ैसला कर लिया है। हम अपनी सारी शक्ति

बटोरकर सात दिन के बजाय तीन दिनों में ही नहर को पूरा कर डालेंगे। और यह काम भी बढ़िया होगा! इसके अलावा..."

उसकी आवाज़ ज़रा मद्धिम पड़ गई।

"...इसके अलावा मेरे कामसोमोलवालों ने मुझे कोकबुलाक़ की टोली को चुनौती देने का हक़ भी दिया है। अपनी टोली की तरफ़ से मैं कोकबुलाक़ की टोली के फ़ोरमैन को तीन दिन में काम ख़त्म करने की चुनौती देता हूं।" उसने इधर-उधर नज़र दौड़ाकर आलिमजान की तलाश की और फिर कहा, "हां, अगर आलिमजान-आग़ा को मंज़ूर हो तो।"

"मुझे मंज़ूर है," आलिमजान ने जवाब दिया।

सभा रात को बहुत देर तक चलती रही। ज़ूराबायेव शहर लौट गया। बाक़ी सब लोग भी चले गये और रह गये सिर्फ़ स्मिर्नोव, आयक़िज़ और आलिमजान। कोकबुलाक़ इनके दिल-दिमाग़ पर छाया हुआ था और ये तीनों अभी भी उसी की ही बातें कर रहे थे।

"मेरी टोली भी हार तो मानने से रही," आलिमजान ने ज़ोर देकर कहा, "चाहे कुछ भी क्यों न हो जाये, पानी तो हम निकालकर ही रहेंगे।"

उसने बड़े विश्वास के साथ अपने दोस्तों पर नज़र डाली। उसे यक़ीन था कि वह उनका समर्थन तो पा ही जायेगा। मगर उसे बेहद निराशा हुई।

"और बुवाई का काम कौन करेगा?" आयक़िज़ ने बिगड़ते हुए पूछा।

आलिमजान को इस सवाल से परेशानी हुई – उसने कंधे झटक दिये।

"बुवाई, तो इसमें क्या है... शुरू में तो वे हमारे बिना भी जैसे-तैसे काम चला लेंगे। क़ादिरोव..."

आयक़िज़ ने बीच ही में टोक दिया। उसकी आवाज़ अब पहले से भी अधिक कटु थी।

"बुवाई का काम क़ादिरोव क्या करेगा? जिस ढंग से तुम बात कर रहे हो, उससे तो ऐसा लगता है कि जैसे क़ादिरोव को बिलकुल जानते ही नहीं हो। पहली बार कपास बोई जा रही है और यह काम क़ादिरोव को सौंपना – बिसमिल्ला ही ग़लत करना होगा।"

"उसपर तो मुझे भी यक़ीन नहीं है, आयक़िज़," आलिमजान ने कहा, "उसका तो कुत्ते की दुमवाला हाल है। हमने यह निर्माण-कार्य उसकी तमन्ना के ख़िलाफ़ शुरू किया है। हमारी कामयाबियों से उसे चिढ़ होती है। और जब वह चिढ़ जाता है तो किसी बात की परवाह नहीं,

करता। जो उसे अच्छा लगता है, वही करता है। मगर इस वक़्त बेकार का क्या झंझट खड़ा कर रखा है? हम सिर्फ़ तीन-चार दिन के लिये क़ादिरोव को बुवाई के काम का इंचार्ज बनायेंगे, इससे ज़्यादा नहीं।"

"तो भी हम यह नहीं भूल सकते कि कपास की बुवाई का काम हमारे लिये बिल्कुल नया है," ग्रायक़िज़ अपनी बात पर अड़ी रही, "चाहे कुछ भी क्यों न कहो, तुम्हें तीन दिन के दौरान ज़रूर ही कोलख़ोज़ में लौट आना चाहिये।"

"मगर कोकबुलाक़ के पानी के बिना मैं वापस आ ही कैसे सकता हूं?" आलिमजान ने बिगड़ते हुए कहा, "तुम तो जानती ही हो कि अभी तक हमें पानी की एक बूंद भी नहीं मिल सकी है।"

"ज़रा रुको, रुको तो," स्मिर्नोव ने टोकते हुए कहा। अब तक वह चुपचाप अपने थैले में कुछ ढूंढ़ता रहा था, "तुमसे यह किसने कहा कि कोकबुलाक़ में पानी नहीं है?"

"किसीने भी नहीं, मैं ख़ुद अपनी आंखों से देख रहा हूं," आलिमजान ने मुंह बनाकर कहा, "बेशक पानी तो है, उसे पाने के लिये जो कुछ भी ज़रूरी है, हम वह सभी कुछ कर भी रहे हैं, मगर मुझे इस बात का यक़ीन नहीं है कि हम तीन दिन में इस काम को पूरा कर लेंगे।"

"हम ज़रूर पूरा कर लेंगे," स्मिर्नोव ने दृढ़ता के साथ घोषणा की, "हमारे पास तीन दिन की मोहलत है। यह रहा कम्बख़्त!" वह जिस काग़ज़ की तलाश कर रहा था उसे सामने रखते हुए चिल्लाया। बात करते-करते उसने काग़ज़ पर कुछ लिखा। "जैसा कि मैं कह रहा था हमारे पास तीन दिन हैं। अच्छा, दिल से काम करनेवालों के लिये तीन दिनों का वक़्त बहुत काफ़ी है। लड़ाई के दिनों में हमारी फ़ौजें तीन दिन तक ज़ोरदार हल्ला बोलकर क़िलाबन्दी किये हुए शहरों को जीत लेती थीं। इसलिये तुम्हें हिम्मत न हारनी चाहिये," स्मिर्नोव ने अपना थैला बन्द किया और उसे कन्धे पर लटका लिया, "अगर तीन दिन के दौरान हमें पानी न मिल सका तो हम बारूद की मदद से इसे पाने की कोशिश करेंगे। इस बारूद को तो कोई भी पहाड़ बर्दाश्त नहीं कर सकता। मैं कल सवेरे ही आ जाऊंगा। हम मिलकर कोशिश करेंगे। पानी मिलेगा और वह भी जल्द ही। अच्छा, सलाम।"

स्मिर्नोव सधे क़दम रखता हुआ घाटी की तरफ़ जाने लगा।

आयक़िज़ और आलिमजान मेज़ से उठकर चट्टान की एक दीवार के पास बेंच पर आ बैठे।

"मैंने तुम्हारे दिल को ठेस पहुंचाई है क्या?" आयक़िज़ ने धीरे से पूछा, "तुम क्या सोचते हो कि मैं ग़लती पर थी?"

"नहीं," आलिमजान ने बहुत नम्र होकर कहा, "तुम ठीक कह रही थीं, मेरी रानी। मेरे ही सोचने का ढंग ग़लत था।"

"क्या यह तुम सच कह रहे हो, आलिमजान-आग़ा? कपास की बुवाई के लिये क़ादिरोव के मुक़ाबले में तुम्हारी कुछ कम ज़िम्मेदारी नहीं है। तुम तो इसके लिये पार्टी को जवाबदेह हो। और इसलिये कोलख़ोज़ में तुम्हारा हाज़िर होना ज़रूरी है।"

"तुम ठीक कहती हो, आयक़िज़। मैं तुमसे वादा करता हूं कि हमारे पहुंचने से पहले कोकबुलाक़ का पानी कोलख़ोज़ में पहुंच जायेगा। हम जैसे भी होगा, यह काम पूरा करके ही दम लेंगे।"

उनके कन्धे एक दूसरे को छू रहे थे। आयक़िज़ दूर न हटी।

"यक़ीन है?" आयक़िज़ ने भावुक होकर पूछा।

"अपने पर भी, अपनी टोली पर भी," आलिमजान ने कहा। और फिर जैसे कि गड्ढे में कूदते हुए उसने कहा, "मगर अपने दिल की रानी पर यक़ीन नहीं है। कोकबुलाक़ का पानी बाहर निकाल लेना इतना मुश्किल नहीं, जितना अपने दिल की रानी से 'हां' कहलवाना। और छोटा-सा है यह लफ़्ज़!"

आयक़िज़ ने उसका हाथ अपने हाथ में लिया और उसकी हथेली में अपना मुंह रख दिया। वह चुपचाप बैठी रही, ख़ुशी की उस आवाज़ को सुनती रही जो कहीं पास से ही उसके कानों में कुछ फुसफुसा रही थी, ख़ुशी का गीत गुनगुना रही थी। ख़ुशी ने उसके मन से कहा कि ज़िन्दगी कितनी प्यारी है, कि आकाश से रहमत बरस रही है, कि ज़िन्दगी की वह राह जिसपर उन्हें एकसाथ चलना है, बिल्कुल सीधी और स्पष्ट है। वह ख़ुशी का यह गीत सुनती रही, वक़्त गुज़रता रहा, गुज़रता रहा कि जाने की घड़ी आ गई।

"क्या अब मैं जल्द ही इसकी उम्मीद करूं?" आलिमजान ने पूछा।

"बहुत जल्द, आलिमजान-आग़ा! इस छोटे-से 'हां' लफ़्ज़ को अब बहुत दिन नहीं लगेंगे। कोकबुलाक़ का पानी हासिल हो जाने के बाद दो हफ़्ते से ज़्यादा नहीं..."

१३

निर्माण-कार्य की सहायक संचालिका ग्रायक़िज़ ने उस शाम को इस ग्रादेश पर हस्ताक्षर किये कि कल दोपहर को बांध की नींव रखी जायेगी।

एक तंग, तारीक ग्रौर गहरा दर्रा ग्रालतिनसाय नदी का पेटा था। इसके बर्बर सौन्दर्य में किसी ग्रभिशाप की सी झलक थी। यह नदी हर समय उदासी ग्रौर ग्रंधेरे की चादर में लिपटी रहती थी। सिर्फ़ दोपहर को सूरज की किरणें ही इसकी गहराइयों को छू पातीं। इसकी काली-काली झुलसी दीवारों पर पड़ती हुई सूरज की किरणों की रोशनी बड़ी भयानक-सी लगती। दीवारों पर के सुर्ख़ दाग़ ऐसे दिखायी देते मानो उनपर ख़ून जमा हुग्रा हो।

इसी तंग दर्रे में से तेज़ी से बहती थी उछलती-कूदती हुई पहाड़ी नदी ग्रालतिनसाय।

यह जगह बिल्कुल वीरान ग्रौर सुनसान थी। पानी के शोर से पक्षी डरकर दूर भाग जाते थे। मगर नीचे जाकर भी, ग्रालतिनसाय जहां दर्रे से बाहर निकल ग्राती थी, इसके चट्टानी किनारे सूने ग्रौर निर्जन थे। बसन्त के दिनों में भी इन किनारों पर नरम घास का क़ालीन न बिछ पाता था। धूप में झुलसते हुए ये तट निर्जीव ग्रौर भयानक-से लगते थे। इनसानों के सिवा सभी प्राणी इनसे दूर भागते थे।

लोग इससे लाभ उठाने की सम्भावनाग्रों का ग्रनुमान लगाने के लिये ग्राये। उन्होंने चट्टानों के नमूने लिये। नदी की गहराई ग्रौर पानी की रफ़्तार मापी। उन्होंने सारी जगह का जायज़ा लिया। इनके बाद सैकड़ों कामगार यहां पहुंचे। तंग दर्रा एक्सकेवेटर की गड़गड़ाहट से गूंज उठा। लोग बांध का पेटा तैयार कर रहे थे। ज़ोरों के धमाके हुए ग्रौर चट्टानें टुकड़े-टुकड़े होकर गिर गईं। लोग प्रकृति से मोर्चा ले रहे थे। वे काम करते थे ग्रौर साथ-साथ गाते भी थे।

नदी ग्रपने रास्ते में ग्रा जानेवाली नयी ग्रड़चन के कारण तिलमिला उठी थी। वह तेज़ी से चक्कर काटती ग्रौर ग़ुस्से में ग्राकर इससे टकराती ग्रौर इसके मुंह से निकलता हुग्रा झाग ऊपर उड़-उड़ जाता था। पानी ग्रपने रास्ते की रुकावट दूर करने के लिये, ग्रपना रास्ता बनाने के लिये, बड़े ज़ोरों से ग्राकर टकराता। लोगों ने इसके लिये नया रास्ता बना दिया।

ग्रपनी क़ैद से मुक्ति पाकर ग्रालतिनसाय पागलों की तरह इसपर दौड़ने लगी।

ट्रकों के दल के दल ग्राये, ग्रपने साथ चूरा किये ग्रौर टूटे हुए पत्थर लाये। नज़दीक की खानों से बजरी लायी गयी थी। दर्रे के किनारों पर इनके ढेर लगा दिये गये। बाद में पेटा तैयार हो जाने पर ये तमाम पत्थर ग्रौर बजरी इस में डाल दी जायेगी ग्रौर फिर बांध बंधना शुरू होगा। इस तरह ग्रालतिनसाय नदी हमेशा के लिये ही इनसान की दासी हो जायेगी।

उस दिन ग्रायक़िज़ सूरज निकलते ही उठ बैठी। गुलाबी रोशनी घास को थपथपा रही थी ग्रौर बायचीबार की ग्रांखों में चमक रही थी। बायचीबार के सुम भी गुलाबी रोशनी में नहाये से लग रहे थे।

हलक़ा-सोवियत के दफ़्तर में पहुंचकर ग्रायक़िज़ ने जूराबायेव को टेलीफ़ोन किया। साफ़ ग्रौर ग्रात्मविश्वास से भरी ग्रावाज़ में उसने पहले सेक्रेटरी को सूचना दी कि पेटा तैयार हो चुका है ग्रौर नींव रखने के वक़्त के बारे में भी उसे ख़बर दी। जूराबायेव ने ग्रायक़िज़ को बधाई दी ग्रौर साथ ही वहां पहुंचने के लिये ग्रपनी ग्रसमर्थता बताकर उसे निराश भी कर दिया।

"तो शायद इसे कल पर टाल देना ही ठीक होगा? कल तो ग्राप वहां पहुंच सकेंगे न, साथी जूराबायेव?"

"मगर टाला क्यों जाये?" जूराबायेव की ग्रावाज़ में ग्रब पहले जैसी गर्मी नहीं थी। "ग्रगर सभी कुछ तैयार है तो फिर टालने में क्या तुक है? इस वक़्त इसे टालना एक बड़ा जुर्म होगा। मेरे बिना ही इसे शुरू कर दो। ग्रौर हां, ग्रायक़िज़, मैं तो तुम्हें यह राय दूंगा कि तुमने जो काम ग्रपने हाथ में लिया हुग्रा है, उसके बारे में तुम्हें ज्यादा ज़िम्मेदारी महसूस करनी चाहिये ग्रौर शोर-गुल कम होना चाहिये। बांध जब तैयार हो जायेगा, तभी हम इसकी ख़ुशी मना लेंगे।"

ग्रायक़िज़ तो जैसे शर्म से पानी-पानी होकर रह गई। उसने टेलीफ़ोन का रिसीवर जल्दी से नीचे रख दिया।

निर्माण-स्थल की तरफ़ लौटते हुए ग्रायक़िज़ ने मन ही मन उन सभी चीज़ों की एक सूची-सी तैयार की, जिनका नींव रखने से पहले तैयार हो जाना ज़रूरी था। स्मिर्नोव पिछले तीन दिनों से बांध के निर्माण-स्थल पर

नहीं आया था। उसने अपना सारा वक़्त दूसरी ही जगहों पर लगाया था। वह नहर की खुदाई और चश्मों की सफ़ाई का काम जल्दी से जल्दी पूरा करवाना चाहता था।

आयक़िज़ को पूरा भरोसा था कि स्मिर्नोव की तरफ़ से बांध के निर्माण-कार्य का निर्देशन करती हुई वह उसी के आदेशों को पूरा कर रही है। वह आंखें बन्द करके सभी नक़्शे देख सकती थी, उनकी हर लाइन उसके दिल पर नक़्श हो गई थी।

"सब कुछ ठीक-ठाक है," बार-बार अपने काम की जांच करके वह मन ही मन सोच रही थी, "हम काम शुरू कर सकते हैं। हमारे काम शुरू करने से पहले स्मिर्नोव ज़रूर ही वहां पहुंच जायेगा।"

उसे यह बात अच्छी तरह से याद थी कि स्मिर्नोव के बनाये हुए रेखाचित्रों में दर्रे की दीवारों के गड्ढे बांध के किनारों के बिलकुल साथ थे। स्मिर्नोव ने आयक़िज़ को जिस तरह से सारी योजना समझाई थी, वह भी उसे अच्छी तरह से याद थी।

"बांध के सिरों को इन गड्ढों से जोड़ दिया जायेगा," उसने कहा, "और उन गड्ढों में से अलग किये गये पत्थर बांध-निर्माण के काम में लाये जायेंगे।"

स्मिर्नोव का विचार आयक़िज़ को बहुत जंचा था। बांध-निर्माण के लिये ज़रूरी सामग्री को निर्माण-स्थल से ही प्राप्त करने की उसकी योजना का आयक़िज़ ने यह अर्थ लगाया कि स्मिर्नोव कामगारों का काम हल्का करना चाहता है। वह चाहता है कि खानों से पत्थर लाने की बेकार की परेशानी से उन्हें बचाया जाये। मगर कामगारों ने अपनी अतुलनीय कार्य-क्षमता और जोश के सहारे दो हफ़्तों में ही बजरी और पत्थरों की आवश्यक मात्रा यहां पर लाकर इकट्ठी कर दी थी। और इसलिये दर्रे की दीवारों में गड्ढे बनाने की योजना बेकार हो गई थी।

अच्छा, तो, दीवारें ज्यों की त्यों बनी रहें। बांध दोनों सिरों पर इन दीवारों से सट जायेगा। टूटे पत्थरों और बजरी से भरी हुई दीवारों की अपेक्षा चट्टानी दीवारों पर अधिक भरोसा किया जा सकता है। और फिर इस तरह से उनका बहुत-सा वक़्त भी बच जायेगा। चार-पांच दिन तो दीवारों को खोखला करने में ही लग जाते। और वक़्त था कि बेतहाशा भागा चला जा रहा था। उन्हें कपास की बुवाई का काम शुरू कर देना चाहिये था।

बायचीबार धीरे-धीरे चल रहा था। वह अपनी मालकिन के इशारे ख़ूब समझता था। उसे दुलकी से नफ़रत थी, सरपट दौड़ना पसन्द था। मगर आयक़िज़ उसे सरपट दौड़ने न देती थी।

"ये ज़मीनें अब अपनी निठल्ली ज़िन्दगी की आख़िरी घड़ियां गिन रही हैं," अपने इर्द-गिर्द देखते हुए आयक़िज़ मन ही मन सोच रही थी, "अगले बसन्त तक ये झाड़ियां भी जोते हुए खेतों में बदल जायेंगी। स्मिर्नोव ख़ासा समझदार आदमी है न!" उसके विचारों की शृंखला जारी थी। "वह फ़ौरन ही सारे मामले को अच्छी तरह समझ गया। समकोण स्थिति में आलतिनसाय के पानी को मोड़ने का फ़ैसला करके तो उसने बहुत ही हिम्मत का काम किया है। बहुत ही हिम्मत की योजना है। और हमारे लोग भी तो कुछ कम दिलेर नहीं हैं। उसके मुंह से बात निकलने की देर थी कि वे काम में जुट गये। बहुत ही जल्द दर्रे के किनारों की सतह के बराबर बांध खड़ा हो जायेगा।"

योजना के अनुसार बांध उस जगह बनना था जहां सिंचाई की नहर घाटी से मिलती थी। काफ़ी गहरी होती हुई भी यह पहाड़ के दामनवाले उन इलाक़ों की सतह से काफ़ी ऊंची थी जिनमें पानी जाना था।

इस बात का भी स्मिर्नोव ने बिल्कुल सही अनुमान लगाया था। हां, पानी को बहुत ही थोड़ा ऊपर उठाने की योजना बनाई गई थी।

ख़ुशी, अपने पर भरोसा और ज़िन्दगी की भरपूरता आयक़िज़ के दिल-दिमाग़ पर हावी हो गयी। वह ज़ीन पर थोड़ा-सा झुकी और उसने बचकाना ढंग से टिचकारी भरते हुए बायचीबार को ज़ोर का चाबुक लगा दिया। बायचीबार हवा से बातें करने लगा।

हवा कानों में सीटियां बजा रही थी। बायचीबार के पांव तो मुश्किल से ही धरती को छू रहे थे, वह उड़ता चला जा रहा था। सांय-सांय करती हुई हवा के साथ दर्रे में काम करनेवाली मशीनों की गड़गड़ाहट और औज़ारों की खटखटाहट भी सुनाई देने लगी।

आयक़िज़ ने वह सड़क छोड़ दी जिसको अनेक पहियों ने आ-जाकर समतल कर दिया था। अब उसने लगामें बिल्कुल ढीली कर दीं और घोड़ा बड़ी तेज़ी से टीले की चोटी की तरफ़ बढ़ चला।

आयक़िज़ ने लगाम खींचकर बायचीबार को रोका और नीचे झांककर देखा। वहां, उसके पैरों के नीचे जलाशय का भावी पेटा था। आयक़िज़

घोड़े से नीचे उतरी और चट्टानी दीवार के ऊपर से झुककर नीचे झांकने लगी। एक्सकेवेटर तो वहां से जा भी चुका था। पेटे के किनारे पर कई आदमी बैठे थे। जहां तक आयक़िज़ अनुमान लगा सकी, वे दर्रे की दीवार के पास खड़े हुए दो आदमियों की बातचीत सुन रहे थे।

उन दो आदमियों में से एक जलालोव था – निर्माण-कार्य का सुपरिंटेंडेंट और दूसरा था "अक्तूबर" कोलख़ोज़ का एक फ़ोरमैन। हरी क़मीज़ पहने हुए जलालोव नाटा और मज़बूत आदमी था। उसकी टोपी काफ़ी पीछे को खिसकी हुई थी। उसका ऊंचा-चौड़ा माथा साफ़ दिखायी दे रहा था। जलालोव बड़े ध्यान से फ़ोरमैन की बात सुन रहा था और जब-तब सहमति प्रकट करने के लिये सिर हिलाता जाता था।

पेटे में काम ख़त्म हो चुका है, इस बात का यक़ीन हो जाने पर आयक़िज़ खानों की तरफ़ मुड़ गयी। उसने सड़क पर बजरी से भरी ट्रकों और छकड़ों की लम्बी क़तारें देखीं, मगर खानों में क्या हो रहा है, इतनी दूरी से यह देखना सम्भव नहीं था।

आयक़िज़ फिर से घोड़े पर सवार हो गयी और पहाड़ी से नीचे की तरफ़ चल दी। उसने सोचा कि पहले वह बजरी की खान में जायेगी और बाद में पत्थरों के गड्ढों को देखेगी।

उसने अपनी घड़ी पर नज़र डाली – अभी काफ़ी वक़्त था, सिर्फ़ दस बजे थे।

जलालोव ने आयक़िज़ को पहाड़ी की चोटी पर देखा। उसने हाथ हिलाये और उसे पुकारा। मगर आयक़िज़ ने उसकी आवाज़ न सुनी। वह घोड़ा दौड़ाती हुई दूर निकल गयी। जलालोव जल्दी-जल्दी दर्रा पार करके ऊपरवाली सड़क पर पहुंच गया।

आयक़िज़, बजरी की खान में बहुत देर नहीं ठहरी। उसने देखा कि हर चीज़ ठीक-ठाक है, काम तेज़ी से हो रहा है। ठसाठस भरे हुए छकड़े और ट्रकें एक प्रवाह के रूप में खान से बाहर जा रही थीं और उतनी ही संख्या में ख़ाली छकड़े और ट्रकें वापस आ रही थीं।

फिर आयक़िज़ पत्थरों के गड्ढों में गयी। यहां भी लोग बड़ी मेहनत कर रहे थे, मगर यहां ट्रकों और छकड़ों के आने-जाने की रफ़्तार बहुत धीमी थी। पत्थरों को तोड़ने का काम कहीं मुश्किल था।

पिछली रात ही चट्टानों को बारूद से उड़ाने के लिये सफ़रमैना काम

करते थे और अब, सवेरे भी एकसाथ ही ज़ोर-ज़ोर के कई धमाके हुए जिनकी आवाज़ दूर-दूर तक सुनायी दी।

बारूद से उड़ायी हुई चट्टानों और पत्थरों के टुकड़े अब ज़मीन पर पड़े थे। धूप में चमकते हुए उनके टूटे किनारे इस तरह लग रहे थे मानो किसी ने उनपर नमक छिड़क दिया हो।

आयक़िज़ ने दो लड़कों को एक भारी पत्थर उठाकर ट्रक में रखते देखा। स्पष्टतः उनके उठाने के लिये वह पत्थर बहुत भारी था।

आयक़िज़ घोड़े से नीचे उतर आयी। उसने सोचा था कि वह इन लड़कों को ख़ूब डांटे-फटकारेगी कि वे अपनी ताक़त के बाहर काम क्यों कर रहे हैं। मगर तभी अचानक उसकी नज़र क़ादिरोव पर पड़ी। वह जेबों में हाथ डाले वहां खड़ा-खड़ा उन लड़कों को उस पत्थर से संघर्ष करते हुए देख रहा था। उसके चेहरे पर चिढ़ का भाव था। अध्यक्ष, सदा की भांति ही चुस्त और आत्ममग्न दिखायी दे रहा था।

"सलाम, साथी क़ादिरोव," आयक़िज़ ने उसे पुकारा, "अभी भी दूसरों के काम को देख-देखकर ही ख़ुश हो रहे हैं? इसके बजाय अगर हम इनकी कुछ मदद करें, तो कैसे रहे?" इतना कहकर वह जल्दी से लड़कों की मदद करने के लिये बढ़ गयी।

"बड़ी मुश्किल से तुम्हें पकड़ पाया हूं, साथी उम्रज़ाक़ोवा!" कोई उसके पीछे खड़ा हांफ रहा था।

आयक़िज़ जल्दी से मुड़ी। उसने अपने पीछे जलालोव को देखा। उसका दम फूला हुआ था और बहुत भागने की वजह से बेहाल था।

"पिछली रात मैं वहां नहीं था, मगर इसी सुबह ही मुझे यह बताया गया कि आपने आज दोपहर को बांध की नींव रखने का हुक्म दे दिया है। मुझे पूरा यक़ीन है कि यह सच नहीं होगा।"

"यह बिल्कुल सच है, क्यों?"

"मगर हमारी योजना का क्या बनेगा, साथी उम्रज़ाक़ोवा? योजना के मुताबिक़ तो हमें दर्रे की दोनों दीवारों में गड्ढों को खोदना चाहिये।"

"अब उसकी कोई जरूरत नहीं रही। उसके बिना ही हमारे पास निर्माण का काफ़ी मसाला है। वक़्त और ताक़त को बेकार बरबाद करने में कोई तुक नहीं।"

जलालोव के चेहरे पर हैरानी के भाव उभर आये।

"मगर साथी उम्रज़ाक़ोवा, दीवारों में गड्ढे बनाने का मक़सद निर्माण का ज़्यादा मसाला हासिल करना नहीं है, बल्कि बांध को ज़्यादा अच्छा सहारा देना है। आप यह बात क्यों नहीं समझतीं? ये गड्ढे, पेटे के स्तर के बराबर ही बनाने चाहिये, वरना – आप समझ लीजिये, साथी उम्रज़ाक़ोवा – इसका कुछ भी बुरा नतीजा हो सकता है! पानी की सतह के दर्रे के सिरे तक पहुंच जाने पर यह मुमकिन है कि पानी दीवारों को काटने लगे। तब क्या होगा? पानी का बहुत ज़्यादा दबाव हो जाने पर वह अपने लिये दीवार में से रिसने की कहीं न कहीं कोई जगह बना लेगा। तब तो कुछ ही महीनों में वह बांध को बहा ले जायेगा... तब तो बहुत तबाही होगी!"

आयक़िज़ दूसरी ओर मुंह किये हुए जलालोव की बातें सुन रही थी। उसके कन्धे झुके हुए थे। वह गहरी चिन्ता में डूबी हुई सी जलालोव के शब्दों को मन ही मन तोल रही थी।

तब वह ठहाका लगाकर हंस दी – खिलखिलाकर और अचानक ही। जीवन के अत्यधिक मधुर क्षणों में ही वह इस तरह हंसती थी।

वह दौड़कर एक चट्टान के पास जा पहुंची। उसने उसपर ज़ोर से मुक्का मारा। उसका हाथ छिल गया, लाल हो गया, जिसे उसने अपने होंठों से दबा लिया, लेकिन उसकी आंखें अब भी हंस रही थीं।

"क्या तुम सचमुच यह समझते हो कि किसी मज़बूत क़ुदरती चट्टान के मुक़ाबले में कोई बांध पानी का ज़्यादा दबाव बर्दाश्त कर सकेगा? क्या तुम सचमुच ही ऐसा सोचते हो कि एक क़ुदरती चट्टान में तो पानी अपनी जगह बना लेगा, मगर बांध में जगह नहीं बना सकेगा? क्या वह सचमुच ही चट्टान को अपने साथ बहा ले जायेगा? ओह, साथी जलालोव, तुम तो बिल्कुल बेसिरपैर की बातें कर रहे हो!"

आयक़िज़ ने ख़ुशी में झूमते हुए अपने इर्द-गिर्द नज़र दौड़ाई। अचानक उसने देखा कि लोग एक छोटा-सा दायरा बनाकर उन्हीं के पास खड़े हुए हैं। "तो ये लोग भी हमारी बातें सुनते रहे हैं," उसने सोचा।

आयक़िज़ एक पत्थर पर खड़ी हो गई और उनसे कहने लगी:

"तुमने काम क्यों बन्द कर दिया, साथियो? अब से ठीक चालीस मिनट बाद हम बांध की नींव रखनी शुरू कर देंगे।"

आयक़िज़ बेकार और ज़्यादा बोलना पसन्द नहीं करती थी। उम्रज़ाक़-

अता अक्सर कहते थे कि उनकी बेटी उनमें से नहीं है जो अपनी कथनी और करनी में मेल नहीं रख पाते। आयक़िज़ को पूरा यक़ीन था कि कामगार फ़ौरन फिर से अपने-अपने काम में जुट जायेंगे।

मगर जब वे टस से मस न हुए तो उसे बहुत हैरानी हुई। आयक़िज़ ने महसूस किया कि वे लोग उसका पक्ष लेने के बजाय जलालोव की बात का समर्थन कर रहे हैं।

आयक़िज़ को लगा मानो उसके जलते हुए शरीर पर किसी ने बर्फ़ जैसे ठण्डे पानी की एक बाल्टी उलट दी हो। वह पत्थर से नीचे उतर आई। उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि वह क्या करे!

एक बड़े और पसीने से भीगे हुए हाथ ने उसके कन्धे को छुआ। आयक़िज़ मुड़ी। हाथ क़ादिरोव का था। आम तौर पर गम्भीर और उदास दिखाई देनेवाले उसके चेहरे पर एक रहस्यपूर्ण मुस्कान खेल रही थी। उसकी सिकुड़ी हुई आंखों की गहराइयों में कहीं कोई दुर्भावना छिपी हुई थी।

ज़ाहिर था कि क़ादिरोव भी इस विवाद का मज़ा ले रहा था।

"इस विभाग की निरीक्षिका और निर्माण-कार्य की सहायक संचालिका, मैं तो तुम्हें यही सलाह देता हूं कि तुम इस बात पर फिर से विचार करके अपना हुक्म वापस ले लो," क़ादिरोव ने कहा। उसके अन्दाज़ में तिरस्कार था, "मैं तो तुम्हें यह भी राय दूंगा कि तुम्हें जल्दी से ऐसे और भी कोई क़दम न उठाने चाहिये जो पहले से तैयार की गयी योजना के उलट हों। सिंचाई के मामलों की मैं बेशक कोई ज्यादा जानकारी नहीं रखता हूं, मगर तुम भी तो कुछ ख़ास ज़्यादा नहीं जानती हो..." क़ादिरोव की आंखें तन गईं और छोटी-छोटी दरारों जैसी दिखाई देने लगीं, "वैसे मैं यह समझता हूं कि साथी जलालोव जो कुछ कह रहा है, ठीक वही है और तुम्हारी बात ग़लत है। तुम बहुत जल्दबाज़ी कर रही हो... वैसे तो इसमें हैरानी की भी कोई बात नहीं है—आदमी जब जवान होता है वह हर काम जल्दी-जल्दी और नये ढंग से करने के लिये बेचैन रहता है। मगर हम तुम्हारी नुकताचीनी नहीं करेंगे। ग़लतियां कौन नहीं करता? मैं भी ढेरों ग़लतियां अपने साथ लिये फिरता हूं।"

क़ादिरोव ने सभी लोगों के सामने जिस ढंग से बातचीत की, उससे आयक़िज़ को भारी धक्का लगा। इस अपमान से उसका गला रुंध गया।

बड़ी रुखाई के साथ आयक़िज़ ने क़ादिरोव का हाथ झटक दिया और

जलालोव की तरफ़ घूम गई। वह कुछ क्षण तक तो बिल्कुल चुप रही, कुछ भी न बोली। लगता था कि आयक़िज़ ने जैसे फिर से अपने पर क़ाबू पा लिया हो और यह कि वह अब बड़े ध्यान से अपने विरोधियों के शब्दों पर विचार कर रही है। मगर बात ऐसी न थी। आयक़िज़ के मन में किसी प्रकार का भी सन्देह न था। उसे यक़ीन था कि वह जो कुछ कर रही है, बिल्कुल सही है। वह तो घड़ी भर चुप रहकर अपने ग़ुस्से को ठण्डा करने की कोशिश कर रही थी। क़ादिरोव के रवैये से उसे कितनी गहरी चोट लगी है, वह यह नहीं चाहती थी कि वहां खड़े लोग इस बात को जानें। वह यह नहीं चाहती थी कि लोग यह देखें, यह महसूस करें कि उसने अपना संतुलन खो दिया है।

वह मुश्किल घड़ी गुज़र चुकी थी, ग़ुस्सा ठण्डा हो चुका था। बड़े शान्त भाव से आयक़िज़ ने अब जलालोव की तरफ़ देखा। उसकी आवाज़ साफ़ थी, उसमें दृढ़ता थी।

"साथी जलालोव, अपना हुक्म देने से पहले मैंने इन चीज़ों पर ख़ूब सोच-विचार कर लिया था। आज सुबह ज़िला पार्टी कमेटी के सेक्रेट्री से भी मेरी बातचीत हो चुकी है। उनका कहना था कि अगर पेटा तैयार हो चुका है तो अब हमें एक घण्टे की देर करने का भी हक़ नहीं है। इस विभाग की निरीक्षिका और निर्माण-कार्य की सहायक संचालिका के नाते मैं तुमसे, साथी जलालोव, दरख़ास्त करती हूं," आयक़िज़ ने अपनी घड़ी पर नज़र डाली, "कि अब से पच्चीस मिनट बाद तुम्हें अपना काम शुरू कर देना चाहिये। मुझे अब और कुछ नहीं कहना। मेहरबानी करके वह कीजिये, जो मैंने कहा है।"

जलालोव ने कन्धे झटके। वह हतप्रभ-सा था और चिढ़ा हुआ भी। वह घूमा और धीरे-धीरे दर्रे की तरफ़ चल दिया। चन्द क़दम आगे जाकर रुक गया और आयक़िज़ की तरफ़ देखने लगा।

आयक़िज़ को उसकी आंखों में पिता तुल्य स्नेह की झलक दिखाई दी।

"जैसा चाहती हो, वैसा ही करो," उसकी आवाज़ में खीझ या ग़ुस्सा न था। "अब से पच्चीस मिनट बाद हम काम शुरू कर देंगे। मगर यह मामला है बड़ा संजीदा। मैं साथी स्मिर्नोव को बुलवा भेजता हूं। उनके यहां आ जाने में ही बेहतरी होगी।"

"तुम्हारे लिये यह काम तो मैं बड़ी ख़ुशी से कर दूंगा, साथी जलालोव," क़ादिरोव ने बड़ी नम्रता से कहा, "मेरी कार यहीं खड़ी है। मैं अभी जाकर साथी स्मिर्नोव से मिलता हूं और सारी परिस्थिति समझाये देता हूं। इसमें मुझे कोई तकलीफ़ न होगी..."

आयक़िज़ को लगा कि जैसे किसी ने इसके घाव पर नमक छिड़क दिया हो।

"बहुत जल्दी कर रहे हैं आप, साथी क़ादिरोव," आयक़िज़ ऊंची और दर्द भरी आवाज़ में चिल्लाई। बहुत ही कोशिश करके उसने अपने आंसुओं पर क़ाबू पाया। "दर्रे को पार करना आपकी कार के बस का रोग नहीं और घुड़सवारी आप कर नहीं सकेंगे, आपका सूट जो ख़राब हो जायेगा। मैं ख़ुद ही जाकर साथी स्मिर्नोव को ढूंढ़ लाती हूं। बायचीबार, इधर आओ!"

वह उछलकर घोड़े पर सवार हो गई। घोड़ा सरपट दौड़ चला।

"अब से पच्चीस मिनट बाद काम शुरू कर देना!" जलालोव के पास से तेज़ी से गुज़रते हुए आयक़िज़ चिल्लाई। "शोर-गुल कम और ज़िम्मेदारी का अहसास ज़्यादा होना चाहिये! ख़ुशी हम बाद में मनायेंगे!"

यानग़ाक़साय की घाटी तक पहुंचकर आयाक़िज़ ने किसानों से पूछा कि स्मिर्नोव कहां मिलेगा। उन्होंने बताया कि स्मिर्नोव तो उस दिन सुबह ही आलिमजान के यहां कोकबुलाक़ के चश्मे की तरफ़ चला गया है। आयक़िज़ दर्रे पर उस तरफ़ सरपट घोड़ा दौड़ाने लगी। मगर जल्द ही उसे स्मिर्नोव अपनी तरफ़ आता दिखायी दिया।

"सलाम, आयक़िज़," उसने ऊंची आवाज़ में कहा। "मैं तो तुम्हीं से मिलने जा रहा था। कहो तो कैसा काम-काज चल रहा है तुम्हारा? पेटा तैयार हो चुका, क्या?"

आयक़िज़ घोड़े से नीचे उतरी, लगाम उसने काठी के ऊपर फेंकी और बायचीबार को घास चरने के लिये छोड़ दिया। वे दोनों एक पत्थर पर बैठ गये। स्मिर्नोव के चेहरे और ठोड़ी के मस्से पर धूल जमी हुई थी।

आयक़िज़ ने अपने दिल की ख़ूब भड़ास निकाली, अपने स्वाभिमान को ठेस लगने की बात की चर्चा की और क़ादिरोव के ख़िलाफ़ उसे जो गुस्सा था, वह भी बयान किया। वह जल्दी-जल्दी अपनी बात कहती जा रही थी। उसे स्मिर्नोव का समर्थन प्राप्त करने की उतनी फ़िक्र न थी

जितनी कि अपने साथ हुई ज़्यादतियों को बयान करने और अपनी आत्मा को उस तमाम गुस्से और खीझ से मुक्त करने की जो उसकी आत्मा पर बोझ बने हुए थे।

जब वह जलालोव से हुए अपने झगड़े का ज़िक्र कर रही थी तो स्मिर्नोव ने उसे कनखियों से देखा और उसपर एक अजीब-सी नज़र डाली। धल भरी उसकी भौंहें तनीं और फिर अपनी साधारण स्थिति में लौट आईं। आयक़िज़ बीच ही में रुक गई।

"ज़रा ठहरो, ज़रा ठहरो," स्मिर्नोव ने मिंचे दांतों के बीच से कहा, "नींव, यही कहा न तुमने – नींव किसलिये रखी जा रही है? क्या वे खुदाई का काम पूरा कर चुके हैं?"

"हां," आयक़िज़ ने जवाब दिया, "सो तो वे पूरा कर चुके हैं।"

वह घबरा गयी थी और परेशान थी।

"और क्या दर्रे की दीवारों में गड्ढे भी बना चुके?"

"नहीं। मगर इवान निकीतिच, हमारे पास तो वैसे ही निर्माण का बहुत-सा मसाला है। दर्रे की दीवारें बेहद मज़बूत हैं और उनपर पूरा-पूरा भरोसा किया जा सकता है। हम जो बांध बना रहे हैं, ये दीवारें उससे कहीं ज़्यादा मज़बूत हैं। उनके बह जाने का कोई ख़तरा नहीं हो सकता।"

"और तुम ने नींव रखवाने का काम शुरू कर दिया?" स्मिर्नोव ऊंची आवाज़ में चिल्लाया, "मैं तुम से पूछ रहा हूं, क्या वे काम शुरू कर चुके हैं? बताओ तो, मैं तुमसे पूछ रहा हूं!"

"हां, सो तो हम शुरू कर चुके हैं," आयक़िज़ बहुत ही धीरे से बड़बड़ायी।

स्मिर्नोव पहले की तरह ऊंची आवाज़ में चिल्लाता गया। उसका इस तरह चिल्लाना बहुत अप्रत्याशित था। आयक़िज़ बुरी तरह डर गयी।

"तब तो मैं हुज़ूर को यह बता देना चाहता हूं कि एक महीने के अन्दर-अन्दर, पानी सारे बांध को, एक-एक पत्थर करके, बहा देगा! बांध का नाम-निशान तक मिटा देगा! मैं जनाब को यह साफ़-साफ़ शब्दों में कह देना चाहता हूं। ओह, देखो तो इन निर्माण करनेवालों को! बच्चे और नौसिखिये! तुममें ज़िद्द इतनी है कि... तुमने मुझे ख़बर क्यों नहीं दी? ओह, तुम!"

स्मिर्नोव ने आयक़िज़ के हाथ से चाबुक छीन लिया। वह तेज़ी से बायचीबार की तरफ़ दौड़ा और रक़ाबों को छुए बिना ही काठी पर जा बैठा।

बायचीबार अड़ा और रुका। स्मिर्नोव ने उसे मज़बूत हाथ से शान्त किया और ज़ोर से चाबुक लगाया। बायचीबार दर्रे में नीचे की तरफ़ दौड़ चला। उसके सुमों के नीचे छोटे-छोटे कंकर चरचराते और इधर-उधर उड़ते जाते थे।

१४

आयक़िज़ नीचे की तरफ़ देख रही थी, मगर उसे जैसे कुछ भी दिखाई न दे रहा था, न तो चट्टानी रास्ते पर फिर से बैठती हुई धूल, न ही धूल के बादलों में ग़ायब होती हुई स्मिर्नोव की पीठ।

उसकी आंखों से ज़ार-ज़ार आंसू बह रहे थे। वह बिलख-बिलखकर रो रही थी। वह इसलिये रो रही थी कि स्मिर्नोव ने तो उसे विभाग-निरीक्षिका बना दिया था और वह ख़ुद सब कुछ चौपट कर बैठी थी। वह इसलिये बिलख रही थी कि स्मिर्नोव ने जो योजना बड़ी तफ़सीली से और बड़े अच्छे ढंग से समझाई थी, वह उसी को पूरा करने में असफल हो गई थी। उसे यह याद करके रुलाई आ रही थी कि उसके सहायक संचालिका नियुक्त किये जाने पर जब क़ादिरोव ने ग़ुस्से के मारे मुंह से झाग निकालते हुए यह कहा था कि अभी उसकी उम्र बहुत छोटी है और उसे तजरबा नहीं है, तो ज़िले के किसी भी आदमी ने क़ादिरोव की इस चेतावनी पर कान न दिया था। वह इसलिये फूट-फूटकर रो रही थी कि वक़्त से पहले ही उसके भविष्य का अन्त हो गया था, कि समय से पहले ही उसकी ज़िन्दगी की ख़ुशियां लुट गई थीं। वह निष्कपट भाव से इस बात पर विश्वास कर रही थी कि अब उसके सक्रिय जीवन का अन्त हो गया है। वह आंसू बहा रही थी क्योंकि उसे विश्वास था कि उसने लोगों को धोखा दिया है, उनकी आशायें पूरी करने में असमर्थ रही है, क्योंकि उसने ज़िला पार्टी कमेटी, जूराबायेव और आलिमजान को निराश किया है।

आलिमजान का ध्यान आते ही वह तन-मन से, सच्चे दिल से और दुख-दर्द से भरी हुई अपनी आत्मा के पूरे बल से उसे याद करने लगी,

चाहने लगी कि वह किसी तरह उड़कर उसके पास पहुंच जाये। अगर आलिमजान नहीं, तो और कौन समझेगा उसके दिल का दर्द? अगर वह उसे दिलासा नहीं देगा, तो और कौन ऐसा करेगा?

"मुझे ज़रूर ही उसके पास जाना चाहिये! उसके सिवा मेरा कोई और है भी तो नहीं! मैं उसे सब कुछ बता दूंगी। मैं बुरा नहीं करना चाहती थी... मेरा ऐसा कोई भी मतलब नहीं था... जो कुछ अच्छा था, बेहतर था, मैं तो वही सब करना चाहती थी... वह जो भी चाहे फ़ैसला कर सकता है। वह चाहे तो मुझे निकाल बाहर करे, मगर वह सब कुछ समझ तो जाये न! सिर्फ़ वही, अकेला वही मेरे दिल की बात समझेगा।"

वह चल न रही थी, दौड़ रही थी। उसके बूटों की एड़ियां पत्थरों पर मुड़-मुड़ जातीं, फिसल-फिसल जातीं। मगर वह भागती चली जा रही थी, कोकबुलाक़ की तरफ़। वह आलिमजान के पास जा रही थी – सिर्फ़ आलिमजान के पास...

फिर वह अचानक ही रुक गई।

वह आलिमजान के पास नहीं जायेगी। वह तो ख़ुद अपनी चिन्ताओं से घिरा हुआ है, अपनी ज़िम्मेदारियों के बोझ तले दबा हुआ है। वह कोक-बुलाक़ को फिर से चालू करने का वादा दे चुका है। हर क़ीमत पर उसे अपना यह वचन पूरा करना है। वह अपने साथ काम करनेवालों का नेतृत्व कर रहा है... क्या उसे उसके पास जाने का अधिकार है? क्या लेकर जायेगी वह उसके पास? आंसू, शिकायतें और अपनी हार! वह एक बड़ी लड़ाई लड़ रहा है, ज़ोरों की लड़ाई, और क्या इसी तरह वह उसकी हिम्मत बढ़ायेगी? वह उसके पास जायेगी और आंखों में आंसू भरकर कहेगी कि अगर तुम मुझे प्यार करते हो, आलिमजान, तो मेरी मदद करो, मुझे बचा लो, मुझे दिलासा दो। बस यही सब कुछ कहेगी न वह उससे? अरे आयक़िज़, कहां गया तुम्हारा आत्माभिमान, तुम्हारा सम्मान और तुम्हारा प्यार? क्या यही है तुम्हारे प्यार की भावना – जिसे प्यार करती हो, हमेशा उसी के सहारे की ओर देखती रहो, कभी उसकी मदद न करो, संघर्ष में उसका दिल न बढ़ाओ?

आयक़िज़ इन्हीं ख़्यालों में डूब-खो गई। वह अपने आपको कमज़ोर और थकी-थकी-सी महसूस करने लगी। वह रास्ते के बीचोंबीच खड़ी थी,

उसने अपने आपसे कहा कि "मैं अभी-अभी हलक़ा-सोवियत में जाऊंगी, ज़िला पार्टी कमेटी के दफ़्तर में टेलीफ़ोन करके बड़े धीरज के साथ साथी जूराबायेव को अपनी बड़ी भूल की ख़बर दूंगी। मैं अपनी सफ़ाई नहीं दूंगी, कम्युनिस्ट जो भी चाहें—मेरा फ़ैसला कर दें।"

आयक़िज़ के चारों तरफ़ अंधेरा ही अंधेरा था। कहीं कोई किरण दिखाई न दे रही थी। वह गांव के क़रीब पहुंच ही चुकी थी जब उसे घोड़ों की तेज़ और लयबद्ध टापों की आवाज़ सुनाई दी। आयक़िज़ चलती गई, उसने घूमकर नहीं देखा। टापें जब बहुत नज़दीक आ गईं, तो उसने नज़र उठाकर उस तरफ़ देखा।

घुड़सवार थे स्मिर्नोव और जलालोव। जलालोव अपने घोड़े पर सवार था और बायचीबार की लगाम थामे था। घुड़सवारों के चेहरे धूल के कारण स्याह पड़े हुए थे, मगर आयक़िज़ ने इसका मतलब उनकी उदासी समझा।

वह रास्ता छोड़कर सड़क के एक किनारे हो गई कि घोड़े गुज़र जायें। उसने सोचा कि ये लोग ज़िला पार्टी कमेटी को उसकी ग़लती के बारे में ख़बर देने जा रहे हैं। उसका दिल बैठ गया। वह अपने बारे में नहीं, अपने अब्बा के बारे में सोच रही थी। बेटी की बदनामी की छाया बढ़े बाप पर भी तो पड़ेगी।

घुड़सवार जब आयक़िज़ के पास पहुंच गये तो घोड़ों को रोककर नीचे उतरे। स्मिर्नोव तो बुरी तरह हांफ रहा था। ये दोनों आदमी छाया में धम्म से घास पर बैठ गये।

आयक़िज़ झिझकती हुई सी सड़क के किनारे ही खड़ी रही।

"तुम हमारे पास क्यों नहीं आतीं, आयक़िज़?" स्मिर्नोव ने उसे बुलाया, "इधर आकर बैठ जाओ!"

उसने अपनी जेब से बटुआ निकाला और तम्बाकू भरकर उंगली जितनी सिगरेट तैयार की। जलालोव ने भी वैसा ही किया और उतनी ही बड़ी सिगरेट बना ली।

आयक़िज़ उनके पास चली गई, मगर बैठी नहीं। वह स्मिर्नोव के पीछे खड़ी-खड़ी वृक्ष की खुरदरी छाल से गाल सटाये खड़ी रही। कुछ क्षणों तक इसी तरह चुप्पी बनी रही। स्मिर्नोव और जलालोव ज़ोरों से सिगरेटों के कश लगाते रहे।

"गर्मी क्या है, भट्ठी जल रही है!" स्मिर्नोव ने कहा।

"काम भी गर्म है, सूरज भी गर्म है और लोग भी गर्म हैं। मैं समझता हूं कि इसीलिये सब कुछ झुलसा जा रहा है," जलालोव ने बात आगे बढ़ाई।

वे चुपचाप कुछ देर तक कश लगाते रहे।

"इस तरह चुप-चुप क्यों हो, आयक़िज़? कहां हो तुम?" स्मिर्नोव का अपनी जगह से उठने को मन न हुआ। उसने अपनी गर्दन घुमाकर आयक़िज़ की तरफ़ देखा मगर उसका चेहरा दिखाई न दिया। "क्या अभी तक मन ही मन परेशान हो रही हो, या तूफ़ान शान्त हो चला?"

"अभी तक शान्त नहीं हुआ," आयक़िज़ फुसफुसाई। "यह तूफ़ान अब कभी शान्त न होगा। मैंने... तो बांध को बिल्कुल तबाह ही कर डाला था। ऐसी ग़लतियों के लिये लोगों पर मुक़दमे चलाये जाते हैं..." वह फूट-फूटकर रोने लगी। उसने पेड़ को और भी कसकर पकड़ लिया। अब वह पहले की ही तरह ज़ार-ज़ार रो रही थी, बिलख रही थी।

स्मिर्नोव झटपट उठा और उसके पास गया। जलालोव ने बड़ी समझदारी से काम लिया – वह वहां से उठकर चला गया और घोड़ों की देख-भाल में लग गया। बिल्कुल सीधी काठी को और सीधा करने लगा।

स्मिर्नोव ने अपना हाथ लड़की के कन्धे पर रख दिया और भावुकता के कारण कुछ-कुछ लड़खड़ाती-सी आवाज़ में बोला:

"तुम तो कमाल की लड़की हो, आयक़िज़। बिल्कुल सच कहता हूं। मैं ऐसी बातें कहने का आदी नहीं हूं, मगर तुमने मुझे ऐसा कहने के लिये मजबूर कर दिया है। हां, तुमने ग़लती की है, बड़ी भारी भूल की है..."

"मेरी भूल..."

"हां, यह बड़ी-ही संजीदा भूल थी। यह तो मैं पहले ही कह चुका हूं। मैं तुम्हें दिलासा नहीं दे रहा हूं, इस मामले को समझने में ईमानदारी से तुम्हारी मदद कर रहा हूं। सब कुछ चौपट होने से पहले ही इनसान को अपनी ग़लती समझ लेनी चाहिये और सोच-समझकर उस ग़लती को ठीक करना चाहिये। तुमने मुझे, जलालोव और अपने दूसरे साथियों को जिनके साथ कन्धे से कन्धा मिलाकर इतने सालों से काम कर रही हो, ग़लत ढंग से समझकर बड़ी भारी भूल की है। क्या तुम यह यक़ीन कर सकती हो कि अनजाने ही तुमसे हो जानेवाली ग़लती को हम भयंकर बरबादी का रूप लेने देते? तुम यह याद रखो, आयक़िज़, कि तुम्हारे

बहुत-से सच्चे और वफ़ादार दोस्त हैं। मुसीबत के वक़्त, उनमें से किसी को भी तुम्हारी मदद करने में ख़ुशी होगी। मगर इनमें से कोई भी यह नहीं चाहेगा कि तुम आंसू बहाओ। वक़्त काटने का यह बहुत ही ग़ैरदिलचस्प और अटपटा ढंग है। मैंने और जलालोव ने, यों कहना चाहिये, तुम्हारी ग़लती को जहां का तहां, ही दबा दिया है। गड्ढे कल तक खोद दिये जायेंगे। बाक़ी सब ठीक-ठाक है। वहां काम करनेवाले लोग बहुत देर से तुम्हारा इन्तज़ार कर रहे हैं।"

आयक़िज़ हैरान-सी होकर स्मिर्नोव और जलालोव को घूरती रही। जलालोव बायचीबार के पास खड़ा हुआ उसकी काठी थपथपाकर आयक़िज़ को सवार होने की दावत दे रहा था।

आयक़िज़ धीरे-धीरे अपना खोया हुआ संतुलन वापस हासिल कर रही थी।

"यह मेरा हुक्म है," काम-काजी रवैया अपनाते हुए स्मिर्नोव ने आंसुओं की नई बाढ़ रोकने के लिये रोब से कहा, "कल दोपहर को तुम्हें बांध बनाने का काम शुरू करवाना है। समझ गयीं न? निर्माण-कार्य पूरा हो जाने पर हम शानदार जशन मनायेंगे। साथी उम्रज़ाक़ोवा और साथी जलालोव, तुम अभी से उसकी तैयारी शुरू कर दो। आयक़िज़, चलो, सवार हो जाओ अपने घोड़े पर!"

१५

आलिमजान जब अपने झोंपड़े में लौटा, तो आधी रात का सन्नाटा छाया था। उसे कहीं कोई रोशनी न दिखायी दी। जल्दी से बनाये गये झोंपड़ों में थके-मांदे लोग गहरी नींद सो रहे थे। आलिमजान ने कपड़े उतारने की भी फ़िक्र न की, अपने बेहद थके हुए पांवों से सिर्फ़ जूते उतार फेंके और लेट गया। उसने अपनी बांहें सिर के नीचे रख लीं। "सो जाओ, सो जाओ!" उसके जिस्म का अंग-अंग मानो पुकार-पुकारकर कह रहा था।

मगर नींद तो पास फटकने को भी तैयार न थी।

कितने दिन हो गये उसे संघर्ष करते हुए। उसकी टोली में कोलख़ोज़ के सबसे अच्छे कामगार शामिल थे। कोकबुलाक़ मिल तो गया था, मगर उससे पानी की एक बूंद न निकली थी। आलिमजान वादा दे चुका था—

एक कम्युनिस्ट का वादा—बाक़ी तीन दिनों में पानी निकालकर छोड़ेगा।

आलिमजान सहसा ही उठकर बैठ गया मानो उसे भारी धक्का लगा हो। वह बड़ी बेचैनी से इधर-उधर जूते तलाश करने लगा। कहां चले गये कम्बख़्त जूते? कहां गये? उसका हाथ सरकंडों से बनायी गयी दीवार से जा टकराया और सारा झोंपड़ा नीचे से ऊपर तक हिल गया। यह झोंपड़ा भी अच्छी-ख़ासी मुसीबत था!

थोड़ी देर बाद, दर्रे के घुप अन्धेरे में आलिमजान, स्मिर्नोव के झोंपड़े का रास्ता टटोल रहा था।

झोंपड़े में हल्की-सी रोशनी थी। छोटी-सी मेज़ पर एक लैम्प की नीची की हुई बत्ती फड़फड़ा रही थी। कोने में स्मिर्नोव अपनी बरसाती बिछाये सूखी घास के एक ढेर पर पड़ा हुआ ख़र्राटे ले रहा था।

"इवान निकीतिच," आलिमजान ने धीरे से पुकारा। "उठो, मेरे दोस्त! मुझे तुम्हारी बेहद ज़रूरत है, इवान!"

ख़र्राटे एकदम बन्द हो गये। स्मिर्नोव ने नींद से घुटी जाती अपनी आंखें बड़ी मुश्किल से खोलीं। वह लेटा-लेटा उस आदमी को घूर रहा था जिसने आधी रात के वक़्त उसकी नींद ख़राब की थी। आलिमजान रोशनी की तरफ़ पीठ किये खड़ा था और इस तरह जगाये जाने पर भौंचक्का-सा स्मिर्नोव, आलिमजान को फ़ौरन पहचान न सका।

आदत के मुताबिक़ स्मिर्नोव ने अपने तकिये के नीचे से ऐनक निकालकर चढ़ाई।

"ओहो, तो तुम हो!" स्मिर्नोव ने कहा और उठकर बैठ गया। "क्या मामला है? कुछ गड़बड़ी हो गई?" उसकी नींद अब पूरी तरह ग़ायब हो चुकी थी।

"नहीं, मेरे दोस्त! कुछ भी ऐसा नहीं हुआ। लेकिन अगर हमने जल्दी न की तो ज़रूर कुछ हो जायेगा।"

"कुछ हो जायेगा?"

"हां।"

"बरबादी-तबाही?"

"हां, कुछ ऐसा ही।"

"यह तुम झूठ कह रहे हो," स्मिर्नोव ने कहा और दर्द करते हुए अपने जिस्म को आराम देने के लिये अंगड़ाई ली।

स्मिर्नोव ने अपने जिस्म को इस ज़ोर से अंगड़ाया कि आलिमजान को यह डर हुआ कि कहीं उसकी पेशियां ही न चटक जायें।

"मुझे साफ़-साफ़ और ढंग से यह बताओ कि तुम मुझे सोने क्यों नहीं दे रहे हो। क्या कोकबुलाक़ कहीं भाग गया? तुमने अभी कुछ ही देर पहले तो उसे खोजा था, इतनी जल्दी क्या वह खिसक भी गया! मेरे प्यारे, तुम्हें उसे ज़ंजीरें डालकर क़ाबू में रखना चाहिये था।"

"नहीं, कोकबुलाक़ भागा तो कहीं नहीं। मगर मुसीबत यह है कि अभी तक पानी नहीं मिला। यह तो बिल्कुल सूखा हुआ चश्मा है। वह दरार तो पत्थरों-कंकरों से ठसाठस भरी हुई है।"

"तो तुम आधी रात के वक़्त इसीलिये आये हो कि तुम्हारी ख़ातिर मैं अभी चलकर उसे साफ़ कर डालूं?" स्मिर्नोव ने हंसकर कहा। "तुम असली मुश्किल तो दूर कर चुके हो – चश्मे का मुंह तो तुमने ढूंढ़ लिया। अगर तुमसे इसका मुंह किसी तरह भी न खुला, तो हम बारूद का इस्तेमाल कर लेंगे। बारूद जो रंग दिखायेगा वह तो देखते ही बनेगा – धज्जियां उड़ जायेंगी इसके मुंह की – पानी तो एक तरफ़, तुम चाहे हाथी भी गुज़ार देना इसके बीच से।"

"इवान, मेरे प्यारे दोस्त, ज़रा वहां चलकर एक नज़र डाल लो," आलिमजान ने प्रार्थना की, "उस चट्टान पर भरोसा नहीं किया जा सकता। उसमें बहुत-सी दरारें हैं। मेरे ख़्याल में तो बारूद के इस्तेमाल से फ़ायदा कम और नुकसान ज्यादा हो सकता है। हम तो सदा के लिये इसका मुंह बन्द कर डालेंगे। मैं तो यही समझता हूं कि दरार को हाथ से ही साफ़ किया जाना चाहिये। अब मेरे साथ चलो। चलो, एक बार फिर चलकर देख लें। तुम तो जानते ही हो कि मेरे पास सिर्फ़ दो दिन और हैं। अगर कोकबुलाक़ सचमुच ही सूखा चश्मा निकला, तो लोग क्या कहेंगे?"

स्मिर्नोव पिछली तीन रातों से अच्छी तरह नहीं सोया था। उसने कल्पना की कि वह अपने लम्बे जूते खींचकर चढ़ा रहा है, ठण्डी, अन्धेरी घाटी में एक किलोमीटर से अधिक दूर तक लड़खड़ाता चला जा रहा है... बरबस वह बरसाती से ढके हुए सूखी घास के ढेर की तरफ़ खिंच गया...

किसी भीगी हुई बत्तख़ की भांति वह सिहरा और उसने कन्वास के अपने गन्दे-मन्दे लम्बे जूते चढ़ाने शुरू किये।

रात बहुत ही घनी और काली थी। आकाश तो स्याह था ही, पहाड़

ग्रौर भी ग्रधिक काले दिख रहे थे। पहाड़ों की धुंधली-धंधली रेखायें, ग्राकाश को ज़रा-ज़रा छूती-सी लग रही थीं। दर्रे के ऊपरी हिस्सों से ठण्डी ग्रौर तन को काटती-सी हवा के झोंके नीचे ग्रा रहे थे। ऐसा लगता था मानो पिघलती हुई बर्फ़ से भरी एक बड़ी-सी कोठरी के दरवाज़े चौपट खोल दिये गये हों।

ग्रालिमजान ग्रागे-ग्रागे हो लिया। वह स्मिर्नोव के झोंपड़े से लिये गये लैम्प से सड़क रोशन करता जाता था। स्मिर्नोव, ग्रपने पर हावी सुस्ती से लड़ाई करता, भारी-भारी क़दम रखता ग्रौर लड़खड़ाता हुग्रा सा पीछे-पीछे चला ग्रा रहा था। नींद ग्रब भी उसके दिमाग़ पर क़ब्ज़ा किये हुए थी। नींद से घुटे जाते उसके मस्तिष्क-पट पर कुछ बिखरे-बिखरे, कुछ ऊल-जलूल ग्रौर ग्रधूरे-ग्रधूरे सपनों की परछाइयां उभर रही थीं।

कोकबुलाक़ तक का सारा रास्ता इन दोनों ने बिल्कुल चुपचाप काटा।

ग्रब वे कामगारों के झोंपड़ों के पास थे। ग्रालिमजान का मन हुग्रा कि किसी को पुकार ले, मगर फिर उसने इरादा बदल दिया। उसने सोचा कि थके-हारे लोग मर्दों की भांति सो रहे होंगे ग्रौर फिर ग्रगले दिन भी तो उन्हें बहुत काम करना है। उसने सोचा कि उसे जिन ग्रौज़ारों की ज़रूरत है, वे वहीं मिल जायेंगे।

यहां दर्रा एकदम मुड़ जाता था। मुड़ते ही उन्होंने देखा कि ईंधन चटक रहा है, ग्राग जल रही है ग्रौर लोग इधर-उधर दौड़-धूप कर रहे हैं।

ग्रालिमजान चौंका। लैम्प नीचे जा गिरा। लौ चिमनी को चाटने ग्रौर उसे स्याह करने लगी। ग्रालिमजान ने उसे उठाया ग्रौर स्मिर्नोव की तरफ़ देखा।

"सारी की सारी टोली ही यहां मौजूद है," उसने हैरान होकर कहा, "हर ग्रादमी यहां है।"

स्मिर्नोव की नींद ग्रौर सुस्ती ग्रब हवा हो गयी। वह खिलखिलाकर हंस दिया।

"ग्ररे, तुम लोगों का पक्का इरादा ही काफ़ी है चट्टानों की धज्जियां उड़ाने के लिये। बारूद की तो कोई ज़रूरत ही नहीं।"

दोनों, कामगारों के पास जा पहुंचे। सवाल पूछना तो बेकार होता। लोग दरार से ग्राखिरी कंकर-पत्थर निकाल रहे थे। वे जानते थे कि कपास की बुवाई शुरू करने का वक़्त सिर पर ग्रा गया है ग्रौर इसलिये कोकबुलाक़

पर ग्राख़िरी हल्ला बोलने के लिये उन्होंने अपनी नींद और रात का आराम हराम करने का फ़ैसला कर लिया था।

नज़ारा तो वाक़ई बड़ा अजीब था – सुलगती हुई आग, चट्टानों के इर्द-गिर्द नाचती हुई पिशाची आकृतियां, इधर-उधर बिखरे हुए पत्थर और ज़ोरों से बरसते हुए चमकदार इस्पाती फावड़े।

आलिमजान तेज़ी से चश्मे की तरफ़ लपका। स्मिर्नोव उसके पीछे-पीछे गया। वहां दो आदमी काम कर रहे थे। कंकर-पत्थर तो सब साफ़ कर दिये गये थे, मगर पानी अब भी ग़ायब था।

बेकबूता चश्मे के मुंह के सामने जुटा हुआ था। वह सुराख़ में लोहे का लम्बा डण्डा डालकर, पानी का मुंह रोकनेवाली किसी अड़चन को तोड़ने की कोशिश कर रहा था। वह धीरे-धीरे, मगर ज़ोरदार चोटें लगा रहा था।

स्मिर्नोव ध्यान से सुनता रहा। चोटें लगने से गूंज पैदा होने के बजाय दबी-दबी और धप-धप की आवाज़ पैदा होती थी।

सुवानक़ुल, पसीने से तर-ब-तर, बेकबूता के पास बैठा था। काम बहुत मुश्किल और थकानेवाला था। दोनों दोस्त, बारी-बारी से काम कर रहे थे।

"कहो?" आलिमजान ने सावधानी से पूछा।

"बहुत बढ़िया चल रहा है," बेकबूता ने ख़ुशी-ख़ुशी कहा। "हम लोगों ने मीटर भर से ज़्यादा दरार साफ़ कर डाली है। मगर कोई चीज़ रास्ता रोके है। टूटने का नाम ही नहीं लेती। अब तक तो मैं इसे छेद नहीं पाया।"

चश्मे के मुंह के आगे से निकाली हुई ढेर-सारी मिट्टी, बेकबूता के पांवों के पास पड़ी थी। मिट्टी का रंग अजीब-सा था। स्मिर्नोव का ध्यान उसकी तरफ़ खिंचा। वह बैठ गया। उसने आलिमजान के हाथ से लैम्प ले लिया और बड़े ध्यान से, उसके पास जाकर उसे देखा।

"हां," आख़िर वह भुनभुनाया, "साथियो, यह मिट्टी तो बड़ी अजीब-सी है। ऐसी मिट्टी मैंने पहले भी कहीं देखी है।"

आलिमजान ने मुट्ठी-भर मटमैली-काली मिट्टी उठायी और स्मिर्नोव के चेहरे पर प्रश्नसूचक दृष्टि डाली।

"यह है क्या चीज़, इवान निकीतिच?"

"मिट्टी के सिवा श्रौर कुछ भी हो सकती है। यह पानी से गला-सड़ा नमदा होगा। ज़रा ठहरो!"

स्मिर्नोव ने बेकबूता को एक तरफ़ कर दिया श्रौर लोहे का डण्डा ख़ुद ले लिया। उसने उस श्रवरोध पर कुछ चोटें लगायीं, फिर सीधा खड़ा हो गया, डण्डा बेकबूता को थमा दिया श्रौर हटकर थोड़ी दूर जा खड़ा हुश्रा।

"मामला श्रब काफ़ी साफ़ है। हमें बारूद का इस्तेमाल करना ही होगा।"

"क्यों, यह क्या है?" श्रालिमजान ने चिन्तित होते हुए पूछा।

"बात बड़ी सीधी-सादी है..."

स्मिर्नोव श्राग के पासवाले पत्थर पर बैठ गया।

सभी फ़ौरन उसकी तरफ़ चले गये।

"सुनो दोस्तो। बासमचियों श्रौर उनके मालिकों ने हमारी श्रर्थव्यवस्था को श्रधिक से श्रधिक हानि पहुंचाने की कोशिश की है। उन्होंने हमारे बड़े-बड़े पहाड़ी चश्मों को बन्द करने की कोशिश की। हमारे जनतन्त्र के दूसरे पहाड़ी इलाक़ों में उनके तरीक़े समझने-जानने के मुझे मौक़े मिले हैं। मैं समझता हूं कि कोकबुलाक़ के साथ भी उन्होंने वही कुछ किया है। उनका तरीक़ा यह था – चट्टानों को बारूद से उड़ाने से पहले वे सख़्त लकड़ी का एक टुकड़ा लेकर उसपर गीला नमदा लपेटते थे श्रौर उसे चश्मे के मुंह में ठूंस देते थे। उनके पास जितना नमदा बच जाता उसे वे लकड़ी की इस रुकावट के ऊपर लगा देते। इस तरह दोहरी रुकावट बन जाती थी, समझे न?"

"तो श्रब हमें क्या करना होगा?" किसी ने पूछा।

"इसे बारूद से उड़ाना होगा। श्रफ़सोस की बात है कि यह काम करनेवाले लोग जा चुके हैं। हमें उन्हें फिर से बुलाना होगा श्रौर इस तरह हमारा काम दस दिन पीछे पड़ जायेगा।"

"हो सकता है कि बारह दिन भी लग जायें," श्रालिमजान ने कहा। "इतना वक़्त तो हमारे पास नहीं है। हमारी टोली के श्रालतिनसाय में पहुंचने से पहले-पहले, कोकबुलाक़ का पानी वहां पहुंच जाना चाहिये।"

श्रालिमजान उठ खड़ा हुश्रा श्रौर दृढ़ क़दम रखता हुश्रा दरार की तरफ़ बढ़ गया। उसने लोहे का डण्डा लिया श्रौर काम में जुट गया। श्रालिमजान,

बेकबूता, स्मिर्नोव और सुवानक़ुल, बारी-बारी से यह कमर तोड़नेवाला काम करने लगे। लगातार कई घण्टों तक इस अवरोध पर चोटें लगती रहीं जो बासमचियों ने चश्मे के मुंह में ठोंस दिया था। उन्हें दोहरे होकर यह काम करना पड़ता था। उनकी पेशियां रबड़ की भांति फैलतीं और सिकुड़तीं। सुराख़ अब काफ़ी गहरा हो चुका था। डण्डे को अब उन्हें अपने हाथों में सिरे से पकड़कर संतुलित करना पड़ता, इससे बहुत अधिक ज़ोर पड़ता और चोटें कमज़ोर होती जाती थीं।

स्मिर्नोव सुबह होते तक बिल्कुल चूर-चूर हो गया। और तब उसके दिमाग़ में एक अच्छा ख़्याल आया।

"लोहे के कितने डण्डे हैं आप लोगों के पास?" उसने बेकबूता से पूछा।

"तीन।"

"बहुत ख़ूब! इन्हें आग में घुसेड़ दो! इनके सिरे अंगारों जैसे बना डालो!"

काम अब ज़्यादा तेज़ी से हो रहा था। लोहे के तीनों डण्डे अब उस काले सुराख़ में अधिक से अधिक गहराई तक पहुंचते जा रहे थे।

जब सूरज चढ़ने लगा तो आलिमजान और स्मिर्नोव थोड़ी देर को सुस्ताने और सिगरेट पीने के लिये आग के पास बैठ गये।

"इस तरह तो बहुत धीरे-धीरे काम हो रहा है। अगर हमारे पास बारूद की एक बत्ती भी होती, तो काफ़ी थी, सिर्फ़ एक ही!" स्मिर्नोव ने अपनी चाह प्रगट करते हुए कहा। "बस एक धमाका होता और सारा मामला ख़त्म हो जाता।"

"या फिर मेरे पास मेरी ७६ मिलीमीटर की टैंक तोड़ तोप ही होती," आलिमजान ने अपने मन की बात कही, "अपनी इस तोप से मैं इस रुकावट के परखचे उड़ा डालता।"

"और तुम इस चश्मे का मुंह इस तरह बन्द कर डालते कि बाद में एक टन बारूद भी कुछ न कर पाता," स्मिर्नोव ने रुखाई से कहा। "नहीं, मेरे प्यारे आलिमजान, टैंक तोड़ तोपों का इस्तेमाल तुम उन्हीं लोगों के लिये रहने दो जो हमें अमन से काम न करना देना चाहते हों, जिन्हें इसके बिना चैन न पड़ता हो, नींद न आती हो। और यहां इस लड़ाई में तो हम तोपों के बिना ही काम चलाने की कोशिश करेंगे।"

सब चुप हो गये। स्मिर्नोव ने अपने गाल पर उगी हुई खूंटी सहलाई।

"मैं समझता हूं कि लकड़ी का क़रीब-क़रीब आधा टुकड़ा तो हम साफ़ कर चुके हैं," उसने ऊंची आवाज़ में सोचते हुए कहा, "मेरा तो ऐसा ही अनुमान है। आख़िर वे सारे का सारा पेड़ तो इस दरार में ठूंस नहीं सकते थे!"

आलिमजान ने अपनी कोई राय ज़ाहिर न की। नींद इस बुरी तरह उसकी आंखों में घिर रही थी कि वह बात तक न कर सकता था। ऊंघते-ऊंघते उसे आयक़िज़ की याद आ गई। वह अपने हाथों में एक किताब लिये थी। वह उस किताब को ऊंचे-ऊंचे पढ़ रही थी और आलिमजान उसके साफ़ और उभरे हुए नाक-नक़्शे को ध्यान से देख रहा था और मन ही मन सोच रहा था कि इस लड़की से बेहतर, ज़्यादा समझदार और प्यारी, कोई दूसरी लड़की इस दुनिया में नहीं है।

आयक़िज़ ने किताब नीचे रख दी। उसकी भौंहें तनीं और ओंठ फड़-फड़ाये।

"तुम क्या सुन नहीं रहे हो, आलिमजान-आग़ा?" उसने कहा था, "और यह किताब भी क्या ग़ज़ब की है... दुनिया में सबसे क़ीमती चीज़ जो इनसान के पास है, वह है ज़िन्दगी। इनसान सिर्फ़ एक बार ही ज़िन्दा रहता है। और इनसान को यह ज़िन्दगी इस तरह गुज़ारनी चाहिये कि मरते वक़्त वह यह कह सके कि अपनी सारी ज़िन्दगी, अपनी सारी शक्ति मैंने मानवजाति की बेहतरी के लिये, उसे और अधिक सुखद बनाने के लिये संघर्ष करते-करते गुज़ार दी है।"

स्मिर्नोव ने अपने दोस्त पर एक नज़र डाली। आलिमजान एक पत्थर का सहारा लिये गहरी नींद सो रहा था। उसकी सिगरेट घुटने पर रखी हुई सुलग रही थी। उसका पतलून थोड़ा-सा जल भी चुका था और उसमें से कपड़ा जलने की बू आने लगी थी। मगर आलिमजान को बिल्कुल सुध-बुध ही न थी, उसका रोयां-रोयां नींद की बेहोशी का शिकार हो चुका था।

स्मिर्नोव ने सुलगती हुई सिगरेट उसके घुटने से उठाकर दूर फेंक दी। फिर वह ख़ुद भी ज़रा आराम से लेट गया।

"बुरी तरह थक गया है, बेचारा," स्मिर्नोव ने सोचा, "बेशक मैं उम्र में इससे बड़ा हूं, मगर फिर भी ज़्यादा मज़बूत हूं। मैं यह सिगरेट

ख़त्म करते . . . जैसे कि मैं कह रहा था कि मैं हूं तो इससे कुछ बड़ा ही . . मैं अभी इस सिगरेट को ख़त्म . . ."

सिगरेट उसकी उंगलियों से खिसककर नीचे गिर गई। स्मिर्नोव गहरी नींद सो रहा था।

स्मिर्नोव ने कोई सपना न देखा। मगर ग्रालिमजान ने सपने में ग्रायक़िज़ के घुटने पर रखी हुई किताब देखी। पर बेहद कोशिश के बावजूद भी वह उसका चेहरा न देख सका।

ग्रचानक किसी के दो मज़बूत हाथों ने ग्रालिमजान के कन्धों को ज़ोर से झकझोर दिया। कानों के पर्दे फाड़ती हुई एक ग्रावाज़ सुनाई दी, "हम जीत गये, ग्रालिमजान-ग्राग़ा! हम जीत गये!"

ग्रालिमजान ग्रागे की तरफ़ झुका ग्रौर उसने ग्रांखें खोलीं। उसने देखा कि सिर से पांव तक भीगा हुग्रा बेकबूता उसके सामने खड़ा नाच रहा है ग्रौर ग्रपनी कुहनियां तथा टांगें झटक रहा है। चिल्लाते ग्रौर नाचते हुए वह ख़ुशी से चहकता-चमकता हुग्रा ग्रपना चेहरा ग्रालिमजान के क़रीब लाया। बेकबूता के गाल पर एक बड़ा-सा नील दिखाई दे रहा था।

"किसने तुम्हें यह चोट लगाई? कब?" ग्रालिमजान ने पूछा। नींद के कारण उसकी ग्रावाज़ बैठी-बैठी-सी थी।

"तीस बरस तक ग्रगर कोई चश्मा ज़ंजीरों में जकड़ा रहने के बाद ग्राज़ाद होता है तो ज़ाहिर है कि वह ग्रपना पहला वार उसी पर करेगा जो उसे ग्राज़ाद करता है," बेकबूता ने ग्रब नाचना-टापना बन्द कर दिया ग्रौर संजीदगी से बात करने लगा। "ग्रौर फिर ग्रगर वार करनेवाला कोकबलाक़ हो–जोकि ग्रब तुम्हारे पीछे गरज रहा है–तब तो समझो कि ग्राज़ादी देनेवाले की मुसीबत ही ग्रा गई। मगर ख़ैर कोई बात नहीं, मैं तो ऐसे दस ग्रौर तमाचे ख़ुशी से बर्दाश्त कर लूं, ग्रगर काश . . ."

ग्रालिमजान ने पीछे मुड़कर देखा। ग्रपनी क़ैद से ग्राज़ाद हुग्रा कोकबुलाक़ एक चमकते हुए ग्रर्ध-चक्र के रूप में चट्टानी दीवार से बड़ी तेज़ी के साथ बाहर निकल रहा था। उसकी मोटी ग्रौर तेज़ धार में कभी-कभी कोई काली-काली-सी चीज़ भी बाहर ग्राती–जो या तो पत्थर होते या फिर कीचड़–ग्रौर देखते ही देखते यह चीज़ पानी के नीचे ग़ायब भी हो जाती।

"बासमचियों द्वारा ठोंसे गये लकड़ी के टुकड़े के बचे-खुचे हिस्से पानी

की इस धार में बहकर बाहर आ रहे हैं," सुवानक़ुल ने धीरे से कहा। वह बुत बना-सा पानी की इस मोटी धार को देख रहा था।

"एक साफ़-सुथरे पहाड़ी चश्मे के पानी में गली-सड़ी चीज़ों का नाम-निशान तक न होना चाहिये," बेकबूता ने कहा, "चश्मा जो कर रहा है ठीक ही तो है। इसे अपने अन्दर का सारा कूड़ा-करकट बाहर निकाल फेंकना चाहिये।"

स्मिर्नोव ने आलिमजान के कन्धे पर अपना हाथ रख दिया और भावुकता के कारण लड़खड़ाती आवाज़ में कहा:

"दोस्तो! अब तुम्हें जल्द से जल्द आलतिनसाय की तरफ़ चल देना चाहिये। तुम लोग कोकबुलाक़ की रफ़्तार का मुक़ाबला न कर सकोगे।"

१६

आकाश बिल्कुल साफ़ था—बादल का नाम-निशान भी न था। चिनार न हिलते थे, न सरसराते थे। हवा भी जैसे ठहरी हुई थी। था तो बसन्त, मगर दिन गर्मियों की तरह गर्म था।

आलतिनसाय की बाहरी सीमा के पास ही एल्म का एक सैकड़ों बरस पुराना वृक्ष था। एक दर्जन भेड़ें और दो गधे उसकी छाया में बैठे हुए थे। मगर छाया थोड़ी थी और यह वृक्ष जानवरों को भी धूप से बचा न पा रहा था।

दोपहर।

झुलसे हुए इस दिन में झींगुरों की झीं-झीं, टिड्डों का शोर और खेतों के ऊपर गतिहीन-से लटके हुए लवा पक्षियों के चहचहे कुछ ज़िन्दगी पैदा कर रहे थे। फूलों पर संतुलित ढंग से बैठे हुए व्याध-पतंग अपना शानदार नाच नाच रहे थे और उनके पारदर्शी सुनहरे पंख चमक रहे थे।

पहाड़ के दामनवाले इस इलाके में पिछले दस दिन और दस रातों से ट्रैक्टर काम कर रहे हैं।

शुरू-शुरू में जड़ों-झाड़ियों की सफ़ाई का काम औरतें, लड़के और लड़कियां ही करती रहीं। इसलिये बहुत थोड़ा ही काम हुआ मगर कोकबुलाक़ पर विजय प्राप्त करने के बाद आलिमजान की टोली कोलख़ोज़ में लौट आई और काम तेज़ी से होने लगा। कुछ ही समय बाद नहर की खुदाई पूरी करके, करीम की कोमसोमोल टोली भी यहां पहुंच गयी। काम

अब पूरे ज़ोरों से होने लगा। बांध-निर्माण के काम में लगे हुए लोगों को छोड़कर, आलतिनसाय के सभी लोग काम करने के लिये मैदान में आ गये थे। जोती हुई अछूती ज़मीन में अब कपास बोयी जा रही थी।

आलतिनसाय की ज़मीनों की हालत, प्यास से मरे जाते किसी प्यासे जैसी थी। जैसे एक प्यासा, ठण्डे पानी का चश्मा मिल जाने पर पानी पीता जाता है, पीता जाता है और अघाने का नाम नहीं लेता, वही हाल था इन ज़मीनों का। ये बुरी तरह अपनी प्यास बुझाने में लगी हुई थीं और आलतिनसाय के सभी लोग, इन ज़मीनों के लिये प्राप्त किये गये पानी से लगातार इनकी प्यास बुझा रहे थे।

बुवाई का काम योजना के अनुसार ख़त्म हुआ ही चाहता था। बड़े-बड़े ट्रैक्टर तमाम दिन और रात-रात भर गड़गड़ाते रहते, ज़मीन के बड़े-बड़े टुकड़ों पर रेंगते और उपजाऊ अछूती मिट्टी को उलटते-पलटते रहते।

आलतिनसाय से पहाड़ तक एक तपती हुई और धूल भरी सड़क थी। इस सड़क पर सैकड़ों तरह के निशान थे, जो कहीं मिलते थे तो कहीं जुदा हो जाते थे और कहीं एक दूसरे को काटते थे। कहीं कोलख़ोज़ की ट्रक की हैरिंग बोन का छापा दिखायी दे रहा था, तो कहीं छकड़े के ऊंचे-ऊंचे पहियों के निशान, कहीं ऊंट के पैरों के गोल चिन्ह और कहीं गिलास के तल के बराबर गधे के सुम नज़र आ रहे थे।

छोटी-छोटी पगडंडियां बड़ी सड़क से दायीं ओर को घूम गई थीं और खेतों को पार करती हुई नई सड़क से जा मिलती थीं। यह सड़क अभी हाल ही में बनाये गये कोलख़ोज़ के खेत-कैम्प की तरफ़ जाती थी। सड़क को बने अभी एक हफ़्ता भी न हुआ था कि इसके साथ-साथ सिंचाई की नालियां भी दिखाई देने लगी थीं और पौधे अपने नन्हे और कमज़ोर पत्तों के साथ धीरे-धीरे मरमर भी करने लगे थे।

आलिमजान मोड़ पर पहुंचकर घड़ी भर के लिये रुक गया। उसकी आंखों के सामने जो सुन्दर चित्र था वह उसी को देखता-देखता आत्मविभोर हो उठा। मस्ती से और मज़े-मज़े छलांगें लगाता हुआ, वह खेतों के बीच से जानेवाली सड़क पर जा पहुंचा और खेत-कैम्प की तरफ़ चल दिया। वह उस दिन सुबह ही सुबह ज़िला पार्टी कमेटी के दफ़्तर में होकर आया था। घर पहुंचने पर उसने अपना घोड़ा अस्तबल में छोड़ा और घर के अन्दर झांककर देखे बिना खेत-कैम्प की तरफ़ चल दिया।

आलिमजान को लगा कि कोई उसके पीछे भागा चला आ रहा है। वह ठहर गया, घूमकर देखा तो कोलख़ोज़ के कोमसोमोल का सेक्रेट्री करीम दिखाई दिया।

"कहो, सब कुछ कैसे चल रहा है, करीम?" करीम जब पास पहुंच गया तो आलिमजान ने उससे पूछा। "सब काम वक़्त पर पूरा हो रहा है न?"

"मेरी टोली तो बुवाई का काम कल सुबह तक ख़त्म कर देगी," करीम ने हांफते हुए जवाब दिया, "बाक़ी कोमसोमोल टोलियां भी कोई ख़ास पीछे न रहेंगी।"

"तुम इस वक़्त तक खेतों में क्यों नहीं पहुंचे?"

"मैं अभी लुहार के पास से आ रहा हूं। मशीन-ट्रैक्टर स्टेशन की मरम्मत करनेवाली ट्रक तो शायद आज रात तक यहां पहुंचेगी और हम अपने ट्रेलर लिंक पर बहुत भरोसा नहीं कर सकते। इसलिये मैं लुहार से एक बड़ा पेंच बनवा लाया हूं। ओह! मैं तो भूल ही चला था, तुम्हारे नाम यह ख़त आया है।"

आलिमजान ने लिफ़ाफ़े पर एक नज़र डाली। पत्र पेत्रोव का था। उसकी आत्मा ने उसे फटकारा। "क्या ख़ूब आदमी हूं मैं भी," उसने सोचा, "ग्रिगोरी ने दूसरा ख़त भी लिख दिया और मैंने अभी तक पहले का जवाब देने की भी परवाह नहीं की। मुझे तो जैसे वक़्त ही नहीं मिलता। मगर वह तो किसी न किसी तरह वक़्त निकाल ही लेता है और सो भी मेरी ही तरह बुरी तरह काम-काज में फंसा होने के बावजूद।"

उसने फ़ैसला किया कि खेत-कैम्प पहुंचकर वह उस ख़त को पढ़ेगा।

कोलख़ोज़ का खेत-कैम्प पतले-पतले बांसों के सहारे खड़ा किया गया सायबान-सा था। बांसों के ऊपर स्लेट की छत थी। बांसों के बीच की जगहों में लाल कपड़े के टुकड़े लगे थे जिन पर नारे लिखे हुए थे। इन बांसों के साथ प्लाईवुड के नोटिस बोर्ड कीलों से जड़े हुए थे। इन नोटिस बोर्डों पर पोस्टर चसपां थे, कोलख़ोज़ का दीवारी अख़बार लगा था और समाजवादी प्रतियोगिता के परिणाम चिपके हुए थे। बीचोंबीच एक बड़ी-सी मेज़ थी जिसपर लाल कपड़ा बिछा था। इस मेज़ पर नये अख़बार और पत्रिकायें रखी थीं। इसी तरह के एक झोंपड़े में खाने का कमरा बना हुआ था।

यह खेत-कैम्प एक टीले पर बनाया गया था ताकि हवा का हर झोंका

यहां आसानी से पहुंच सके। गर्मी जब अपने पूरे जोबन पर होती है तो खेतों में जैसे आग बरसती है, वे भट्ठी की तरह तपने लगते हैं। तब यह खेत-कैम्प, स्लेट की छत के नीचे ठण्डा रहता है और दोपहर की छुट्टी के समय थके-मांदे कामगारों को यहां पहुंचकर आराम मिलता है।

पास ही में एक बड़ा-सा तालाब खोद दिया गया था। इसमें लकड़ी की नालियों की व्यवस्था भी की गयी थी। इन्हीं नालियों में से फिर से चालू किये गये चश्मों का पानी बह-बहकर तालाब में पहुंचता। तालाब के दूसरी तरफ़ जमा किया गया फ़ालतू पानी एक नाली के ज़रिये कोलख़ोज़ के नये लगाये गये अंगूरों के बाग़ों में पहुंच जाता था। तालाब के इर्द-गिर्द उगाये गये पौधे तेज़ी से बढ़ रहे थे। वक़्त आने पर ये पानी के ऊपर घना हरा चंदवा-सा बना देंगे और इस तरह सूरज की गर्म-गर्म किरणों से इसका बचाव हो सकेगा।

करीम तेज़ी से अपनी टोली की तरफ़ चला गया।

आलिमजान ने खेत-कैम्प की मेज़ पर बैठकर लिफ़ाफ़ा खोला। एक छोटा-सा फ़ोटो बाहर आ गिरा। आलिमजान के मन में एक भाई का सा स्नेह उमड़ आया। उसने अपने दोस्त के स्वस्थ और भरे हुए चेहरे पर दृष्टि डाली। ग्रिगोरी वर्दी में था। उसकी छाती पर पदक-फ़ीतियों की तीन क़तारें थीं। आलिमजान को अपने लड़ाई के दिन याद आ गये। फ़ोटो तो उसने लिफ़ाफ़े में डाल दिया और पत्र पढ़ने लगा।

ख़त क्या, कुछ पंक्तियां ही थीं – मोटी-मोटी लिखावट में, बस एक पृष्ठ में ही दोस्त ने जवाब न देने के लिये आलिमजान को सिर्फ़ डांटा-डपटा ही था।

आलिमजान ने इसी वक़्त जवाब देने का फ़ैसला किया। अपने काम-काज और निजी मामलों के बारे में उसने तफ़सील में सब कुछ लिखा। इस ख़त में उसने सभी चीज़ों का ज़िक्र किया – पानी के लिये लड़ी गयी लड़ाई का, आयक़िज़ की ग़ैरमामूली ख़ूबियों का (पहाड़ के दामनवाले इलाक़ों में सिंचाई का इन्तज़ाम करने का ख़्याल उसी को तो सूझा था), स्मिर्नोव की सूझ-बूझ और तजरबे का। उसकी पेंसिल पन्ने के पन्ने भरती चली जा रही थी। वह तभी रुकी जब एक भी काग़ज़ बाक़ी न रहा।

"यह ख़त भी ख़ूब रहा! मगर ख़ैर एक ही बार में मैं उसे सारी ख़बरें तो लिखे दे रहा हूं," आलिमजान ने सोचा।

ग्रालिमजान को खेत-कैम्प के नज़दीक कुछ लोगों की ग्रावाज़ सुनायी दी।

"मैं ग्रब ग्रौर इन्तज़ार न कर सकती थी। मैंने सोचा कि चन्द मिनटों के लिये यहां भी होती जाऊं ग्रौर यहां का क्या हाल-चाल है, यह देखती जाऊं। मुझे बहुत जल्द ही बांध की तरफ़ वापस जाना है।"

यह ग्रायक़िज़ थी। ग्रालिमजान झटपट उठा ग्रौर ग्रपने दिल की रानी से मिलने के लिये तेज़ी से ग्रागे बढ़ा।

"सलाम, ग्रालिमजान-ग्राग़ा," ग्रन्दर ग्राते हुए ग्रायक़िज़ ने कहा, "क्या भारी-भरकम ख़त है! किसे लिखा है? डाक से तो यह जाने से रहा!"

ट्रैक्टर टोली का फ़ोरमैन, पोगोदिन भी उसके पीछे-पीछे ग्रन्दर ग्राया। ग्रालिमजान ने ख़त ग्रायक़िज़ की तरफ़ बढ़ा दिया।

"इसे पढ़ लो," उसने कहा, "ग्रौर ग्रपनी तरफ़ से भी कुछ लफ़्ज़ लिख दो।"

"ग्रोह, यह ख़त तो तुमने ग्रपने रूसी दोस्त को लिखा है। ऐसे भले ग्रादमी को तो मैं ख़ुशी से कुछ लिखूंगी," ग्रायक़िज़ ने ग्रपने थैले में से पेन निकाला ग्रौर लिखा, "प्यारे साथी ग्रिगोरी, हम कभी मिले तो नहीं, फिर भी ग्रापको ग्रौर वाल्या को ग्रपना दिली सलाम भेजते हुए मुझे बेहद ख़ुशी हो रही है। ग्रापके मुन्ने को ढेरों प्यार। ग्रायक़िज़।"

ग्रायक़िज़ की लिखी पंक्तियां पढ़कर, ग्रालिमजान तो ख़ुशी से सुर्ख़ हो गया। उसने काग़ज़ों को तह दी, थैले में से एक लिफ़ाफ़ा निकाला ग्रौर उसपर ग्रपने दोस्त का पता लिख दिया।

"बांध का क्या हाल है?" लिफ़ाफ़ा बन्द करते हुए ग्रालिमजान ने पूछा।

"बड़ा हो रहा है," ग्रायक़िज़ ने ख़ुशी से कहा, "ग्रालिमजान-ग्राग़ा, काश कि तुम जानते कि बांध में कितना ग्रधिक पत्थर लगता है!" ग्रचानक ही वह जल्दी-जल्दी कहने लगी। जोश के मारे उसका दम फूला जा रहा था। "ऐसे तीन-चार बांध ग्रौर बने कि पहाड़ों की सारी चट्टानें ख़त्म समझो। एक टीला तक भी न बच रहेगा। तुम्हें वहां ग्राकर यह सब ग्रपनी ग्रांखों से देखना चाहिये। इतने दिनों से तुम वहां ग्राये क्यों नहीं?"

"ग्राज शाम को मैं ज़रूर ग्राऊंगा," ग्रालिमजान ने जवाब दिया।

पोगोदिन ने अपनी पुरानी टोपी उतारी और रूमाल निकालकर पसीने से लथ-पथ चेहरा साफ़ किया।

"भट्ठी जल रही है," वह भारी आवाज़ में भुनभुनाया। आवाज़ उसके भारी-भरकम जिस्म के अनुसार थी, "बारिश होकर रहेगी।"

"बारिश नहीं होगी," आलिमजान ने कहा, "इस वक़्त बारिश की ज़रूरत नहीं है।"

"हमें बिल्कुल इसकी ज़रूरत है ही नहीं," आयक़िज़ ने आलिमजान की बात की पुष्टि की, "इस वक़्त बारिश होने से हमारी कपास की फ़सल तो बस चौपट हो जायेगी।"

पोगोदिन ने अचानक ही रूमाल से चेहरा साफ़ करना बन्द कर दिया। वह बड़े ध्यान से बाहर की तरफ़ कान लगाकर कुछ सुनने लगा।

"एक ट्रैक्टर में फिर कोई गड़बड़ हो गयी है," वह घबराहट ज़ाहिर करता हुआ गुर्राया।

न तो आलिमजान और न ही आयक़िज़ को इस बात का पता चला था कि पांच में से एक ट्रैक्टर ठप हो गया है। मगर मेकैनिक के अनुभवी कान ने उसे फ़ौरन ही यह बता दिया था कि पांच नहीं, सिर्फ़ चार ही ट्रैक्टर काम कर रहे हैं।

आयक़िज़ और आलिमजान बाहर गये। वे दोनों, खेत-कैम्प के गिर्द बनी हुई बाड़ का सहारा लेकर खड़े हो गये। उनके चारों तरफ़ खेत ही खेत फैले हुए थे और वहीं ठप हुआ ट्रैक्टर खड़ा था। ट्रैक्टर-ड्राइवर और उसका सहायक, हल से माथापच्ची कर रहे थे। वे हाथ पटक-पटककर ट्रैक्टर के ठप होने की वजह पर ग़ौर कर रहे थे।

"क्या हुआ?" पोगोदिन ने चिल्लाकर पूछा।

ट्रैक्टर-ड्राइवर घूमा और जवाब में कुछ चिल्लाया।

"मैं जाकर देखता हूं," पोगोदिन ने चिन्तित होते हुए कहा।

"ठहरो, हम भी तुम्हारे साथ चलते हैं," आयक़िज़ ने कहा, "आओ चलें, आलिमजान-आग़ा!"

वे तीनों हाल ही में जोती गयी और हेंगा फिरी ज़मीन पर चल दिये। वे टखनों तक मिट्टी में धंसते जा रहे थे।

"जाने क्या गड़बड़ है? क्या ठीक करने में बहुत देर लगेगी?" आयक़िज़

ने पूछा। वह पोगोदिन के लम्बे-लम्बे डगों का साथ देने की कोशिश कर रही थी।

पोगोदिन जवाब में सिर्फ़ कन्धे झटककर रह गया।

"बताम्रो क्या हुम्रा है?" वह गुस्से ग्रौर बेचैनी से ड्राइवर पर बरसा, "पन्द्रह मिनट हो गये हैं तुम्हें बेकार खड़े-खड़े।"

ड्राइवर ने रोनी-सी सूरत बनाते हुए झाऊ की जड़ की तरफ़ इशारा किया। वह छिपे ढंग से ज़मीन से बाहर निकली हुई थी। इसके कारण हल का फल टेढ़ा हो गया था।

"तो क्या हुम्रा?" पोगोदिन गरजा। "खड़े-खड़े मुंह ताकते रहने के बजाय इसे ठीक क्यों नहीं किया? काम जाननेवाला ग्रादमी तो इन पन्द्रह मिनटों में दो फल लगा लेता!"

ड्राइवर एक ग्रपराधी की तरह खिसियाकर मुस्कराता हुम्रा ग्रपने काम में लग गया। पोगोदिन चुभने ग्रौर ग्रसर करनेवाली बातें कह-कहकर उसे फटकारता रहा। डांट-डपट करने के बाद उसने ग्रपनी ग्रास्तीनें चढ़ायीं ग्रौर ख़ुद उसकी मदद करने लगा।

खेत के दूसरे सिरे से सुवानक़ुल बड़ी तेज़ी से उनकी तरफ़ चला ग्रा रहा था। उसके ख़ुशमिज़ाज ग्रौर फूले हुए चेहरे पर पसीना ही पसीना था मानो वह पसीने की बारिश में भीगा हो। जब उसने झाऊ की मनहूस जड़ देखी तो तानकर ग्रपना फावड़ा चलाया। कुछ ग्रौर चोटें लगीं ग्रौर वह लम्बी तथा मज़बूत जड़ उसके क़दमों में ग्रा गिरी।

सुवानक़ुल ने पसीने से तर-ब-तर चेहरा ग्रास्तीन से साफ़ किया, जड़ को ठोकर लगाकर एक तरफ़ हटाया ग्रौर हांफते हुए ग्रालिमजान से कहा –

"देखा तुमने? ग्रगर ऐसी ही कोई न कोई ग्रड़चन न ग्राती रहती तो जुताई का काम पिछली रात तक ख़त्म हो गया होता। झाऊ की ये झाड़ियां उधर, खेत के दूसरे सिरे पर भी हमें परेशान किये हुए हैं। हमें हाथों से खींच-खींचकर उन्हें बाहर निकालना पड़ता है। मगर ख़ैर, कुछ परवाह नहीं, मैं फिर भी वक़्त पर काम ख़त्म होने का वादा करता हूं"

"ग्रौर क्या बेकबूता को भी ग्रड़चनों का सामना करना पड़ रहा है?" बेकबूता ग्रौर उसकी टोली ने जिस खेत की जुताई की थी उसपर शरारत भरी नज़र डालते हुए ग्रायक़िज़ ने पूछा।

"शर्त तो बेकबूता ही जीतेगा," ग्रालिमजान ने ज़ोर देकर कहा,

"वह गार्ड-सेना का आदमी है, सबसे आगे रहकर लड़ने का आदी है। जिस किसी काम में हाथ डालता है, हमेशा सबसे आगे ही रहता है।"

"बनाते जाओ हवाई क़िले," सुवानक़ुल ने जवाब दिया। उसके बोलने के ढंग में चिन्ता की झलक न थी, मगर तभी उसने बेकबूता के खेत की तरफ़ जो नज़र डाली तो उसमें चिन्ता झलक उठी। "बेकबूता के पास तीन और मेरे पास सिर्फ़ दो ट्रैक्टर क्यों हैं?" वह अचानक ही पोगोदिन पर बिगड़ उठा। "यह गड़बड़ क्यों हुई? अगर यह मुक़ाबला ही हो रहा है तो हमारे ट्रैक्टर भी बराबर होने चाहिये।"

"अगर तुम इतनी बात भी नहीं समझ सकते तो सचमुच बड़े अजीब आदमी हो," पोगोदिन ने तड़ाक से जवाब दिया। उसने फल की मरम्मत कर दी थी और हल अब फिर से काम करने लायक़ हो गया था। "तुम्हारे कोलख़ोज़ को दो फ़ालतू ट्रैक्टर मिले हैं। जब काम करनेवाली टोलियां बहुत-सी हैं तो मैं उन्हें बराबर-बराबर बांट ही कैसे सकता था? तुम क्या चाहते कि मैं ट्रैक्टरों के टुकड़े-टुकड़े कर डालता? बेकबूता का काम निपटते ही हम दो फ़ालतू ट्रैक्टर तुम्हारे हवाले कर देंगे।"

"देखेंगे कि कौन पहले ख़त्म करता है..." सुवानक़ल बड़बड़ाया।

ट्रैक्टर तभी भड़भड़ाया और आगे की तरफ़ बढ़ चला। अपनी बात अधूरी ही छोड़कर, सुवानक़ुल ट्रैक्टर के पीछे दौड़ा।

"सभी अपने-अपने काम के पीछे डण्डा लेकर पड़े हुए हैं," पोगोदिन ने कहा, "सुवानक़ुल तो पिछली रात सोने के लिये घर भी नहीं गया। उसे इस बात की बहुत फ़िक्र थी कि ट्रैक्टर-ड्राइवर कहीं बिन-जोती ज़मीन के टुकड़े न छोड़ जायें। वह रात भर खेतों में ही टापता रहा।"

आयक़िज़ यह सुनकर हंस दी।

"वैसे हमेशा तो वह ढीला-ढीला रहता है, धीरे-धीरे काम करता है," उसने कहा, "मगर इस बार तो उसका कायापलट हो गया है।"

"इसलिये कि वह वही काम कर रहा है जो वह हमेशा ही करना चाहता रहा है," आलिमजान ने कहा, "हमारी सबसे बड़ी मुसीबत है कामगारों की कमी। जल्दी-जल्दी बांध ख़त्म करो और सभी लोगों को यहां भेज दो।"

१७

कपास की बुवाई के अन्तिम दिनों में तो विशेष रूप से कड़ी मेहनत करनी पड़ी। सख़्त और मुश्किल ज़मीन पर पोगोदिन ने ख़ुद ट्रैक्टर चलाया। उस दिन भी वह कई घण्टों तक लगातार काम करता रहा था।

आख़िर उसका ट्रैक्टर, विजय की गरज करता हुआ, जोती हुई ज़मीन लांघकर अछूती, घास से ढकी ज़मीन पर जाकर रुक गया। तेल और धूल-मिट्टी से लथपथ पोगोदिन नीचे उतरा। उसने इस ज़ोर से अंगड़ाई ली कि उसकी हड्डियां बज उठीं।

"आख़िर हमने मोर्चा जीत लिया!" उसने आराम की सांस लेकर कहा। "और वह भी वक़्त से एक दिन पहले!"

पोगोदिन नीले आकाश के नीचे धूप में लहलहाते खेतों और बर्फ़ से ढकी पहाड़ी चोटियों के दृश्य में खो गया। फिर वह अपने ट्रैक्टर के पास गया और उसकी अच्छी तरह जांच करने लगा। वह उसी ढंग से उसकी जांच कर रहा था जैसे कि कोई डाक्टर फिर से भर्ती होने के लिये आनेवाले फ़ौजी की जांच करता है।

ट्रैक्टर-ड्राइवर, छोकरा-सा ही था। उसे सिर्फ़ एक बरस के काम का तजरबा था। पोगोदिन जो कुछ करता था, ड्राइवर उसके पीछे-पीछे चलता हुआ, ईर्ष्या भरी दृष्टि से उसे देखता जाता था। यह सिलसिला काफ़ी देर तक चलता रहा। आख़िर युवा ड्राइवर उकता गया।

"इवान-आग़ा, क्या ज़रूरत है इस जांच-पड़ताल की?" उसने ऐसे पूछा मानो उसे बिल्कुल बुरा न लग रहा हो। "मेरा ट्रैक्टर बिल्कुल ठीक-ठाक है। आप ज़रा इशारा कर दें कि मुझे कहां काम करना है और बस काम हो जायेगा। आप इसे पहले भी काम करते देख चुके हैं, ठीक है न? बहुत बढ़िया मशीन है यह!"

"और इसका ड्राइवर कैसा है?" बनावटी रोब दिखाते हुए पोगोदिन ने पूछा। "वह भी बढ़िया है या उन लोगों में से है जो क़दम-क़दम पर ठोकर खाते हैं, जो चलना नहीं, सिर्फ़ रेंगना जानते हैं?"

लड़का तो झेंप के मारे सुर्ख़ हो गया। पोगोदिन से थोड़ा दूर हटकर वह नाख़ून से रेडियेटर पर जमी मिट्टी साफ़ करने लगा।

"यह तो आप ही मुझसे बेहतर जानते हैं," अपनी झेंप दूर करते हुए आख़िर उसने जवाब दिया, "मैं ख़ुद यह कैसे जान सकता हूं?"

पोगोदिन लड़के की तरफ़ घूम गया। उसने उसके कंधे पर हाथ रख दिया और पिता की तरह स्नेहपूर्वक कहा :

"बुरा नहीं मान जाना, मेरे दोस्त! तुम्हें डांटने-डपटने का तो मुझे भूलकर भी ध्यान नहीं आया। बात सिर्फ़ इतनी है कि ट्रैक्टर को घोड़ा ही समझना चाहिये। घोड़े की तरह यह भी अच्छे बर्ताव की मांग करता है, चाहता है कि इसे साफ़-सुथरा रखा जाये, इसकी अच्छी देख-रेख हो, वक़्त पर इसे ईंधन दिया जाये, इसकी ज़रूरी मरम्मत की जाये। तुम इसे प्यार से रखते हो, इसकी अच्छी देखभाल करते हो, इसे एक बार इस बात का विश्वास होना चाहिए, फिर देखो तो यह कितना अच्छा काम करता है। फिर तो यह तुम्हारा हर काम करने को तैयार हो जायेगा। तुम अभी-अभी कह रहे थे कि यह बहुत बढ़िया मशीन है। मगर ड्राइवर के बिना यह निरे ढांचे का ढांचा ही रह जाता है। बेजान धातु के सिवा तब तो यह कुछ भी नहीं रहता। मगर इनसान का हाथ लगते ही, ड्राइवर के सीट पर बैठते ही इसमें ज़िन्दगी आ जाती है। तो बात कुछ इस तरह है, मेरे दोस्त! मशीन बढ़िया बनाने के लिये बढ़िया आदमी की ज़रूरत होती है।"

अनुभवी मिस्तरी के मुंह से अपनी तारीफ़ सुनकर लड़के की ख़ुशी का कोई ठिकाना न रहा।

"शुक्रिया, इवान-आग़ा!" वह बड़बड़ाया। "बहुत बढ़िया बात कही है आपने।"

"तो ठीक है, अपने ट्रैक्टर को आलतिनसाय में ले जाओ। इसकी जांच-पड़ताल होनी चाहिये।"

पोगोदिन ने ड्राइवर की सीट से अपनी जाकेट और थैला उठा लिया और बड़े मज़े-मज़े गुलामों की पहाड़ी के दामन में बहनेवाले चश्मे की तरफ़ चल दिया।

चमड़े की जाकेट अपने कन्धे पर डाले और थैला हाथ में झुलाते हुए पोगोदिन फूलों से ढंकी हुई एक चरागाह पार कर रहा था। बसन्त अपने पूरे जोबन पर था।

लम्बी-लम्बी घास में झींगुर झीं-झीं कर रहे थे। व्याध-पतंग फलों के ऊपर मंडरा रहे थे। उनके तने हुए बिलौरी पंखों में चमक थी। मोटे और भद्दे गोबरैले ज़मीन के ऊपर भनभना रहे थे। धूप और बसन्त से मस्त

होकर लवा पक्षी अपना मधुर गान अलाप रहे थे जो आकाश में गूंज-गूंज जाता था।

पोगोदिन बर्फ़ और जंगली फूलों की सुगन्ध से लदी हुई ठण्डी पहाड़ी हवा के झोंकों का ख़ूब मज़ा ले रहा था। इस वक़्त उसका मन हल्का था, निश्चिन्त था। पन्द्रह दिन पहले, कम्युनिस्ट पार्टी की एक सभा में उसने एक ख़ास दिन तक बुवाई का काम बहुत बढ़िया ढंग से पूरा करने का वादा किया था। उसने अपनी बात रख ली थी। अब वह आराम कर सकता था, मज़े-मज़े फूलों से लदी चरागाह को पार करता हुआ बर्फ़ की तरह ठण्डे चश्मे की तरफ़ जा सकता था। उसने कम्युनिस्ट का वादा पूरा कर दिया था।

अभी तो और भी बहुत-सा काम बाक़ी था। बुवाई से तो श्रीगणेश ही हुआ था। बुवाई के बाद गोड़ाई, पौधों पर मिट्टी चढ़ाने और दवाइयां छिड़कने की बारी थी और सबसे बाद में थी कटाई।

कपास चुननेवाली मशीनें इसी साल मिलनेवाली थीं। इनके लिये प्रशिक्षण आरम्भ करने का वक़्त आ गया था। इस बात का भी फ़ैसला करना था कि किसके ज़िम्मे यह काम लगाया जाये। पोगोदिन अपने ख़्यालों में इस तरह खो गया था कि ग़ुलामों की पहाड़ी तक का बाक़ी रास्ता कब तय हो गया, उसे इसका पता तक न चला।

तीन महीने पहले आयक़िज़ ने यह चश्मा खोजा था। इस समय यह चश्मा साफ़ पानी से लबालब भरे प्याले की तरह दिखायी दे रहा था और धूप में चमक रहा था। इस जगह काम करनेवाली कोमसोमोली टोली ने पुराने ठूंठों को जड़ से खोदकर निकाल दिया था और जहां से चश्मा फूटता था उस पहाड़ी का कुछ हिस्सा भी काट डाला था।

तालाब के ऊपर एक मटमैला-सा पत्थर झुका हुआ था। चश्मा इसी पत्थर के नीचे से बहता था।

पोगोदिन ने अपनी चाल तेज़ कर दी। उसने चमड़े की जाकेट और थैला दूर फेंका, क़मीज़ का गलेवाला बटन खोला और आस्तीनें ऊपर चढ़ा लीं। अपना तपता हुआ चेहरा, गर्दन और हाथ, वह बर्फ़ जैसे ठण्डे पानी से धोयेगा, इसी बात की पूर्वाशा से उसका मन गद्‌गद हो रहा था।

"पहले हाथ-मुंह धोऊंगा और फिर घास में लेटकर झपकी लूंगा... यही सौ दो सौ... मिनटों के लिये..."

वह पानी पर झुका और चौंककर पीछे हट गया। ताल के साफ़ पानी में हंसती हुई एक लड़की का चेहरा दिखाई दे रहा था।

"लाला," पोगोदिन ने लड़खड़ाती आवाज़ में कहा और इस सपने को झुठलाने के लिये आंखें बन्द कर लीं। उसे यक़ीन था कि उनींदा होने की वजह से उसका दिमाग़ उसे धोखा दे रहा है।

उसने बार-बार देखा। मगर लड़की का चेहरा ज्यों का त्यों बना रहा। पोगोदिन ने गर्दन ऊपर उठाई और अपने इर्द-गिर्द नज़र डाली। आगे की तरफ़ झुके हुए उस पत्थर पर लाला बैठी थी – सजीव, जीती-जागती।

पोगोदिन ने आलिमजान की बहन को कई बार पहले भी देखा था। उसके दिल ने उसे यह बता दिया था कि लाला जैसी प्यारी लड़की से उसकी पहले कभी मुलाक़ात न हुई थी। नज़दीक से देखने का मौक़ा उसे कभी न मिला था और अब लड़की की ख़ूबसूरती से वह दंग-सा रह गया।

दोनों ही घबराहट-सी अनुभव कर रहे थे। लाला भी कुछ अजीब-अजीब ढंग से पोगोदिन को देख रही थी और चुप थी।

"सलाम, लाला," पोगोदिन ने आख़िर हिम्मत की।

"सलाम, इवान बोरीसोविच," लाला ने जवाब दिया, "बुवाई ख़त्म कर चुके?"

"हां, अभी घड़ी भर पहले। वहां तो भट्ठी जल रही थी और धूल भी बड़ी थी। इसीलिये मैं यहां चला आया – ज़रा ताज़ादम होने के लिये।"

"और मैंने आपको डरा दिया!"

"ओह नहीं, बिल्कुल नहीं। हां, मैं ज़रा घबरा गया था। आपके यहां होने की उम्मीद नहीं की थी मैंने।"

"हां, तो धोइये हाथ-मुंह!"

लाला ने उसकी तरफ़ पीठ कर ली। पोगोदिन नीचे की तरफ़ झुक गया और उसने पानी लेने के लिये चुल्लू बढ़ाया। मगर उसके हाथ हवा में तैरते-से रह गये। घड़ी भर पहले जिस पानी में लाला की सूरत प्रतिबिम्बित थी, वह उसी पानी को छुए तो कैसे? उसे लगा कि पानी को हिलाकर वह कोई बड़ा गुनाह करेगा।

वह वहां से हट गया। लाला अभी तक पत्थर पर बुत बनी बैठी थी।

"अगर मैं यहीं बैठकर ज़रा अपनी सफ़ाई कर लूं, तो आप चली तो न जायेंगी?" उसने सीधे-सादे, काम-काजी ढंग से पूछा।

"नहीं, मैं नहीं जाऊंगी।"

पोगोदिन ने तेल और मिट्टी से काले हुए अपने हाथों को ज़ोर-ज़ोर से रगड़ना शुरू किया। वह अपने साथ साबुन न लाने के लिये बुरी तरह ख़ुद को कोसता जाता था। चाहे वह कितना भी क्यों न रगड़े अपने हाथों को, तेल और चिकनाहट तो छूटने से रही।

हताश होकर उसने तालाब की तह से कुछ सफ़ेद बालू ली और उससे अपने हाथों को रगड़ने लगा। इससे कुछ थोड़ा-सा काम बना। उसने अपने चेहरे को भी बालू से रगड़-रगड़कर साफ़ किया, रूमाल से उसे पोंछा, बालों को संवारा, खींचकर क़मीज़ ठीक की और लाला के पास जा पहुंचा। उसका चेहरा कहीं-कहीं से हल्की रगड़ खा गया था, उसे वहां जलन महसूस हो रही थी, मगर जिस्म में ताज़गी आ गयी थी।

"अच्छा, अपना हाल-चाल सुनाइये। हमारे प्यारे हलीमबाबा का बाग़ लगाने का काम कैसे चल रहा है?" पोगोदिन ने पूछा।

"पेड़ लगाने का काम तो हम आज पूरा कर चुके। हलीमबाबा आराम करने गये हैं और बाक़ी सब लोग खाना खा रहे हैं। मैं भी घर की तरफ़ जा रही थी, मगर चश्मे के पास ठहर गयी और फिर अचानक आप नज़र आ गये।"

"आपके हाथ में यह क्या है?"

"जंगली पोस्त के फूल। मैं तो ढेर-सारे लाने की सोच रही थी। बहुत-से फूलों से कमरा प्यारा लगने लगता है।"

"तो फिर इन्तज़ार किस बात का है? मैं आपकी मदद को तैयार हूं, लाला। देखती हैं उन फूलों को?"

लाला पहाड़ी से नीचे दौड़ती हुई चुपचाप आगे-आगे जाने लगी।

पोगोदिन फूल चुनता हुआ मन ही मन अपने को कोस रहा था कि उसे कोई बात क्यों नहीं सूझती, उसके मुंह में ताला क्यों पड़ा हुआ है। लाला को तो मेरे साथ ऊब महसूस हो रही होगी। मगर कोई दिलचस्प बात करने की उसने जितनी अधिक कोशिश की, उसकी कल्पना ने उसका उतना ही कम साथ दिया। आख़िर वह लाला से ट्रैक्टरों की मरम्मत की चर्चा तो कर न सकता था या सीसे की कमी का ज़िक्र तो न छेड़ सकता था, जिसकी मशीन-ट्रैक्टर स्टेशन के लोग काफ़ी फ़िक्र न कर रहे थे।

अपनी इस अटपटी-सी चुप्पी में वे दोनों फूल चुनते रहे। मगर जब वे

फूलों से लद गये और उनके गुलदस्ते बनाने के लिये ढाल पर बैठ गये, तो किसी कोशिश के बिना बातचीत का सिलसिला पड़ा।

बातचीत यहां से शुरू हुई कि वे दोनों पहली बार कब और कहां मिले थे। मगर वे इस बारे में सहमत न हो सके। पोगोदिन इस बात पर अड़ा हुआ था कि उसने लाला को पिछली पतझर में स्थानीय शौक़िया कलाकारों के कन्सर्ट के समय देखा था; दूसरी तरफ़ लाला इस बात पर ज़ोर दे रही थी कि वे दोनों जाड़े में आयक्रिज़ के दफ़्तर में मिले थे। आख़िर उन्होंने यह बहस बन्द कर दी और दूसरी चीज़ों की चर्चा करने लगे।

"इवान बोरीसोविच, क्या आप अपनी पढ़ाई जारी रखने की सोच रहे हैं?" लाला ने पूछा।

पोगोदिन इस सवाल के लिये तैयार न था।

"मालूम नहीं, बहुत मुमकिन है," उसने ढुलमुल-सा जवाब दिया।

"लड़ाई में आप टैंक चलाते थे न? हवाई जहाज़ भी उड़ा सकते हैं क्या?"

उसका मन तो हुआ कि "हां" कह दे। हवाबाज़ में उसकी दिलचस्पी होना तो लाज़िमी बात है। मगर नहीं, सच का दामन कभी न छोड़ना चाहिये, छोटी-मोटी बातों में भी नहीं।

"नहीं, हवाई जहाज़ मैं नहीं उड़ा सकता," पोगोदिन ने उसांस ली, "टैंक तो मैं ज़रूर चलाता रहा हूं। कुछ लोगों का ख़्याल था कि मैं टैंक अच्छा चलाता हूं। मगर हवाई जहाज़... नहीं, वह तो मैं नहीं उड़ा सकता... और क्या आप अपनी पढ़ाई जारी रखने का इरादा रखती हैं?"

"हां, पक्का इरादा रखती हूं, इवान बोरीसोविच," लाला ने ज़ोर देकर कहा।

"कब शुरू कर रही हैं?"

"इस पतझर में।"

"कहां और क्या पढ़ेंगी?"

"कालिज में बाग़बानी सीखूंगी..."

लाला क्षण, दो क्षण चुप रही... "और बाक़ी सभी चीज़ों में मेरी आदर्श है आयक्रिज़। मैं आयक्रिज़ की तरह बहादुर, मज़बूत, इरादे की पक्की और सुन्दर बनना चाहती हूं।"

"आलतिनसाय में आयक़िज़ से भी ख़ूबसूरत लड़कियां हैं," पोगोदिन ने अचानक ही कह दिया।

"अजी नहीं! इस मामले पर मुझसे बहस मत कीजिये! आयक़िज़ को मैं अपने बचपन से जानती हूं।"

पोगोदिन उससे बहस न करना चाहता था। मगर उनकी दिलचस्प बातचीत ने यह अजीब-सा रुख़ ले लिया था।

"और आलिमजान?" पोगोदिन ने पूछा।

"आलिमजान? बिलकुल अचानक ही आपने यह पूछ लिया है। मैं समझती हूं कि आलतिनसाय में वह सबसे समझदार और सबसे प्यारा आदमी है।"

लाला ने जल्दी से अपनी बात को साफ़ करते हुए कहा:

"जानते हैं कि क्यों मैंने उसे सबसे प्यारा आदमी कहा है? मेरा मतलब यह था कि आयक़िज़ के लिये वही सबसे ज़्यादा ठीक आदमी है। वह समझदार है, सुलझे हुए ख़्यालोंवाला है, और... यही कि उसमें सब कुछ है..." लाला महसूस कर रही थी कि वह अपनी बातों में उलझी जा रही है।

"यह बिल्कुल ठीक है," पोगोदिन ने उसकी मदद करने की कोशिश की, "आयक़िज़ और आलिमजान एक दूसरे के लिये बहुत ही मुनासिब हैं। आलिमजान बलूत के उस मज़बूत पेड़ जैसा है जिसे कोई भी तूफ़ान नहीं गिरा सकता। और आयक़िज़... किसी लड़की को पेड़ से तुलना करना तो ठीक नहीं लगता। उसकी तो सितारे से तुलना की जा सकती है।"

लेकिन उसको यह मौक़ा नहीं मिला कि वह लाला की तारे से तुलना करे—लाला को इसी बात की शंका हुई और वह उचककर खड़ी हो गई तथा जल्दी से अपने घर की तरफ़ चल दी।

१८

पहाड़ों में रात भर ज़ोरों का तूफ़ान आता रहा। काले और मनहूस-से बादल उमड़-घुमड़कर आते—पहाड़ी चोटियों को छूते और नीचे घाटियों में रेंगते चले जाते। पहाड़ के दामन में पहुंचकर ये बादल ज़मीन पर फैल जाते और तब बहुत ही धीरे-धीरे हिलते-डुलते। तेज़ हवा के झोंकों ने पेड़ों को झुका डाला। मगर इस तेज़ हवा के झोंके भी बादलों को तितर-बितर करने में असफल रहे।

तूफ़ान ग़ुस्से से पागल होकर चीख़ रहा था, ग़ुर्रा रहा था। पहाड़ों में बिजली कड़क रही थी। बादलों की गड़गड़ाहट दर्रों-दरारों में गूंज-गूंज उठती थी, मगर पानी की एक भी बूंद न बरसी थी। दिन निकला – धुंधला-धुंधला, उदास-उदास। सूरज बादलों की घनी और स्याह चादर को चीरने में नाकाम रहा। सिर्फ़ पूरब में ही मद्धिम-मद्धिम, हल्की-हल्की रोशनी दिखाई दे रही थी।

आलिमजान उठा तो उसका सिर भारी-भारी था। वह उठते ही जल्दी से खिड़की की तरफ़ गया। मकानों की खिड़कियों और पेड़-पत्तों पर हल्की-हल्की रोशनी थी। गलियों में रेत उड़ती फिर रही थी। आलिमजान मौसम के तेवर देखकर घबरा गया। पिछली रात तो सब कुछ ठीक था, बड़ा सुहावना मौसम था। आलिमजान और क़ादिरोव ने खेतों के चक्कर लगाये थे, कपास की फूटती हुई कोंपलें देखी थीं। डूबते हुए सूरज का दृश्य बहुत प्यारा था, सूरज लाल-लाल था, सुनहरा था।

कल ही क़ादिरोव और आलिमजान ने सोचा था कि अब कपास के पौधों को छांटकर कम करने का वक़्त आ गया है। मगर यह तूफ़ान तो उनकी सभी योजनायें गड़बड़ कर डालेगा।

लाला अभी तक सो रही थी। आलिमजान ने मुश्किल से नाश्ता किया। उसे लगा कि खाने-पीने की चीज़ें उसके गले में अटककर रह जायेंगी। उसने अपने अख़बार उठाये और टोपी पहनी।

वह किधर जाये? आयक़िज़ के पास? आयक़िज़ के पास जाने का वह कोई बहाना खोजने लगा।

एक के बजाय, दो बहाने मिल गये।

पहला। आलतिनसाय कोलख़ोज़ों के बारे में कल के अख़बार में एक लेख छपा था। लेख अच्छा था, ढंग से लिखा गया था। इस लेख में उनके कोलख़ोज़ के कम्युनिस्टों के सम्बन्ध में बताया गया था कि किस तरह पानी हासिल करने के संघर्ष में उन्होंने लोगों को राह दिखाई है, कि कैसे आस-पास के कोलख़ोज़ों ने इसके लिये मिल-जुलकर यत्न किये, कैसे उन्हें जीत हासिल हुई और हज़ारों हेक्टर अछूती ज़मीन जोती गयी। इस लेख में तेज़ी से बन रहे बांध का भी ज़िक्र था। यह लेख पढ़कर आलिमजान को बेहद मज़ा आ रहा था, उसकी आत्मा झूम-झूम जाती थी, ख़ुशी से नाच-नाच उठती थी। आयक़िज़ उम्रज़ाक़ोवा को इस लेख में बहुत जगह

दी गयी थी, इस कारण उसे यह लेख और भी अधिक पसन्द था। लेख में बताया गया था कि आयक़िज़ एक युवा कम्युनिस्ट और आलतिनसाय हलक़ा-सोवियत की अध्यक्षा है। चश्मों को बहाल करने के लोक-आन्दोलन का संघटन-कार्य उसीने किया है और निर्माण-कार्य की सबसे महत्वपूर्ण शाखा – बांध-निर्माण – की निरीक्षिका भी वही है।

ज़ाहिर है कि डाकिये ने वह अख़बार उम्रज़ाक़-अता के घर भी दिया होगा। मगर बूढ़े उम्रज़ाक़-अता अच्छी तरह लिखना-पढ़ना नहीं जानते थे और इतना लम्बा लेख पढ़ना तो बिल्कुल उनके बस का रोग न था। और आयक़िज़ ऐसी लड़की थी नहीं कि जिस लेख में उसकी इतनी ज्यादा तारीफ़ की गयी हो, उसे अपने अब्बा को पढ़कर सुनाये। इसका मतलब यह था कि कोलख़ोज़ के पार्टी संगठन के सेक्रेट्री के रूप में उसका यह फ़र्ज़ हो जाता था कि उम्रज़ाक़-अता को वह लेख पढ़कर सुनाये जिसमें उस सारे कोलख़ोज़ की बेहद तारीफ़ की गयी थी।

दूसरा बहाना यह था कि आयक़िज़ पिछले कई दिनों से आलतिनसाय कोलख़ोज़ में न आयी थी। आलिमजान तीन बार बांध पर हो आया था और एक बार भी उससे मुलाक़ात नहीं हुई थी। बांध के अलावा आयक़िज़ को हलक़ा-सोवियत का काम भी देखना-भालना पड़ता था और फिर पहाड़ के दामनवाले उन अनेक कोलख़ोज़ों का तो ज़िक्र ही क्या किया जाये जहां पहली बार कपास उगायी जा रही थी। जिस दिन वह पोगोदिन के साथ कैम्प में आयी थी, उस दिन के बाद से आलिमजान ने उसे नहीं देखा था। आयक़िज़ इस तरह उसे जला-सता क्यों रही है? क्या अब वह उसे प्यार नहीं करती? मगर वह यह मानने को तैयार न था। आयक़िज़ के मामले में वह बहुत कायर था, उसकी ज़बान से एक शब्द भी न निकल पाता था। इसके लिये वह अपने से नफ़रत करता था। वह इस मामले को हमेशा के लिये साफ़ कर लेना चाहता था।

आलिमजान जैसे ही घर का दरवाज़ा बन्द करके बाहर निकला कि बर्फ़-सी ठण्डी हवा के झोंकों ने उसे आ लिया। वह झुका-झुका-सा तेज़ी से गली की तरफ़ चल दिया।

गली में उसने देखा कि लगभग हर फाटक पर कुछ लोग खड़े हुए उमड़ते-घुमड़ते काले बादलों को परेशान नज़रों से देख रहे हैं।

आलिमजान अपने जाने-पहचाने फाटक पर जा पहुंचा। एक अजीब-

सी उलझन उसके मन की भावनाओं को दबोचे थी। इस फाटक से वह अनेक बार गुज़रा था। वह आयक़िज़ से मिल सकेगा, यही भाव हर बार उसके अन्दर गुदगुदी पैदा करता था! इस जगह की हर चीज़ उसके लिये एक ख़ास मानी रखती थी। इस घर के आंगन के हर पत्थर पर आयक़िज़ के पैरों के निशान थे। उसके फुर्तीले हाथ ने इस फाटक, ओसारे की रेलिंग, हौज़ के किनारे और इस घर के अन्दर जानेवाले दरवाज़े को छुआ था।

आलिमजान ने फाटक खोला।

आयक़िज़ आंगन में ही थी। हाथ में फावड़ा लिये वह सिंचाई की नाली के पानी को क्यारियों की तरफ़ मोड़ रही थी।

"सलाम, आयक़िज़," उसने धीरे से कहा।

आलिमजान ने उसके हाथ से फावड़ा ले लिया और काम जारी रखा। आयक़िज़ सोफ़े के किनारे पर बैठ गई और आलिमजान को चुपचाप काम करते हुए देखने लगी। आलिमजान सूखी मिट्टी के ढेर और छोटे-छोटे कंकर-पत्थरों को साफ़ करके पानी के लिये रास्ता बना रहा था।

"मैं तो बिलकुल हिम्मत छोड़ बैठी थी," आयक़िज़ सोच रही थी, "फिर भी इसने मुझसे एक भी लफ़्ज़ तो नहीं कहा। न तो मुझे डांटा-डपटा और न ही... दिलासा दिया। भला क्यों? क्या वह जान-बूझकर मुझे माफ़ कर रहा है। क्या यह रहम है? उसके बर्ताव में तो कोई तबदीली नहीं आई, मगर उसके दिल में क्या है, दिल की गहराइयों में क्या है? क्या वह सब कुछ जानता है? स्मिर्नोव ने मुझे जो डांट पिलायी थी, क्या वह उसके बारे में भी जानता है? क्या वह यह जानता है कि तब हमारे लोग मेरे ख़िलाफ़ हो गये थे?"

आयक़िज़, आलिमजान की झुकती और सीधी होती हुई पीठ और फावड़े के साथ गीली मिट्टी के उठते-गिरते हुए टुकड़ों को देख रही थी।

"वह जानता तो ज़रूर सब कुछ होगा," उसने सोचा, "जो कुछ हो रहा है, वह सभी कुछ जानता है। जैसे कोई किसी कमज़ोर पर रहम करता है, वह मुझसे भी वैसे ही कर रहा है। मैं ऐसा नहीं चाहती। इससे भी नहीं चाहती। मैं कमज़ोर नहीं हूं। क्या वह मुझे प्यार करता है? हां, प्यार तो करता है। मगर क्या उसे मुझपर भरोसा भी है?"

आयक़िज़ अपने घुटनों पर हाथ रखे बैठी थी। वह बिलख-बिलखकर रोना चाहती थी।

"तुम्हें हुआ क्या है, आयक़िज़?" काम छोड़े बिना और घूमकर देखे बिना आलिमजान ने पूछा, "तुम तो हम लोगों को बिल्कुल ही भूल गयी हो! कितने दिन हो गये तुम्हें देखे हुए!"

"मगर, क्या किसी को मेरा ख़्याल आया?" उसकी आवाज़ कांप रही थी।

"ज़रूर ख़्याल आया, आयक़िज़!"

"मुझे तो पता भी नहीं चला कि कैसे ये दिन गुज़र गये।"

"यह बहुत बुरी बात है, आयक़िज़।"

"क्या बुरी बात है?"

"कि तुम हमें भूल गयी हो।"

"तो क्या तुम इसीलिये यहां आये हो?"

"क्या मतलब है तुम्हारा?"

"मेरा मतलब है कि क्या तुम यही मालूम करने आये हो कि इन दिनों मैं कोलख़ोज़ में क्यों नहीं आई?"

"नहीं, सिर्फ़ इसीलिये नहीं। हां, इसके लिये भी।"

"मैं बहुत ही व्यस्त थी, आलिमजान-आग़ा। बांध कुछ ही दिनों में पूरा होनेवाला है। काम आजकल बड़े ज़ोरों पर है। और इसके अलावा कुछ कोलख़ोज़ों का काम ढंग से चल भी नहीं रहा है। जहां सब कुछ ठीक-ठाक है, वहां जाने के बजाय मुझे ज्यादा वक़्त ऐसी ही जगहों पर बिताना पड़ता है।"

आलिमजान ने उसे घूरकर देखा। वह अपने चेहरे पर एक नक़ाब ओढ़े थी – शान्ति और धीरज की नक़ाब। मगर आलिमजान इस परदे, इस नक़ाब के धोखे में नहीं आया। आयक़िज़ ज़रूर उससे कुछ छिपा रही है। फिर से घबराहट और शंका ने आलिमजान के मन को दबोच लिया। आयक़िज़ के हर शब्द के पीछे कोई राज़ छिपा था। आलिमजान को इससे घबराहट महसूस हुई। इन राज़ों के फेर में न पड़कर और इनसे बचते हुए उसने कहा:

"कपास के हमारे सभी खेत ख़ूब अच्छा रंग दिखा रहे हैं। मैं चाहता हूं कि तुम वहां आकर उनपर एक नज़र डाल लो, वरना हमारे लोग

यह सोचेंगे कि तुम दूसरे कोलख़ोज़ों को हमारे कोलख़ोज़ पर तरजीह देती हो। सच कहता हूं कि कपास के अंकुर ख़ूब अच्छे फूट रहे हैं। हमारे कोलख़ोज़ पर तुम्हें सचमुच नाज़ होगा।"

"तो क्या इस कोलख़ोज़ की वजह से भी मुझे शर्म से सिर झुकाना होगा जिसने पानी हासिल करने के संघर्ष में पहल की!"

"बुवाई में भी हम ही सबसे आगे रहे हैं और फ़सल भी हमारे यहां ही सबसे ज्यादा होगी। एक बार वहां आकर तुम देख ज़रूर लो।"

आयक़िज़ चुप रही।

"सुवानक़ुल की टोली का क्या हाल है?" काफ़ी दिलचस्पी दिखाते हुए आयक़िज़ ने पूछा। "उसके खेत में झाऊ की कितनी ज्यादा जड़ें थीं, याद है न? पोगोदिन को तो अच्छी ख़ासी मुसीबत का सामना करना पड़ रहा था।"

"चाहकर भी कोई उन जड़ों को नहीं भूल सकता। बहुत ही मुसीबत की मारी जगह थी वह। मगर कपास के पौधे वहां बढ़ ख़ूब रहे हैं, मेरे खेत से किसी तरह कम नहीं। आयक़िज़, मैं तुमसे यह पूछना चाहता था कि क्या तुमने कल का अख़बार पढ़ा है?"

आयक़िज़ के चेहरे पर सुर्ख़ी दौड़ गयी। उसने तमतमाते गालों पर अपने हाथ रख लिये।

"अख़बार तो मैंने पढ़ा था। वह लेख मुझे बिल्कुल ही पसन्द नहीं आया। सब कुछ बहुत बढ़ा-चढ़ाकर लिखा गया है जैसे कि हम सभी बड़े सूरमा हों, सभी बड़े समझदार और आगे बढ़े हुए हों, कि आलतिनसाय कोलख़ोज़ दूसरों से बहुत अच्छा हो! मगर तुम तो जानते ही हो कि यह सच नहीं है। हम तो मामूली सोवियत लोग हैं और वह भी सभी तरह के—वे जो छलांगें लगाते हैं और वे जो रेंगते हैं। काहिल भी हैं। अधिकारियों में भी सभी तरह की कमियां हैं। तो तुम क्या मेरा मज़ाक़ उड़ाने के लिये यहां आये हो?"

धूप से संवलायी हुई उसकी उंगलियों में अब उसका पीला पड़ा हुआ चेहरा दिखाई दे रहा था। उसने कठोर और झल्लायी आंखों से आलिमजान की आंखों में देखा।

आलिमजान की समझ में न आ रहा था कि वह उसे क्या जवाब दे। इसी वक़्त उम्रज़ाक़-अता दबे पांवों उनके पास आ पहुंचे।

"हमारे कोलख़ोज़ के बारे में अख़बार में क्या लिखा है, सो तो मैं नहीं जानता। मगर मेरी राय में हमारे लोग तारीफ़ के क़ाबिल हैं ज़रूर। शाबाश मिलने से लोगों में एक नयी ताक़त, नया जोश आ जाता है। तुम लोग चाहे जो भी कहो, यह हक़ीक़त है कि चश्मों को फिर से चालू करके हमने दूसरे कोलख़ोज़ों के मुक़ाबले में ज़्यादा काम किया है। हमारी ज़मीनों की सफ़ाई का काम भी कुछ कम मुश्किल नहीं था। आधे से ज़्यादा इलाक़ा झाऊ की जड़ों, कांटों और दूसरी जंगली झाड़ियों से भरा पड़ा था। इनमें हल चलाना भी कौनसा आसान काम था। पोगोदिन और उसके ट्रैक्टरों ने हमारी बड़ी मदद की है, हम उसके शुक्रगुज़ार हैं। हमारे पड़ोसियों का काम ज़्यादा आसान था। ज़मीनों की सफ़ाई तो उन्हें बिल्कुल ही नहीं करनी पड़ी। इसलिये हम ईमानदारी से यह कह सकते हैं कि हमारे कोलख़ोज़ ने बढ़िया काम किया है। जिन लोगों ने लेख लिखा है वे भी अपना काम जानते ही होंगे। बेकार ही तो वे हमारे लोगों की तारीफ़ करने से रहे।"

"फिर भी यह न भूलना चाहिये कि हमारी बहुत-सी ज़मीन अब भी झाड़ियों से भरी पड़ी है," आलिमजान ने कहा।

"हमें हाथों से तो वह साफ़ करनी न होगी," आयक़िज़ ने रुखाई से कहा, "तुम्हें तो यह अच्छी तरह मालूम है कि हमारी सरकार ने आलतिनसाय की ज़मीनों को खेती के लायक़ बनाने का प्रस्ताव पास किया है और इसके लिये वह हमें कुछ और ट्रैक्टर देने का फ़ैसला भी कर चुकी है। पतझर के आते-आते हम आलतिनसाय के दायें किनारे की सारी ज़मीन में हल चला देंगे और उसे कपास उगाने और बाग़-बगीचे लगाने लायक़ बना देंगे।"

आलिमजान ने फूलों को पानी देने का काम ख़त्म करके नाली का पानी रोक दिया। उसने फावड़ा नीचे रखा और उम्रज़ाक़-अता के पास गया।

"अच्छा बेटा, हमारे बारे में जो लेख छपा है, उसे अब मुझे पढ़कर सुनाओ," बूढ़े ने कहा।

"ख़ुशी से, अब्बाजान। इसमें आपकी बेटी का भी ज़िक्र है..." आलिमजान का तीर निशाने पर नहीं लगा था।

आयक़िज़ बुरी तरह झल्ला उठी।

"बाद में मैं ख़ुद पढ़कर सुना दूंगी, अब्बाजान। मेहमान को अन्दर बुला लीजिये। चाय कभी की ठण्डी हुई जा रही है," ऊंची आवाज़ में यह कहती हुई वह अन्दर भाग गयी।

आंगन के चारों तरफ़ ऊंची बाड़ बनी हुई थी। तूफ़ान की आवाज़ कम सुनाई दे रही थी। वैसे हवा अभी तक बहुत तेज़ थी। बाग़ की दीवार और छत पर धूल, टहनियां और पत्ते बड़े ज़ोर से आकर टकरा रहे थे। दिन की रोशनी को छिपाते हुए धूलभरे मनहूस बादल अभी भी आसमान में छाये हुए थे।

उम्रज़ाक़-अता अब आगे-आगे घर के अन्दर चले जा रहे थे। वह बार-बार, बहुत ग़ौर से मनहूस आसमान पर नज़र डालते और लानत भेजते जाते थे।

एक बड़े तुर्कमानी क़ालीन पर साफ़-सुथरा दस्तरख़ान बिछा था। उसी की बग़ल में एक समोवर गर्म हो रहा था। अच्छी तरह से सेंके हुए नान भी वहां रखे थे और शोरबेवाले प्याले भी। यह सभी कुछ आलिमजान को बहुत प्यारा था, जाना-पहचाना था।

सभी बैठ गये। उम्रज़ाक़-अता ने शोरबे का प्याला उठाया ही था कि हवा का एक तेज़ झोंका खिड़की को खोलता हुआ अन्दर आया। शीशा ज़ोर से खड़खड़ाया। पहाड़ों की तरफ़ से एक बड़ा और नीला-काला बादल गांव पर झुका आ रहा था। उम्रज़ाक़-अता ने खिड़की बन्द की और फिर धीरे से क़ालीन पर बैठ गये।

कमरे में अन्धेरा हो गया।

"मुसीबत, मेरे बच्चो, मुसीबत।"

इतने ज़ोर का गरजन हुआ कि दीवारें हिल गयीं। समोवर के चोंगे के ऊपर रखी हुई केतली उछल पड़ी।

आयक़िज़ के चेहरे का रंग उड़ गया। उसने अपना दिल थाम लिया।

"कैसे ज़ोर का धमाका हुआ है! मेरा दिल तो बुरी तरह धकधक कर रहा है," वह उठ खड़ी हुई और घबरायी हुई आवाज़ में बोली, "काम पर जाने का वक़्त हो गया... हमारे लोग बांध पर पहुंच चुके हैं... मुझे भी जाना चाहिये।"

"यह धमाका पहाड़ों पर नहीं, कहीं पास ही हुआ है," चमचा

नीचे रखते हुए आलिमजान ने कहा, "मैं जाकर देखता हूं। लगता है कि कहीं नज़दीक ही यह धमाका हुआ है।"

"बेकार है, मत जाओ बेटा," उम्रज़ाक़-अता ने उदास होते हुए कहा, "विज्ञान, बेशक शक्तिशाली है, मगर क़ुदरत के सामने अभी हमारी पेश नहीं चलती। बिजली पर भला तुम कैसे क़ाबू पाओगे? किस हथियार का इस्तेमाल करोगे?"

"बिजली से बचानेवाले साधन भी हैं। और जब हमारे साथी मुसीबत में हों तो हमें उनकी मदद करनी चाहिये।"

आलिमजान ने खिड़की खोल दी।

गली में अन्धेरा-अन्धेरा-सा छाया हुआ था। आलतिनसाय पर अन्धेरी झुकी हुई थी। तूफ़ान का ज़ोर कुछ कम हो गया था। पेड़ों पर जो थोड़े-से बचे-खुचे पत्ते थे, हवा अब उनमें से सांय-सांय करती हुई गुज़र रही थी।

कुछ देर तक ही सन्नाटा रहा। फिर ज़ोर का गरजन हुआ, मगर पहले जैसा नहीं। गरज के साथ ही साथ बारिश की मोटी-मोटी बूंदें ज़मीन पर पटापट पड़ने लगीं।

उम्रज़ाक़-अता और आयक़िज़ भी आलिमजान के पास ही जा खड़े हुए थे।

बारिश तेज़ होती गयी और फिर झड़ी में बदल गयी। पानी की लम्बी और टेढ़ी-मेढ़ी धारायें लोहे की सलाख़ों जैसी लगतीं। ये हवा के थपेड़ों के विरुद्ध संघर्ष करती हुई ज़मीन, छतों और पेड़ों से टकरा रही थीं।

"ऐसे ही मामूली-सी बारिश है! अल्लाह ने चाहा तो जल्द ही ख़त्म हो जायेगी। कोई ख़ास नुक़सान नहीं होगा," उम्रज़ाक़-अता ने कहा।

मगर तभी उम्रज़ाक़-अता की इस दबी-घुटी उम्मीद पर मानो पानी फेरते हुए कोई चीज़ खिड़की के शीशे से आकर टकरायी। एक छोटी-सी सफ़ेद चीज़ खिड़की की चौखट से टकराकर उछली और गीली धरती पर जा गिरी। देखते ही देखते हज़ारों ऐसे छोटे-छोटे सफ़ेद कंकड़-से सड़क पर उछलते दिखाई देने लगे, खिड़कियों के शीशों पर तड़ातड़ करने लगे और पेड़ों के बीच चाबुक से सटकारने लगे।

उम्रज़ाक़-अता ने अपनी बेटी और आलिमजान को एक तरफ़ हटा दिया

ग्रौर ग्रपने दोनों हाथों का प्याला-सा बनाते हुए उन्हें खिड़की से बाहर निकाला।

"ग्रोले!" इन सफ़ेद गोलियों को घूरते हुए, उम्रज़ाक़-ग्रता ने जैसे हताश होकर गहरी सांस ली, "ग्रोले!" ग्रायक़िज़ को एकटक देखते हुए उन्होंने दोहराया, "मुसीबत, बहुत बड़ी मुसीबत ग्रा पड़ी, मेरे बच्चो!"

उम्रज़ाक़-ग्रता ज़ोर से चीखे, ग्रोले उन्होंने ज़मीन पर फेंके, हाथ फैलाये ग्रौर खिड़की से बाहर कूद गये। हाथों ग्रौर घुटनों के बल वे ज़मीन पर जा गिरे, झटपट उठे ग्रौर नंगे ही पांवों कपास के खेतों की तरफ़ दौड़ चले।

यह सब कुछ ग्रान की ग्रान में हो गया। न ग्रायक़िज़ उन्हें रोक सकी ग्रौर न ग्रालिमजान ही।

उम्रज़ाक़-ग्रता एक नौजवान की तरह तेज़ी से भागे जा रहे थे। गांव के सिरे पर एल्म का एक पेड़ बिजली से झुलस गया था। वह ज़मीन पर पड़ा था ग्रौर उसमें से धुग्रां निकल रहा था। उम्रज़ाक़-ग्रता ने उसकी तरफ़ नज़र उठाकर भी नहीं देखा। वह दौड़ते गये, दौड़ते गये। ग्रोले ग्रौर तेज़ हवा के थपेड़े उनके मुंह पर ग्राकर लग रहे थे, उनके नंगे सिर पर बरस रहे थे। उन्होंने हाथों से ग्रपनी ग्रांखें ढांप लीं। उनकी कमर तक खुली हुई क़मीज़ पानी से तर-ब-तर थी।

ग्रोलों का तूफ़ान ग्रौर तेज़ होता जा रहा था। ग्रोले पहले तो छोटे थे, मगर ग्रब बिनौलों के बराबर हो गये थे।

उम्रज़ाक़-ग्रता खेतों के बीच से जाती हुई सड़क की तरफ़ मुड़ गये। वह ठोकर खाकर धम से ज़मीन पर गिरे, छाती कई जगह से छिल गयी। काफ़ी देर तक पड़े-पड़े हांफते रहे। उनकी लम्बी दाढ़ी, सफ़ेद क़मीज़, उनका चेहरा, सभी कुछ कीचड़ से लथ-पथ हो गया। जब ज़रा दम ग्राया तो उठे ग्रौर फिर से भागने लगे।

वह क्यों भागे जा रहे हैं, इस मामले में क्या मदद कर सकते हैं, सो तो वह कुछ नहीं जानते थे। उनकी टोली ने जिस दस हेक्टर में कपास उगायी थी, वह ग्रपने जिस्म के दुबले-पतले ढांचे से उसकी रक्षा तो कर न सकते थे। इसी कपास के साथ उनकी टोली की ग्राशायें जुड़ी हुई थीं। बड़े प्यार से लोगों ने कपास के नन्हे पौधों को संवारा, साफ़ किया था उनके गिर्द मिट्टी जमा की थी।

"मुसीबत! भारी मुसीबत, मेरे बच्चो!" उम्रज़ाक़-अता दौड़ते-दौड़ते ऊंची आवाज़ में बड़बड़ाते जाते थे।

सुबह ही सुबह काम करने के लिये इकट्ठे हुए कुछ किसान अब खेत-कैम्प में जमा हो गये थे।

उन्होंने उम्रज़ाक़-अता को देखा तो चिल्लाये कि वह छत के नीचे आकर अपने को तूफ़ान से बचायें। मगर वह तो भागते हुए आगे निकल गये। ज़मीन पर ओलों का क़ालीन-सा बिछ गया था। उम्रज़ाक़-अता के नंगे पांव इन ओलों पर बज-बज उठते।

उम्रज़ाक़-अता अपने खेत में पहुंचकर रुके। खेत में बर्फ़ की सफ़ेद चादर-सी बिछ गयी थी। उनके अन्दर से एक हूक-सी निकली, निराशा में उन्होंने अपना सिर हाथों में थाम लिया। उनके घुटनों में तो जैसे जान ही बाक़ी न रही थी। वह धम से ज़मीन पर गिर गये।

कुछ ही देर बाद आलिमजान भी वहां आ पहुंचा। वह बड़े मियां के जूते और कपड़े भी ले आया था। ज़ोरों से हांफता हुआ वह उम्रज़ाक़-अता के पास ही घुटने टेककर बैठ गया। बूढ़े उम्रज़ाक़, आलिमजान के गले लगकर, बिलखने और फूट-फूटकर रोने लगे। ये मजबूरी के आंसू थे। वे ज़ोर-ज़ोर से सिसकियां ले रहे थे और उनके कन्धे हिल रहे थे।

"हमारी कपास तबाह हो गयी!" वह कराह उठे, "अब हम क्या करेंगे? क्या करेंगे?"

"घबराइये नहीं, अब्बाजान," आलिमजान ने कहा। दुख के कारण उम्रज़ाक़-अता में तो जैसे जान ही न रही थी। आलिमजान चोग़ा पहनने में उनकी मदद कर रहा था। "आख़िर यह तो क़ुदरत का खेल है। हमारा तो यहां कुछ भी बस नहीं चलता। यह गाज तो कहीं भी गिर सकती है।"

ओलों के तूफ़ान का ज़ोर कम होता जा रहा था? इसके पतले पड़ते हुए आवरण में से आलिमजान ने किसी को अपनी तरफ़ घोड़े पर आते देखा। यह आयक़िज़ थी।

आयक़िज़ ने घोड़े की लगामें खींचीं, कूदकर नीचे उतरी और अपने पिता की तरफ़ भागी।

"अब्बाजान, तूफ़ान तो ख़त्म हुआ जाता है।"

"अब इसका ख़त्म होना या न होना सब बराबर है, बेटी। देखो तो

कम्बख़्त ने कितनी अधिक बरबादी कर डाली है।" बूढ़े मियां ने कांपते हाथ से खेतों की तरफ़ इशारा किया।

आयक़िज़ ने उनका हाथ पकड़ा और पहाड़ों की तरफ़ उन्हें घुमा दिया।

"उधर देखिये, अब्बाजान। बादल तो भागे जा रहे हैं। जल्द ही सूरज निकल आयेगा, ओले पिघल जायेंगे। मैं जूराबायेव से अभी-अभी टेलीफ़ोन पर बात करके आयी हूं, वे अभी-अभी यहां आनेवाले हैं।"

सचमुच ही तेज़ हवा के झोंकों ने बादलों के टुकड़े-टुकड़े कर डाले थे। वे बड़ी तेज़ी से पश्चिम की तरफ़ भागे जा रहे थे। उनका जोश ख़त्म हो चुका था। पहाड़ी चोटियां तो धूप में चमकने भी लगी थीं।

"अब क्या फ़ायदा, बेटी! अब तो सब कुछ ख़त्म हो चुका," उम्रज़ाक़-अता निराशा में बड़बड़ाते रहे।

लोग अब सभी तरफ़ से जल्दी-जल्दी खेतों में आने लगे। अपने-अपने खेत में पहुंचते ही वे धक से रह जाते, उनकी बांहें बेजान-सी होकर लटक जातीं और सिर झुक जाते।

"सुनिये, अब्बाजान," आयक़िज़ ने ऊंची आवाज़ में कहा, "मुझे बांध पर जाना है और फिर दूसरे फ़ार्मों में भी। सिर्फ़ हमपर मुसीबत आयी हो, सो बात तो है नहीं। दूसरे कोलख़ोज़ों में भी इस तूफ़ान से नुक़सान हुआ है। दिल न छोड़िये, अब्बाजान," आयक़िज़ कूदकर घोड़े पर सवार हो गयी और उसे सरपट दौड़ाती हुई कहीं की कहीं जा पहुंची।

"इस तरह की तबाही से तो हमारा पहले कभी वास्ता नहीं पड़ा," आलिमजान ने कहा। "और सुनते हैं कि नीचे की ढालू ज़मीन पर तो साल में दो-तीन बार इस क़िस्म के तूफ़ान आते हैं। वहां के अनुभवी कपास उगानेवाले लोगों ने नुक़सान से बचने के तरीक़े भी खोज निकाले हैं। ओले अपनी करनी कर गुज़रते हैं, फिर भी वे अच्छी फ़सल उगा लेते हैं। हमें उनसे इसका ढंग सीखना होगा।"

इसी वक़्त एक कार वहां आकर रुकी। इसमें जूराबायेव और ज़िला कृषि-विशेषज्ञ थे। जूराबायेव सीधे उम्रज़ाक़-अता के पास गया।

"कुछ फ़िक्र मत कीजिये, अब्बाजान! इस मुसीबत का मुक़ाबला करने का भी एक तरीक़ा है," जूराबायेव ने यह बात ऊंची आवाज़ में कही ताकि बाक़ी सभी लोग भी सुन सकें।

लोग जूराबायेव के गिर्द जमा हो गये। उम्रज़ाक़-अ्रता की उदास आंखों में आशा की चमक दिखाई दी।

"एक बार फिर कहो, बेटा। इस तबाह हुए खेत को हम नयी ज़िन्दगी दे सकते हैं, यही कहा न तुमने? यही कहा न तुमने कि हम अपनी फ़सल बचा सकते हैं?"

"सो तो हमें करना ही होगा। मगर इसके लिये बड़ी मेहनत करनी होगी। अगर हमने हिम्मत न छोड़ी तो हम कपास बचा लेंगे।"

"मेहनत से तो हम डरते नहीं हैं, बेटा। सिर्फ़ यह बताओ कि हमें करना क्या चाहिये।"

"अब हमें ज़रा भी देर न होने देनी चाहिये। हमें इस खेत में कुछ रासायनिक खाद डालकर पौधों को पानी देना चाहिये और इनके गिर्द ऊंची-ऊंची मिट्टी जमा देनी चाहिये। कपास की जड़ें सही-सलामत हैं। इसका मतलब यह है कि इनमें नये पत्ते आ जायेंगे। जहां नये पत्ते नहीं आयेंगे, वहां हमें फिर से पौधे लगाने होंगे। पड़ोसी कोलख़ोज़ों के लोग आकर आपकी मदद करेंगे। यह सबका साझा काम है। हमारे ज़िले का कृषि-विशेषज्ञ इस सिलसिले में आपको हर तरह की मदद देगा। इसलिये, अब्बाजान, अभी से उम्मीद छोड़ने की कोई बात नहीं है।"

किसानों की एक भीड़ से घिरा हुआ जूराबायेव पौधों की तरफ़ बढ़ गया। क्षितिज पर काले-मटमैले बादल थे। उनकी पृष्ठभूमि में ओलों का सफ़ेद क़ालीन और भी अधिक सफ़ेद दिखायी दे रहा था। पहाड़ों के पीछे से सूरज की तिरछी किरणें सामने आ रही थीं और ओलों के सम्पर्क में आकर तो जगमगाती चिंगारियां-सी लग रही थीं। ओलों से भाप निकल रही थी जैसे कि उषा-बेला में ओस कणों के पिघलने के समय होता है।

कहीं-कहीं तो ओले पिघल भी चुके थे और काली तथा गीली ज़मीन के टुकड़े दिखाई देने लगे थे।

खेतों का चक्कर लगाने के बाद, जूराबायेव अपनी मोटर कार के पास लौट आया। किसान अब भी उसके पीछे-पीछे थे। उम्रज़ाक़-अ्रता को इतना भारी धक्का लगा था कि उनकी टांगें बड़ी मुश्किल से उनका साथ दे पा रही थीं।

"मेरी बात सुनिये, अब्बाजान," जूराबायेव ने दृढ़तापूर्वक कहा। "आपको अब मैं अपनी कार में घर ले जाऊंगा। तीन-चार घण्टे से पहले

हम यहां काम शुरू नहीं कर पायेंगे। इसलिये तब तक घर चलकर आराम कीजिये। कृपया चलिये। आपको अपना भी ख़याल करना चाहिये, प्यारे उम्रज़ाक़-अता।"

बूढ़े उम्रज़ाक़ चुपचाप कार में जा बैठे। ज़ूराबायेव भी उनके पास ही बैठ गया। कार जैसे ही चलने को हुई कि उम्रज़ाक़-अता की नज़र उन कुछ अजनबियों पर जा पड़ी जो फ़ीता लेकर उनकी ज़मीन माप रहे थे।

"ये कौन लोग हैं? यहां क्या करने आये हैं?" वह ग़ुस्से से चिल्लाये और जैसे खिड़की से बाहर कूदे थे वैसे ही झट-पट कार से बाहर निकल गये।

"अरे, ये तो हमारे अपने लोग हैं! बीमा करनेवाले सरकारी लोग!" ज़ूराबायेव ने पुकारकर कहा। उसकी आवाज़ में ख़ुशी की झलक थी।

मगर उम्रज़ाक़-अता ने जराबायेव की बात पर कान न दिया। वह जल्दी-जल्दी बढ़ते ही गये। उनकी टोली के लोग भी अपने अगुवा के पीछे-पीछे हो लिये।

"कहां से आये हैं आप लोग?" उम्रज़ाक़-अता ने इन अजनबियों से रुखाई से पूछा।

इनमें से एक आदमी बग़ल में कन्वास का थैला दबाये अपनी नोट-बुक में कुछ हिसाब-किताब जोड़ रहा था। उसने नज़र उठाकर बूढ़े को देखा, त्योरी चढ़ाई और बड़े इतमीनान से जवाब दिया:

"मैं ख़ुद तो बीमे के सरकारी दफ़्तर में काम करता हूं और यह साथी," सिर हिलाकर उसने दूसरे आदमी की तरफ़ इशारा किया, "यह मशीन-ट्रैक्टर स्टेशन से सम्बन्ध रखता है। कितना नुक़सान हुआ है, हम उसका अनुमान लगाने और उसके बारे में सूचना देने के लिये यहां आये हैं।"

"वह तो जो होना था, हो चुका," उम्रज़ाक़-अता ने दिल थामते हुए कहा, "ओलों ने हमारी कपास तबाह कर डाली है, मगर अब अन्दाज़ लगाने से क्या लाभ है? किसलिये अब तुम इसपर मेहनत कर रहे हो? बेकार अपनी मेहनत मत बरबाद करो, मेरे बेटे। हमें परेशान न करो और अपना वक़्त बचाओ।"

"मैं आपका मतलब नहीं समझा। आपकी कपास का बीमा हुआ है। हम सरकार को जो सूचना भेजेंगे, उसके अनुसार आपके कोलख़ोज़ को पूरा मुआवज़ा दिया जायेगा।"

"क्या कहा तुमने? सरकार मुआवज़ा देगी? अल्लाह की लापरवाही

से हमारी फ़सल तबाह हुई है और इसके लिये तुम हमें हमारी सरकार का रुपया देना चाहते हो? ओह नहीं, मेरे प्यारे, अभी तो मुझे यह भी यक़ीन नहीं कि हमारी फ़सल को तबाह करने की अल्लाह में भी काफ़ी ताक़त है।"

उम्रज़ाक़-अता की टोली के लोग उनके गिर्द जमा हो गये।

"तुम्हें यह मालूम है, मेरे बेटे?" अजनबी की आस्तीन थामे हुए उम्रज़ाक़-अता कहते गये। "मैं एक बूढ़ा और अनपढ़ आदमी हूं। मगर मैं इस मामले को कुछ इस तरह समझता हूं – क़ानून के मुताबिक़ हमें अपनी सरकार की एक-एक पाई बचाने की कोशिश करनी चाहिये। मैं लगभग अस्सी बरस का हूं, मगर इसलिये कि देश के कुछ काम आ सकूं, मैंने भी फावड़ा उठाया। तो क्या मेरी आत्मा मुझे इस बात की इजाज़त देगी कि मैं तूफ़ान में तबाह हुई फ़सल के लिये सरकार से रुपया लूं? अभी तक सरकार को मैंने कपास तो दी नहीं। क्रान्ति से पहले मेरी बहुत ही बुरी हालत थी मगर तब किसीने मुझे फूटी कौड़ी तक नहीं दी। जाड़े में मैं ठण्ड से ठिठुरता रहता था, मगर क्या कभी किसीने तन ढांपने को कपड़ा तक दिया था? सोवियत सरकार ने मेरी दासता की ज़ंजीरें तोड़ीं, मुझे ग़रीबी और अपमान से बचाया, मुझे मेरा सम्मान लौटाया। और अब तुम यह चाहते हो कि अभी तक मैंने जो चीज़ पैदा नहीं की, उसके लिये सरकार से रुपये की मांग करूं? या शायद तुम यह समझते हो कि मेरी आत्मा काली रात से भी ज़्यादा काली है और मेरे सीने में दिल की जगह पत्थर है? ओह नहीं! मैंने दुश्मन के पंजों से अपने देश को बचाने के लिये अपने दोनों बेटे लड़ाई के मैदान में भेजे। उनमें से किसीने भी मेरी आंखें शर्म से नीची न होने दीं। वे शेरों की तरह लड़े, बहादुरों की मौत मरे। उन्होंने अपनी जवानी की इसलिये बलि दी कि हमारा देश बना रहे, फूलता-फलता रहे। सो उस फ़सल के लिये भला मैं कैसे रुपया ले सकता हूं जो शायद मैं काट ही न पाऊं?"

"अब्बाजान..." अजनबी ने उन्हें रोकने की कोशिश की।

"नहीं, मेरे बेटे, नहीं!" उम्रज़ाक़-अता ने ज़ोर देकर ये शब्द दोहराये। "सरकार को हमारी फ़िक्र है, इसके लिये हम उसके शुक्रगुज़ार हैं। तुम्हारा भी शुक्रिया अदा करते हैं, मेरे बेटे। मगर याद रखना कि मैं आख़िरी सांस तक काम करता रहूंगा। रुपयों की मुझे ज़रूरत नहीं

है। यह बात मैं अकेला ही नहीं कह रहा हूं। हमराक़ुल से पूछ लो। इसका बेटा मास्को की रक्षा करता हुआ मारा गया था। क्या वह भी मेरी तरह नहीं सोचता? मनसूर-अता से पूछ लो। उसके दो बेटे अफ़सर हैं। इसीसे पूछो कि क्या वह सरकार का रुपया लेने को तैयार है?"

कुछ खुसुर-फुसुर हुई।

कुछ-कुछ पीले और पके हुए बालोंवाले सत्तरसाल के मनसूर-अता सामने आ गये और उन सभी की ओर से कहने लगे:

"उम्रज़ाक़-अता ठीक कहते हैं। उन्होंने जो कुछ कहा है, वही हमारे दिल की भी आवाज़ है।"

बीमा-अधिकारी ने उन्हें राज़ी करने की एक और कोशिश की:

"मगर आप यह समझते क्यों नहीं? ओले पड़ने से फ़सल को जो नुक़सान हुआ है, उसका अनुमान लगाना मेरा कर्त्तव्य है।"

"ज़रूरत ही क्या है? साथी जूराबायेव ने हमें बताया है कि अगर हम कड़ी मेहनत करें तो हमारी कपास फिर से ज़िन्दा हो सकती है। हमारे कोलख़ोज़ ने एक-एक हेक्टर से दो-दो टन कपास पैदा करने की योजना बनायी है। इतनी पैदावार तो हम करके ही दम लेंगे। काम से हमें डर नहीं लगता। हम अपनी कपास को नयी ज़िन्दगी देंगे। सो पतझर में फिर यहां आना और आकर अपनी आंखों से देख लेना, मेरे बेटे। और अब मैं तुमसे यही इल्तिजा करता हूं कि तुम इस झंझट में न पड़ो।"

उम्रज़ाक़-अता धीरे से दूर हट गये। जूराबायेव ने उनकी बांह थामी और कार की तरफ़ ले गये। कार चल दी। पानी से भरे गड्ढे जहां-तहां सड़क पर चमक रहे थे और इनमें अन्तहीन आकाश की परछाईं दिखायी दे रही थी।

१९

"नहीं, आप मेरी बात समझ नहीं रहे हैं, साथी क़ादिरोव," जूराबायेव ने यह अनुभव किया कि उसका ग़ुस्सा बढ़ता जा रहा है। उसने डिब्बे में से एक सिगरेट निकाली और उसे उंगलियों के बीच दबाने लगा।

ज़िला पार्टी कमेटी के सेक्रेट्री को जब कभी ज़िद्द, पिछड़े दृष्टिकोण और उदासीनता का सामना करना पड़ता और यह अनुभव होने लगता

कि वह आपे से बाहर हुआ जा रहा है, तो वह हमेशा ही सिगरेट निकाल लेता और उसे उंगलियों के बीच दबाने लगता। तम्बाकू थोड़ा-थोड़ा करके राखदानी में गिरता जाता। इस तरह जब वह तीन सिगरेटों का कचूमर निकाल लेता तो उसका खोया हुआ संतुलन लौट आता। फिर वह बड़े शान्त भाव से चौथी सिगरेट जला लेता और बातचीत जारी रखता।

जूराबायेव पूरे चार घण्टों तक ओलों से बरबाद हुए खेतों का निरीक्षण करता रहा था। दोपहर के समय वह फिर से आलतिनसाय में आया था। फ़ार्म-बोर्ड के सभी सदस्य क़ादिरोव के दफ़्तर में जमा थे।

"साथियो, आशा है कि जल्द ही हमें बिजली से चलनेवाले ट्रैक्टर मिल जायेंगे। अगर कल आपको एक ऐसा ट्रैक्टर मिल जाता है तो आप क्या करेंगे, साथी क़ादिरोव?" जूराबायेव ने पूछा।

"हम इससे काम लेना शुरू कर देंगे," क़ादिरोव ने तड़ाक से जवाब दिया।

जूराबायेव ने सिगरेट निकाली, मगर उसे तोड़ा-मरोड़ा नहीं। क़ादिरोव, जूराबायेव के ग़ुस्से को ताड़ गया और चुप हो गया। मगर इसका कारण उसकी समझ में न आया।

"उसे चलाने के लिये बिजली तो है न?"

"हां, हां, बेशक है। हमारा बिजलीघर ख़ूब काम कर रहा है। जैसे ही बांध पूरा होगा, हमारे पास काफ़ी बिजली हो जायेगी। बेशक यह वादा करना मुश्किल है कि हम फ़ौरन ही उसे खेतों तक पहुंचा देंगे, मगर हम इसपर ग़ौर करेंगे।"

"साल-दो-साल हम इसपर ग़ौर करते रहेंगे और फिर किसी न किसी नतीजे पर पहुंच ही जायेंगे," बेकबूता यह कहे बिना न रह सका।

क़ादिरोव तो उसकी तरफ़ सिर्फ़ देखता ही रह गया।

"मेरी राय में तो साथी क़ादिरोव ठीक नहीं कह रहे हैं," आलिमजान ने कहा।

यह कोई सभा नहीं हो रही थी। मामूली बातचीत चल रही थी। मगर आलिमजान आदत के मुताबिक़ बोलने के लिये उठकर खड़ा हो गया।

"क़ादिरोव नीची उड़ानें भरने के आदी हो चुके हैं। आगे की बात सोचना नहीं जानते। वह ऊंची उड़ानें नहीं भरना चाहते, डरते हैं कि कहीं

सिर न चकरा जाये। मगर इस तरह से काम नहीं चल सकता। क़ादिरोव हमारे घरों और गलियों में बिजली की बत्तियां जलती देखकर यह समझ बैठे हैं कि हमारे सारे कोलख़ोज़ में बिजली है। यह तो बड़ा ही भद्दा ढंग है इस मामले को समझने का। बिजली तो ज़रूर है, मगर हम यह तो नहीं कह सकते कि यहां बिजली की पूरी व्यवस्था है। चारा काटने की मशीन हम हाथों से चलाते हैं। जुताई और छंटाई का काम हम मामूली ट्रैक्टर से करते हैं और अभी तक पन-चक्की से काम चलाते हैं। क्या इसी का नाम है बिजलीकरण? हमारा बिजलीघर हमें सिर्फ़ पच्चीस किलोवाट बिजली देता है और खेतीबारी की अपनी सभी मशीनों को चालू करने के लिये हमें कुल दो सौ किलोवाट की ज़रूरत है। इसलिये मैं समझता हूं कि हमें पनबिजलीघर के निर्माण का काम फ़ौरन शुरू कर देना चाहिये। वह हमारी भविष्य की ज़रूरतें भी पूरी करेगा और वर्तमान की भी। मैं उम्मीद करता हूं कि तब हमारे खेतों में बिजली से चलनेवाला सिर्फ़ एक ही नहीं, बल्कि बहुत-से ट्रैक्टर होंगे।"

"तो तुम्हारे कोलख़ोज़ के लिये बिजली का एक ही ट्रैक्टर काफ़ी नहीं होगा? तुम बहुत-से लेना चाहोगे?" सिगरेट जलाते हुए ज़ूराबायेव ने कहा।

"आज तो एक भी हमारी ज़रूरत से ज़्यादा है। उसके लिये भी काफ़ी बिजली नहीं है। मगर साथी ज़ूराबायेव, बांध तो हमारी ज़मीन पर ही बना है। वहां ही हमें बड़ा पनबिजलीघर भी बनाना चाहिये। और तब क्या होगा? हमारी हलक़ा-सोवियत के अधीन जितने कोलख़ोज़ हैं वे सभी हमसे बिजली मांगेंगे। उनका ऐसा करना होगा भी उचित। दूसरे शब्दों में हमें अपने पड़ोसियों की ज़रूरत को ध्यान में रखते हुए पनबिजलीघर बनाना चाहिये। एक नया और शक्तिशाली पनबिजलीघर बनाने के लिये सभी कोलख़ोज़ों को मिलकर काम करना चाहिये।"

ज़ूराबायेव कुर्सी से उठा और अपने दिल की हलचल पर क़ाबू पाने के लिये इधर-उधर टहलने लगा। वह खिड़की की तरफ़ पीठ करके खड़ा हो गया।

"तो अब हमें इस मामले पर अच्छी तरह सोच-विचार करना चाहिये," उसने शब्दों को तोलते हुए धीरे से कहा, "साथी आलिमजान का ख़्याल है कि एक नया बिजलीघर बनाते हुए हमें आगे की ज़रूरतों को भी ध्यान में रखना चाहिये। इस सम्बन्ध में मुझे यह कहना है कि साथी स्मिर्नोव

एक ऐसी योजना तैयार भी कर चका है। कुछ विशेषज्ञ अब उस योजना पर काम कर रहे हैं। बाक़ी फ़ैसला आप लोगों के हाथ में है। अगर हमारे कोलख़ोज़ों के सदस्य स्मिर्नोव की योजना का समर्थन करेंगे तो हम पनबिजलीघर बनाने का काम शुरू कर देंगे। अगले कुछ दिनों में हमें इस मामले पर ग़ौर कर लेना चाहिये।"

...जूराबायेव की कार बरबाद हुए कपास के पौधों, तूफ़ान से झकझोरे बाग़-बगीचों और झुलसे हुए पेड़ के पास से गुज़री। कपास के खेतों में चारों तरफ़ तेज़ी से काम हो रहा था। बूढ़े और जवान, फ़सल को बचाने के लिये सभी खेतों में पहुंच गये थे। कहीं ट्रैक्टर काम कर रहे थे, तो कहीं लोग खेतों में पानी दे रहे थे और पौधों की क़तारों के साथ-साथ काम करते हुए बड़ी सावधानी से ओलों से तबाह हुए पत्तों को अलग करते जाते थे।

आलतिनसाय की बाहरी सीमा पर जूराबायेव ने कई ट्रकें देखीं। ये ट्रकें रासायनिक खाद से भरी हुई थीं।

२०

आलिमजान तड़के ही ज़िला पार्टी कमेटी के दफ़्तर में जा पहुंचा। दस-ग्यारह बजे तक वह आलतिनसाय वापस पहुंच जाना चाहता था। मगर वहां पहुंचने पर उसे मालूम हुआ कि साथी जूराबायेव कहीं काम से गया हुआ है और दोपहर तक ही लौटेगा।

आलिमजान को कुछ और लोगों से मिलना था, कुछ दूसरे काम करने थे और इसलिये वह दो बजे ही ज़िला पार्टी कमेटी के दफ़्तर के छायादार आंगन में घोड़े से उतरा।

"साथी जूराबायेव वापस आ गये?" आलिमजान ने पूछा।

"हां।"

"मैं अन्दर चला जाऊं?"

"जाइये। आपके बारे में कई बार पूछ चुके हैं।"

आलिमजान अन्दर गया। उसने देखा कि स्मिर्नोव अपनी योजना सम्बन्धी काग़ज़ात लपेटकर बाहर जाने को तैयार बैठा है।

"थोड़ी देर हो गयी तुम्हें पहुंचने में। मगर ख़ैर, कोई बात नहीं, सब

ठीक-ठाक हो जायेगा," स्मिर्नोव के जाने के बाद जूराबायेव ने आलिमजान से कहा, "साथी स्मिर्नोव से बाद में जाकर मिल लेना। वह तुम्हें बिजलीघर की योजना का ख़ाका दिखा देगा। इस योजना को आख़िरी शक्ल तो बाद में दी जायेगी, मगर फिर भी वह है तो बड़ी दिलचस्प और यक़ीन पैदा करनेवाली। ख़ैर, अब इस वक़्त हम उसका ज़िक्र नहीं करेंगे। तुम बैठ जाओ और मुझे यह बताओ कि कोलख़ोज़ में क्या हाल-चाल है, कपास कैसी है? तूफ़ान से जो ख़राबी हुई थी, वह ठीक हुई या नहीं?"

"वह तो दूर हो गयी। कपास अब ठीक है। रासायनिक खाद से काफ़ी फ़ायदा हुआ है। हमें कुछ पौधे फिर से लगाने पड़े हैं।"

"यह मुझे मालूम है। तुम लोगों ने बहुत मेहनत की है, अच्छी फ़सल के रूप में तुम्हें इसका इनाम भी ज़रूर मिलेगा।"

आलिमजान अचानक ही खुलकर मुस्करा दिया।

"कोई चुटकुला याद आ गया क्या?"

"चुटकुला याद नहीं आया, साथी जूराबायेव। मेरी आंखों के सामने हमारे खेतों का चित्र उभर आया था। वे अभी से बहुत सघन हैं। उन्हें तो देखते ही जी खिल उठता है। हम लोगों ने बांध भी लगभग पूरा कर लिया है। तीन-चार दिनों में हम उसका शानदार जशन भी मनायेंगे। मैं चाहता हूं कि आप वहां चलकर उसे एक बार देख लें। तूफ़ान के बाद से आज तक आप कभी उधर नहीं गये।"

"मेरे मनबहलाव के लिये, मेरी ख़ुशी के लिये तुम्हारे पास बस यही कुछ है? सिर्फ़ कपास और बांध ही मुझे दिखा सकते हो?" जूराबायेव ने चालाकी से मुस्कराते हुए कहा।

"मगर कपास और बांध के अलावा मैं आपको और दिखा ही क्या सकता हूं?" आलिमजान कुछ परेशान-सा हो उठा।

"सिर्फ़ दिखाने की ही बात नहीं है... मेरा मतलब यह है कि तुम मुझे किसी और चीज की दावत नहीं दे सकते, क्या?"

"इसमें क्या है, आप जब चाहें आ सकते हैं। दिन को चाहें, दिन को, रात को चाहें, तो रात को।"

"सुनो, आलिमजान। कितनी उम्र है तुम्हारी?" जूराबायेव ने अचानक पूछा।

"छब्बीस बरस," आलिमजान ने शब्दों को ज़रा खींचकर कहा।

"मेरे ख़्याल में ये मुझे कहीं भेजना चाहते हैं," उसने सोचा, "शायद पार्टी कार्यकर्त्ता की पढ़ाई के लिये? मगर यह तो गर्मी का मौसम है, काम-काज के दिन हैं..." आलिमजान तरह-तरह के अनुमान लगाने लगा।

"छब्बीस बरस के हो गये हो और अभी तक किसी के हुए नहीं," जूराबायेव ने कहा।

आलिमजान का चेहरा सुर्ख़ हो उठा। आयक़िज़ से अगर उसे प्यार न होता तो वह इस बात को मज़ाक़ में उड़ा देता। मगर वह उसे प्यार करता था, इसलिये इस बात को हंसी में टालने को तैयार न था। उसे जूराबायेव के लहजे में सहानुभूति की झलक मिली। आलिमजान की समझ में न आ रहा था कि इस सहानुभूति से वह दुखी हो या न हो। उसके विचार उलझकर रह गये।

"मुझे इस बारे में सोचने का कभी वक़्त ही नहीं मिला, साथी जूराबायेव," उसने परेशानी में जवाब दिया, "मैं पढ़ने और काम करने में ही इतना ज़्यादा खोया रहा हूं कि इस मामले पर ग़ौर करने का कभी वक़्त ही नहीं मिला।"

जूराबायेव के माथे पर बल पड़े, मगर वह बोला कुछ नहीं। चुप्पी के क्षण में आलिमजान ने अपने को सम्भाल लिया। वह अपने मन की हर बात जूराबायेव से कह दिया करता था। साथी जूराबायेव अब उसके निजी मामले में भी उसकी मदद करेगा, उसे रास्ता दिखायेगा। और अब बिना किसी हिचक-झिझक के आलिमजान ने आयक़िज़ के साथ अपने प्यार की सारी दास्तान कह सुनायी।

जूराबायेव चुपचाप सुनता रहा। साथ के कमरे से टाइप-राइटर की खट-खट सुनायी देने लगी। जूराबायेव की त्योरी चढ़ी और फिर से वह शान्त हो गया। आलिमजान ने उसे बताया कि कैसे वह अख़बार का लेख लेकर आयक़िज़ से मिलने गया था और कैसे वह चिढ़ी-चिढ़ी-सी थी।

"इतने अर्से से आयक़िज़ टालती क्यों आ रही है, तुमने कभी इसपर ग़ौर किया?" जूराबायेव ने आख़िर पूछा।

"मैंने सोचा है।"

"और तुम किस नतीजे पर पहुंचे हो?"

"ईमानदारी की बात यह है, साथी जूराबायेव, कि मैं आज तक कुछ नहीं समझ सका।"

"तुमने उससे पूछा नहीं?"

"नहीं। मैं डरता था कि कहीं वह बुरा न मान जाये।"

"या शायद तुम्हें इस बात का डर था कि वह इनकार कर देगी?"

"शायद, या यों कहिये, इसीलिये।"

"तुम्हें कुछ शर्म आती है?" जूराबायेव ने स्नेह से डांटते हुए कहा, "यह बहादुर आलिमजान ही है न! सही मानी में उक़ाब! यह वही आलिमजान है न जो लड़ाई में दुश्मन से कभी नहीं डरा, जो दुश्मन पर हल्ला बोलने में सबसे आगे रहा, जिसने कोकबुलाक़ के छक्के छुड़ा दिये, वही अपनी रानी के सामने पंख सिकोड़ बैठा, उसी ने उसके सामने घुटने टेक दिये। देखो, प्यार भी आदमी को क्या बना देता है!"

आलिमजान गुमसुम बैठा रहा।

"सुनो, हम ऐसे करेंगे," जूराबायेव ने उठते हुए कहा, "कल मैं आलतिनसाय में आऊंगा और आयक़िज़ से बात करूंगा। बूढ़े उम्रज़ाक़ से बात करने में भी कुछ बुराई नहीं है। तुम तो जानते ही हो कि वह आयक़िज़ को बेहद प्यार करते हैं। आयक़िज़ की ख़ुशी उनकी सबसे बड़ी ख़ुशी है। मैं जानता हूं, वह तुम्हें भी पसन्द करते हैं। मुझे पूरा यक़ीन है कि सब ठीक-ठाक हो जायेगा। रूसी में एक अच्छी कहावत है कि सुबह रात से बेहतर सलाहकार होती है।"

२१

आयक़िज़ जब कभी कपास के नये खेतों का चक्कर लगाने जाती तो बायचीबार को खेत-कैम्प के पास बांधकर पैदल ही खेतों की तरफ़ चल देती थी। वह ध्यान से यह देखती जाती थी कि कहां किस-किस चीज की ज़रूरत है। इसके बाद वह टोली के फ़ोरमैन की तलाश करती और उसे आवश्यक अनुदेश दे देती। वह उसे बताती कि कहां-कहां खाद की ज़रूरत है और सिंचाई की क्या व्यवस्था होनी चाहिये, इत्यादि।

उस सुबह को भी आयक़िज़ आलतिनसाय कोलख़ोज़ के खेतों में पहुंची। बेकबूता के खेत में पहुंचकर वह घोड़े से नीचे उतरी। बेकबूता ने उसे दूर

से देखा तो मिलने के लिये तेज़ी से ग्रागे बढ़ा। उसने बायचीबार की लगाम थाम ली ग्रौर उसे एक ऐसे खूंटे से बांध दिया जिसके पास पहले से ही घास का ढेर मौजूद था।

"पहले कहां चलने का इरादा है? कौनसा खेत देखना चाहती हो?" बेकबूता ने पूछा।

"मैं सभी खेतों में जाऊंगी ग्रौर सभी का मुग्रायना करूंगी," ग्रायक्रिज़ ने कहा, "मैं ग्रकेली ही जाऊंगी... तुम तकलीफ़ नहीं करो। तुम तो फ़ोरमैन हो। मैं जानती हूं कि तुम सिर से पांव तक काम में दबे हुए हो।"

बेकबूता को बेहद निराशा हुई। वह खड़ा-खड़ा देखता रहा। ग्रायक्रिज़ हरे-भरे खेतों को पार करती गयी।

ग्रायक्रिज़ जब खेतों का चक्कर लगाकर लौटी तो दोपहर ढलने लगी थी। वह कड़ी जांच करने की ग्रादी थी। बहुत सावधानी से देख-भाल करने के बावजूद भी वह सन्तुष्ट रही। खेतों की देख-रेख में उसे कोई दोष नज़र न ग्राया।

खेत-कैम्प लौटी तो उसने एक धूलभरी कार खड़ी देखी।

"ज़िला पार्टी कमेटी की कार," उसने हैरान होकर सोचा, "साथी जूराबायेव ज़रूर यहीं होंगे। मगर मैंने उन्हें देखा क्यों नहीं?"

जूराबायेव ग्रब सामने ही दिखायी दिया। वह सामने की ग्रोर से खेत-कैम्प की तरफ़ चला ग्रा रहा था।

"सलाम, साथी जूराबायेव," जब वह नज़दीक ग्राया तो ग्रायक्रिज़ ने कहा।

"सलाम, ग्रायक्रिज़।"

"काफ़ी देर हो गयी क्या ग्रापको यहां ग्राये?"

"हां, काफ़ी देर हो गयी। क़रीब-क़रीब चार घण्टे।"

"मगर मैंने ग्रापको क्यों नहीं देखा? किसी ने मुझे बताया भी क्यों नहीं?"

"मैंने उन्हें मना कर दिया था," जूराबायेव ने हंसकर कहा, "मैं ग्रध्यक्ष की ग्रांख बचाकर खेतों को देखना ग्रौर ख़ुद जाकर तुम्हारे गुनाहों का जायज़ा लेना चाहता था।"

"तो ले लिया हमारे गुनाहों का जायज़ा?" ग्रायक्रिज़ ने पूछा। उसके

मुख पर चिन्ता की झलक थी। "मैं भी खेतों का चक्कर लगाकर लौट रही हूं। मेरे ख़्याल में तो उनकी हालत अच्छी है।"

"मैं भी यही समझता हूं। खेत भी ठीक-ठाक हैं और लोग भी अच्छी तरह काम कर रहे हैं। इधर-उधर थोड़ी-सी रासायनिक खाद और डाल दी जानी चाहिये," जूराबायेव ने कहा।

"अब आप कहां जाना चाहते हैं? अगर मैं साथ चली चलूं तो आप बुरा तो न मानेंगे?"

"फिलहाल तो मैं कहीं नहीं जा रहा हूं," जराबायेव ने जवाब दिया, "अभी इस वक़्त तो मैं एक कम्युनिस्ट से कुछ बातें करना चाहता हूं। उस कम्युनिस्ट का नाम है आयक़िज़। चलो, अन्दर चलें। वहां और कोई नहीं है।"

आयक़िज़, जूराबायेव के साथ अन्दर गयी और पास ही बेंच पर बैठ गयी।

"हमारी आज की बातचीत कुछ अजीब-सी होगी," जूराबायेव ने कहना शुरू किया। "मुझे यह बताओ कि क्या तुम आलिमजान को बहुत दिनों से जानती हो?"

"आलिमजान को? हां... बचपन से," आयक़िज़ रहस्य-लोक में पहुंच गयी।

"तुम्हारे ख़्याल में वह किस क़िस्म का आदमी है?"

"क्यों, क्या कोई ख़ास बात हो गयी है?" आयक़िज़ की आवाज़ फुसफुसाहट में बदल गयी।

घड़ी भर ख़ामोशी रही।

"वह भला आदमी है। सच्चा कम्युनिस्ट है।" आयक़िज़ अब जोश के साथ बोलने लगी, "यह तो आप ख़ुद ही जानते हैं कि कोकबुलाक़ पर उसने कैसे अपनी सुध-बुध भूलकर काम किया है। कोलख़ोज़ में उसकी टोली ही सबसे बेहतर है। जब से आलिमजान सेक्रेट्री नियुक्त किया गया है, कोलख़ोज़ के पार्टी संगठन में एक नयी जान आ गयी है। लोग उसकी बड़ी इज़्ज़त करते हैं।"

"यानी हम यह कह सकते हैं कि तुम उसे पूरी तरह भरोसा करने के लायक़ आदमी समझती हो?"

"हां, मैं तो ऐसा ही समझती हूं। वह एक बहुत ही भला और ईमान-

दार आदमी है," उसकी आंखें डबडबा आयीं, "साथी जूराबायेव, आप तो उसपर अविश्वास नहीं कर रहे हैं, न?"

"नहीं, ऐसी कोई बात नहीं है। मगर तुम उसपर यक़ीन क्यों नहीं करती हो, आयक़िज़? अभी-अभी तुमने बिल्कुल ठीक कहा था कि आलिमजान साफ़गो, सम्मानित और सच्चा कम्युनिस्ट है। पार्टी पर जान देता है। लड़ाई के मैदान और खेतों में, वह अपने को बहादुर साबित कर चुका है। वह आगे पढ़ाई करने जा रहा है। उसका भविष्य बहुत उज्ज्वल है। आलिमजान जैसा आदमी न कभी किसी को निराश करेगा, न धोखा देगा। और वही आदमी है जो तुम्हें प्यार करता है, आयक़िज़।"

आयक़िज़ ने हामी भरी। आंसुओं से भीगी आंखें उठाकर उसने जूराबायेव की तरफ़ देखा।

"तुम आलिमजान को सच्चे दिल से प्यार करती हो न, आयक़िज़?"

"हां।"

"क्या यह सम्भव है कि उम्रज़ाक़-अता को यह बात पसन्द न हो?"

"मैंने उन्हें कभी कुछ नहीं बताया," आयक़िज़ फुसफुसायी।

"तो मुझे तुम दोनों की शादी का अभी तक दावतनामा क्यों नहीं मिला?" वह ख़ुशी से कह उठा।

उन दोनों की आवाज़ें धीमी हो गयीं। वे दोनों अब पुराने दोस्तों की तरह घुल-मिलकर बातें करने लगे।

"साथी जूराबायेव, मैं आपको यह बताना चाहती हूं कि हम लम्बे अर्से से एक दूसरे को प्यार करते हैं, लड़ाई के ज़माने से। आलिमजान मुझे मोर्चे से ख़त लिखता था और मैं... उन ख़तों के जवाब दिया करती थी। लड़ाई के बाद उसने मुझसे शादी करने के लिये कहा। अब्बाजान तो राज़ी हो गये होते, मगर मैं झिझकती रही। आलिमजान ने दुनिया देखी है, जिन्दगी भी जानी-समझी है। मुझे यक़ीन था कि वह बहुत दिनों तक अब यहां न रहेगा, शहर चला जायेगा। और मैं अपने कोलख़ोज़ से अलग होने को तैयार न थी। और फिर मुझे यह भी लगा कि मैं उसके लायक़ नहीं हूं। उसके मुक़ाबले में मैं अच्छी-ख़ासी बुद्धू हूं। इसीलिये मैं झिझकती रही। मगर बहुत दिनों तक नहीं। मैंने अपने और उसके मन की गहराई में झांकने की कोशिश की।"

"इसमें तुम्हें पूरा एक साल लग गया, ठीक है न?"

"क्या यह बड़ी मुद्दत है? जब हम चश्मे साफ़ कर रहे थे तो मैंने अपना पक्का इरादा कर लिया था... मैंने उसे बताया... और उसके बाद, मुझसे वह भारी ग़लती हो गयी। उसके बारे में तो आप सब कुछ जानते ही हैं। आपने उसके बारे में पूरी जानकारी हासिल की थी। मैं सैकड़ों लोगों की मेहनत पर पानी फेर देती... अपने ही लोगों की मेहनत पर..."

"तो शायद आलिमजान ने तुम्हें ..."

"ओह नहीं, नहीं! उसने तो मुझे कुछ भी नहीं कहा। न तो मुझे डांटा-डपटा, न कुछ भला-बुरा ही कहा। मगर यही तो असली बात है, साथी जूराबायेव। पहले तो मैंने यह सोचा कि उसे मुझसे बहुत प्यार नहीं है, क्योंकि चुप रहने का मतलब है किसी में कोई दिलचस्पी न होना। मगर बाद में मुझे यह ख़्याल आया कि वह मुझपर तरस खा रहा है। उसके प्यार में रहम है, इज़्ज़त नहीं। उसे अब मुझपर भरोसा नहीं रहा, इसीलिये तो चुप है। मुझे लगा कि जैसे वह यह पाखंड कर रहा है कि हम दोनों के बीच कोई गड़बड़ नहीं है। मैं यह मानने को तैयार न थी। अगर उसे मुझपर विश्वास नहीं रहा तो मैं उसकी पत्नी नहीं बन सकती।"

"तुमने आलिमजान को ठीक से समझा नहीं, आयक़िज़।"

आयक़िज़ ने कोई जवाब न दिया। उसने अपनी उंगलियों को इतने ज़ोर से दबाया कि वे सफ़ेद हो गयीं।

"तुमने उसकी सही क़ीमत नहीं जानी," जूराबायेव कहता गया। "जितना तुमने समझा, उससे वह कहीं अधिक बढ़कर है। इस मामले में... या मैं यह कहूं कि इस ग़लतफ़हमी में... वह तुमसे बेहतर साबित हुआ है। तुम मिथ्याभिमान के फेर में पड़ गयी और आलिमनजान इससे मुक्त है।"

दोनों ख़ामोश रहे।

"क्या तारीख़ है आज?" कारोबारी ढंग से जूराबायेव ने पूछा।

आयक़िज़ यह सवाल सुनकर चौंकी। उसने तारीख़ बतायी।

"आलतिनसाय में कोकबुलाक़ का पानी पहुंचे कितने दिन बीत चुके हैं?"

"तो क्या आलिमजान ने आपको यह भी बता दिया?" आयक़िज़ ने धीरे-से पूछा।

"क्या आलिमजान इस क़िस्म का आदमी है कि दूसरों से अपनी इतनी निजी बातें जाकर कहेगा? नहीं, उसने मुझे कुछ नहीं बताया। कल मैंने उससे ख़ूब पूछ-ताछ की और सब कुछ उगलवा लिया। मगर ख़ैर, अब इस बात से क्या लेना-देना है! चूंकि वादा पूरा न करने की कोई उचित वजह नहीं है और तुम्हारी निश्चित की हुई तारीख़ भी कभी की गुज़र चुकी है, इसलिये तुम्हें अपना वादा पूरा करना चाहिये। वादा तो पूरा किया ही जाना चाहिये।"

"मैं अपना वादा पूरा करूंगी," आयक़िज़ ने मुस्कराकर जवाब दिया।

ज़ूराबायेव उठकर खड़ा हो गया। अपनी आवाज़ में बनावटी रोब पैदा करके उसने कहा:

"आलतिनसाय में मैं आज शाम को आऊंगा। पहले बांध देखूंगा और बाद में तुम से मिलने आऊंगा। अगर ज़िला पार्टी कमेटी का सेक्रेट्री अपने पुराने दोस्त उम्रज़ाक़-अता से किसी वक़्त भी मिलने चला आये, तो इससे किसी को हैरानी न होनी चाहिये। मैं उम्मीद करता हूं कि उस वक़्त तक तुम आलिमजान को अपना जवाब दे दोगी। बिचवई का काम मैंने आज तक तो नहीं किया, मगर इस बार कोशिश करूंगा।"

वे जुदा हुए। कार जा रही थी और आयक़िज़ मन ही मन सोच रही थी:

"कितना अच्छा बर्ताव था इनका मेरे साथ, बिल्कुल एक दोस्त जैसा!"

२२

हेडक्वार्टर के तम्बू के पास से धुएं की एक हल्की और झीनी-सी झालर पहाड़ी को छूती, लहराती और बल खाती हुई ऊपर चली जा रही थी। तम्बू के पिछवाड़े में मिट्टी के ढेलों से चूल्हे जैसा कुछ बना हुआ था। आग पर रखे देग़ में तेल उबल रहा था, सनसना रहा था।

बेकबूता बदरंग हुए फ़ौजी पतलून में अपनी बादामी क़मीज़ अन्दर किये मानो पूजा की इस रस्म का मुख्य पुजारी बना बैठा था। चोग़ा उसने उतारकर अलग रख दिया था। वह या तो लम्बे, पतले दस्तेवाले लकड़ी के चमचे को देग़ में हिलाता या फिर चूल्हे में ईंधन डालता।

सुवानक़ुल घास पर बैठा हुआ एक छोटे, तेज़ चाकू से गाजरें काट रहा था।

पूरबी पाक-कला के नियमों के अनुसार, पुलाव के लिये गाजरें काटना ख़ासा मुश्किल काम है। इसके लिये बहुत चतुराई की ज़रूरत होती है, इसी काम में पूरी तरह ध्यान लगाना पड़ता है। सुवानक़ुल शायद इसीलिये इस काम में बेहद डूब गया था। बेकबूता की इधर-उधर की बातों की तरफ़ वह बिल्कुल ध्यान न दे रहा था।

गाजरें सभी काट ली गयीं। सुवानक़ुल ने उन्हें प्लेट पर रख दिया। फिर वह हरे प्याज़ काटने लगा। वह कच-कच करते हुए गुच्छों को काटता जाता था और साथ ही साथ कनखियों से बेकबूता को भी देखता जाता था। सुवानक़ुल, बेकबूता से तारीफ़ और कुछ सवालों की उम्मीद कर रहा था।

मगर बेकबूता चुप्पी साधे रहा और मानो सुवानक़ुल के ग़ज़ब के काम की ओर उसने ध्यान ही नहीं दिया। पिछले बरस के सूखे प्याज़ों के बजाय वह पुलाव के लिये खेत से ताज़े, हरे प्याज़ लाया था। मगर बेकबूता को जैसे इसकी कुछ परवाह ही न थी।

सुवानक़ुल ने नाराज़गी से एक बार बेकबूता की तरफ़ देखा और उसकी कुछ भी परवाह न करने का फ़ैसला किया।

नीचे घाटी में से तरह-तरह की आवाज़ें आ रही थीं – इन आवाज़ों में लोगों का शोर था, छकड़ों के पहियों की खड़खड़ाहट, ट्रैक्टरों की गड़गड़ाहट और बैल्ट-कन्वेयरों की खनखनाहट थी। वहां घोड़े हिनहिना रहे थे, गधे रेंक और ऊंट चिल्ला रहे थे। बांध पूरा हो चुका था। पहाड़ के दामनवाले इलाक़ों के सभी कोलख़ोज़ों से हज़ारों लोग इस बांध का उद्‌घाटन देखने के लिये आये थे। वे यह देखने आये थे कि कोमसोमोल के सदस्यों ने जो नहर बनायी थी, आलतिनसाय नदी का पानी उसमें किस तरह आयेगा।

दोनों मेहनती बावर्ची तो जैसे इस तमाम शोर की तरफ़ से कान बन्द किये बैठे थे। पूरब में पुलाव पकाना, मर्दों का, और सो भी बहुत ज़िम्मेदारी का काम समझा जाता है।

आख़िर इस लम्बी ख़ामोशी को तोड़ा बेकबूता ने।

"इस तरह चुप क्यों बैठे हो?" उसने पूछा। "पूरा एक घण्टा हो गया तुमने एक बार हूं-हां तक भी नहीं की। गाजरों के साथ-साथ अपनी ज़बान

तो नहीं काट बैठे? या फिर शायद मैंने ग़लती से तुम्हारे सारे मज़ाक़ आग में डाल दिये हैं? तभी तो मैं हैरान था कि आग कुछ अजीब ढंग से क्यों जल रही है। मैं अब समझा कि सुवानक़ुल के लकड़ी जैसे सूखे मज़ाक़ मैंने आग की नज़र कर दिये हैं! ज़रा देखो तो उन चिंगारियों की तरफ़! पुलाव पागलों की तरह भुनभुना रहा है।"

सुवानक़ुल अपने काम में जुटा रहा। उसने नज़र ऊपर न उठाई।

"मेरे नहीं, वे तुम्हारे ही मज़ाक़ हैं जो आग की भेंट हो चुके हैं," उसने काफ़ी गम्भीर होकर कहा, "यह तुमने अच्छा ही किया। तुम्हारी ज़बान ज़रूरत से ज्यादा ही तेज़ चलती है। कोई बच्चा है या बूढ़ा, और किसका मज़ाक़ उड़ाया जा रहा है, तुम तो कभी यह भी नहीं सोचते। यह भी मुझे कहना ही होगा कि तुम्हारे मज़ाक़ अक्सर अटपटे होते हैं। उन्हें जला डालना ही अक़्लमन्दी का काम था।"

"ओह, मेरे दोस्त!" बेकबूता ने बात जारी रखते हुए कहा, "तुम तो निरे ऊंट हो। अगर तुम्हें कभी होश आता है तो सिर्फ़ कोई चुभता मज़ाक़ सुनकर ही। ऊंटों का क़ाफ़िला जिस धीमी रफ़्तार से चलने को तैयार होता है, वैसी ही तुम्हारी भी चाल है।"

"यह तो बड़े अफ़सोस की बात है कि मैं ऊंटों के क़ाफ़िले जैसा हूं। मगर इसमें भी ज़रा-सा शक नहीं कि तुम चीं-चीं करनेवाले पक्षी के सगे-सम्बन्धी हो। और यह तो और भी ज्यादा दुख की बात है।"

यह जवाब सुनकर बेकबूता खिलखिलाकर हंस दिया। कुछ देर तक फिर ख़ामोशी रही।

बेकबूता देग़ पर अपने काम में जटा रहा और सुवानक़ुल बड़े इतमीनान और बहुत सावधानी से प्याज़ काटता गया।

"तुम्हें मुझसे नाराज़ न होना चाहिये था," बेकबूता ने फिर से कहना शुरू किया, "मेरे जिगरी दोस्त, मैं तो आज तुम्हारे लिये एक तोहफ़ा लाया हूं और तुम हो कि मुझपर गुर्रा रहे हो। तुम्हें अब मेरी काफ़ी मिन्नत-समाजत करनी होगी, हाथ-पांव जोड़कर मनाना होगा, तभी दिखाऊंगा, वरना नहीं।"

"मिन्नत करने का मेरा बिल्कुल इरादा नहीं है। मैं अच्छी तरह जानता हूं कि तुम ख़ुद ही यह बक दोगे। तुम्हारे पेट में बात तो पचती ही नहीं।"

प्याज़ ख़त्म करने के बाद सुवानक़ुल ने ऐसी सूरत बना ली मानो उसे किसी चीज़ में कोई दिलचस्पी ही न हो। फिर वह अपने दोस्त के पास पहुंचा।

"अच्छा, तो लाओ दिखाओ मुझे तोहफ़ा," उसने बेकबूता का कन्धा छूकर कहा।

बेकबूता मुस्कराया। वह गम्भीर और रहस्यपूर्ण मुद्रा बनाकर चुपचाप अपने चोग़े की तरफ़ चल दिया। चोग़ा चूल्हे से थोड़ी दूर पड़ा था।

सुवानक़ुल पीछे-पीछे हो लिया।

बेकबूता ने जान-बूझकर मज़े-मज़े और बहुत धीरे-धीरे वह चोग़ा खोला। उसमें से एक बंडल निकला। वह बड़े आराम से उसकी गांठें खोलने लगा।

"यह तुम मटक क्या रहे हो!" सुवानक़ुल के सब्र का प्याला छलक रहा था।

"ज़रा ठहरे रहो, मेरे दोस्त! फ़ौज में कहा जाता था कि सिर्फ़ पिस्सू मारने में ही जल्दबाज़ी करनी चाहिये।"

आख़िर गांठें खुलीं और बंडल में छिपी चीज़ें बाहर आयीं। लाल-लाल पांच टमाटर और इतने ही खीरे देखकर सुवानक़ुल तो ठगा-सा रह गया।

"और तुम मुझे हरे प्याज़ों के बोझ से ही मारे दिये जा रहे थे! तुर्की मुर्ग़े की तरह उछल-कूद मचा रहे थे!" बेकबूता ने उसे चिढ़ाया। "इन दिनों अगर तुम ऐसे टमाटर और खीरे मंगवा दो तो मैं तुम्हें रसद का फ़ौजी अफ़सर मान जाऊं।"

"मैं तो कभी फ़ौज में नहीं रहा। इसलिये मुझपर तो यह बात लागू नहीं हो सकती। तुम्हारी बात दूसरी है। इन टमाटरों और खीरों से तो यही साबित होता है कि तुम लड़ाई भर यही कुछ करते रहे हो," बड़ा मासूम-सा चेहरा बनाकर सुवानक़ुल ने नश्तर चलाया।

बेकबूता तो ग़ुस्से से लाल-पीला हो उठा।

"यह बात मुझे पहले कभी न सूझी थी कि मेरा दोस्त निरा काठ का उल्लू है। हमेशा के लिये एक बार ही कान खोलकर सुन लो कि मोर्चे की अगली क़तारों में रसद भेजनेवाले अफ़सर कभी नहीं रहते। दूसरे, मैं मशीनगन चलाता था, रसद नहीं भेजता था। बात भेजे में बैठी? मगर है बेकार की माथापच्ची, क्योंकि तुम, जो कभी फ़ौज के नज़दीक तक नहीं फटके, यह सब कुछ क्या समझोगे, मेरे अच्छे दोस्त!"

"नहीं, ऐसी बात नहीं है। तुम्हारी बात मैं अच्छी तरह समझ गया हूं।" सुवानक़ुल ने कहा। वह मन ही मन बेहद ख़ुश था कि उसने बेकबूता को आग-बबूला कर डाला है।

"अगर यह बात है, मेरे बेहद समझदार दोस्त, तो मैं तुमसे यह इल्तिजा करता हूं कि अब तुम जाकर अपना पहलेवाला काम सम्भालो। क़ुदरत और किसान की मेहरबानी से पैदा हुई इन अद्भुत चीज़ों को काटो। पुलाव के साथ टमाटर और खीरे बड़ा मज़ा देंगे। और देखो, जल्दी करो! पुलाव तैयार है और हमारे मेहमान भी आते ही होंगे। लो, वे तो आ भी गये! जल्दी-जल्दी काट लो इन्हें!"

आयक़िज़ और आलिमजान पहाड़ी के ऊपर पहुंच रहे थे। बेकबूता चूल्हे के पास जा बैठा और गाने लगा:

अपनी इस प्यारी धरती पर, कितनी ऐसी ललनायें।
जिनकी आंखों की चमक देखकर, तारे भी शर्मायें।।

वह पीला-पीला चांद गगन में, ईर्ष्या से जल जाता।
जब सबसे सुन्दर इस रमणी की, झलक कहीं पर पाता।।
रेशम की नीली चुनरी में, वह तो अद्भुत लगती।
सुन्दरता से, समझ-बूझ से, वह सबका मन हरती।।
इसके जैसी और कहीं पर, कभी नहीं मिल सकती।
बेशक ढूंढ़ो पूरब-पश्चिम, नगर-नगर औ' बस्ती।।

"सलाम-अलैकुम!" आयक़िज़ ने दोनों से कहा। बेकबूता के गीत के शब्दों से वह थोड़ी झेंप ज़रूर गयी थी।

वह तम्बू के अन्दर गयी और थकी-टूटी-सी उस क़ालीन पर धम से बैठ गयी जो मेज़बानों ने अक़्लमन्दी का सबूत देते हुए ज़मीन पर बिछा दिया था।

अपनी गोद में वह जो बनफ़शा के फूल लिये थी, उन्हें उसने नीचे रख दिया और रूमाल से चेहरा पोंछा।

"आओ, बैठ जाओ, आलिमजान-आग़ा," आयक़िज़ ने पुकारा।

आलिमजान उसके पास जा बैठा। आयक़िज़ ने अपनी घड़ी पर नज़र डाली।

"ज़ूराबायेव और सुलतानोव घण्टे भर में यहां पहुंच जायेंगे।"

"यह तो बहुत अच्छा होगा। लोग यहां कई घण्टों से जमा हैं। उन्होंने ट्रक पर एक मंच तैयार किया है और उसे ख़ूब बढ़िया सजाया है।"

बेकबूता बड़ी संजीदगी और शान-शौक़त के साथ टमाटरों, खीरों और प्याज़ों के टुकड़ों की प्लेट लेकर आया। ये सभी चीज़ें बड़े कलात्मक ढंग से कटी हुई थीं और बड़े खुले दिल से उनपर लाल मिर्चें डली हुई थीं। प्लेट उसने मेहमानों के सामने रखा।

"बेकबूता-आग़ा! ये सब चीज़ें कहां से आयीं?" आयक़िज़ ने हैरान होकर पूछा।

"यह हमारे अपने कोलख़ोज़ की उपज है," बेकबूता ने गर्व से कहा, "कुछ खाओ तो। मैं अभी पुलाव लेकर आता हूं।"

"मगर ये टमाटर और खीरे आये कहां से?" आयक़िज़ ने ज़ोर देकर पूछा, "आजकल तो इनका मौसम ही नहीं।"

"हमारे किसानों के जादूभरे हाथों ने इन्हें दो महीने पहले ही पकने के लिये मजबूर कर दिया है," बेकबूता ने जवाब दिया।

सुवानक़ुल को लगा मानो उसकी हेठी हो गयी है। टमाटरों और खीरों ने उसके हरे प्याज़ों की तरफ़ किसी का ध्यान ही नहीं जाने दिया।

"मैं जानता हूं, हलीमबाबा के गर्म-घर से लाये हो," आलिमजान ने कहा।

"तुमने ठीक अन्दाज़ लगाया है," बेकबूता ने कहा, "आज सुबह इधर आते हुए मैं बूढ़े मियां से मिलने चला गया। उनके गर्म-घर में तो कमाल की चीज़ें देखने को मिलीं। ज़ाहिर है कि मैंने उनसे कहा कि बांध आज पूरा हो जायेगा। बुज़ुर्ग तो ख़ुशी के मारे कुछ बोल ही न सके—उन्हें तो जैसे काठ मार गया। कुछ देर बाद उन्होंने कहा कि अब तो मुझे अपने गर्म-घरों के लिये काफ़ी पानी मिल ही जायेगा। अब मैं अपने गर्म-घरों को सचमुच ही कोई बड़ी चीज़ बना सकूंगा। और जब मैंने उन्हें यह बताया कि कुछ पुलाव पकाने की सोच रहे हैं तो उन्होंने ये टमाटर और खीरे मुझे दिये और बाद में सुवानक़ुल के हाथ कुछ हरे प्याज़ भी भेजे। अरे हां, मैं तो तुम्हें यह बताना ही भल गया था! जब मैं वहां से चलने लगा तो हलीमबाबा ने यह शिकायत की थी कि आयक़िज़ और आलिमजान तो अपने में ही मस्त हैं, उन्हें बिलकुल भूल गये हैं। उन्होंने कहा है कि

तुम लोग उनसे ज़रूर मिलने आओ। वह अपनी पहली फ़सल बटोर चुके हैं। तुम लोगों की तबीयत ख़ुश कर देंगे।"

"वह तो अपनी धुन के पक्के बुज़ुर्ग हैं। आख़िर उन्होंने अपना गर्म-घर बना ही लिया," आयक़िज़ ने कहा।

"अब हमारी शामत आ गयी समझो," आलिमजान ने हंसकर कहा, "हलीमबाबा एक अर्से से हमारे कोलख़ोज़ के लिये एक बड़ा बाग़ लगाने के सपने देखते रहे हैं और अब जबकि पानी आ गया है, वह तो क़ादिरोव के नाक में दम कर देंगे। देख लेना, आयक़िज़, तुम्हें उनकी यह मांग पूरी करनी ही होगी।"

"मुझे कोई एतराज़ न होगा। क्या हर्ज है, बना लें एक बाग़ भी। सो भी चालीस हेक्टर से कम का न होना चाहिये। हलीमबाबा मुझसे तो बहुत पहले ही इसका ज़िक्र कर चुके हैं। वह तो वहां नीबू और संतरे-मालटों के पेड़ लगाना चाहते हैं।"

"बात यह है कि वह रिज़ामत मूसा मुहम्मदोव से ख़ार खाते हैं। मुहम्मदोव तो एक बार मिचूरिन से जो मिल चुका था।"

"बेकबूता, अगर पुलाव ज़्यादा पककर ख़राब हो गया तो क्या बातों से मेहमानों का पेट भरोगे?" सुवानक़ुल अब तक चप था, "तुम क्या समझते हो कि हमारे मेहमान पुलाव के बजाय तुम्हारी ऊल-जलल बातें खायेंगे?"

बेकबूता हड़बड़ाकर देग़ की तरफ़ भागा। आयक़िज़ खिलखिलाकर हंस दी।

"जब मैं अपनी रानी की हंसी सुनता हूं तो..." आलिमजान आयक़िज़ के कानों में फुसफुसाया।

"चुप रहो मेरे चांद, वे लोग सुन लेंगे..." आयक़िज़ ने जवाब में फुसफुसाकर कहा। फिर जब उसने देखा कि बेकबूता और सुवानक़ुल देग़ से उलझ रहे हैं, तो उसने अपना गाल आलिमजान के कन्धे से रगड़ दिया।

"पुलाव तो सचमुच ही बढ़िया बना है!" देग़ का ढक्कन उठाते हुए बेकबूता ने एलान किया: "दोस्तो, यह ख़ास-उल-ख़ास पुलाव है। जिन दिनों जिदा फूला हुआ था, यह पुलाव उन दिनों बोये गये चावलों से बनाया गया है। चावल का हर दाना बिनौले जितना बड़ा है। मैं तुम लोगों को

चेतावनी देना चाहता हूं कि पुलाव के साथ तुम लोग अपनी जीभें मत खा जाना।"

गर्मागर्म पुलाव से भरा हुआ बड़ा थाल मेहमानों के सामने रखा गया। उसमें से भाप निकल रही थी। उन्हें खाने के लिये कहना न पड़ा। उनके पेट में चूहे कूद रहे थे और पुलाव था लज़ीज़।

उन्होंने जब थाल साफ़ कर दिया तो सुवानक़ुल हरी चाय के प्याले लाया। मगर चाय के प्याले उन्होंने अभी छुए भी न थे कि नीचे से मोटरों के हार्न सुनायी पड़ने लगे।

"वे आ गये क्या? हमें यहां आये एक घण्टा हो भी गया?" आलिमजान की तरफ़ देखते हुए आयक़िज़ ने कहा।

आदत के अनुसार, आलिमजान ने अपनी क़मीज़ ठीक की, कालर के बटन बन्द किये और उठ खड़ा हुआ।

"चलो चलें, साथियो!"

२३

बांध, आलतिनसाय दर्रे को घेरकर खड़ा था। शान्त और ठहरा हुआ पानी बांध के पीछे था। पानी का चमकता हुआ दर्पण दर्रे में बहुत दूर तक चला गया था। दर्रे में पानी अधिकाधिक भरता जाता था और धीरे-धीरे उसकी सतह ऊंची होती जाती थी। दर्रे की दीवारों के साथवाली चट्टानें, कभी की पानी की इस धारा के नीचे छिप गयी थीं।

बांध से अगर दर्रे पर नज़र डाली जाती, तो ऐसा लग सकता था कि पानी कोई ख़ास ज़्यादा नहीं है। वह सिर्फ़ दो-तीन मीटर ही ऊंचा उठा दिखायी देगा। मगर यदि दूसरी तरफ़, ढालू ज़मीन की तरफ़ देखा जाये और दर्रे की भयानक गहराई में झांका जाये तो यह एहसास हो सकता था कि पानी कोलख़ोज़वालों द्वारा बनाये गये पथरीले अवरोध से कितने ज़ोर के साथ टकरा रहा है।

नहर कंक्रीट के बने मटमैले फाटक के पास से शुरू होकर पहाड़ के दामन में से होती हुई जाती थी। अभी इसमें पानी न था। नहर के फाटक पर शोख़ लाल रंग की चौड़ी पट्टी एक बड़ी कमान के रूप में बंधी हुई थी।

वहां ढेरों फूल भी थे।

बांध से सटकर, चरागाह के ठीक बीचोंबीच एक ट्रक खड़ी थी। ट्रक के प्लेटफ़ार्म पर जूराबायेव, सुलतानोव, स्मिर्नोव, आयक़िज़ और आलिमजान खड़े थे। कपड़े की लाल झंडियों, गुल लाला और बनफ़शा के फूलों के बड़े-बड़े गुच्छों और पेड़ों की शाखाओं से ट्रक ख़ूब सजी हुई थी।

चरागाह लोगों से खचाखच भरी थी। संवलाये, चमकते चेहरे, शोख़ रंगों के कपड़े, रुपहली-काली टोपियां, ख़ूबसूरत रूमाल – सभी जगह यही कुछ था। लोगों की भीड़, हहराते सागर या स्तेपी में लहराती हुई ऊंची घास जैसी लग रही थी।

बांध और नहर, कपास बुवाई के कार्य की पूर्त्ति की ख़ुशी मनाने के लिये, आलतिनसाय हलक़ा-सोवियत के सभी कोलख़ोज़ों के मर्द-औरतें वहां जमा हुए थे।

तुरहियां बजीं, ढोल बजाते युवा लोग मस्त होकर नाचने लगे। लड़कियां नज़ाक़त व नफ़ासत से नाच रही थीं और नौजवानों के नाच तेज़ और जोशीले थे।

जूराबायेव ने हाथ ऊंचा उठाया। शोर धीमा होने लगा और थोड़ी ही देर में चरागाह में सन्नाटा छा गया। ढोल और तुरहियां बन्द हो गयीं। नाचनेवालों के चेहरे जैसे दहक रहे थे। थिरकते हुए पैर रुक गये।

सभी लोग जूराबायेव को सुनने के लिये ट्रक के क़रीब आ गये।

"साथियो! ज़िला पार्टी कमेटी, ज़िला-सोवियत की कार्यकारिणी समिति और सारे ज़िले की तरफ़ से मैं आप सबको बधाई देता हूं और आपका शुक्रिया अदा करता हूं। जिस काम को आपने बड़ी हिम्मत से शुरू किया था, बड़ी शान से उसे पूरा किया है। आप लोगों की हिम्मत और हौसले ने, हमारे पहाड़ों के दामनवाले इलाक़ों के बाक़ी सभी कोलख़ोज़ों को यह दिखा दिया है कि अगर सुख और ख़ुशहाली हासिल करनी है, तो पानी के लिये संघर्ष करना ही होगा। दूसरे कोलख़ोज़ भी आपकी इस मिसाल से सबक़ लेंगे। ऊंची पहाड़ियों में, बिना पानी के सूखी ज़मीनों पर रहनेवाले किसान अब नीचे आ जायेंगे, नयी सींची गयी ज़मीनों में आकर बस जायेंगे। हर साल ही तो हमारी ज़मीनों को सूखे और ख़ुश्क हवाओं का डर बना रहता है। बचाव का एक ही रास्ता है – सींची ज़मीनों को बढ़ाना। पहाड़ों में रहनेवाले और अब पहाड़ों के दामनवाले इलाक़ों में आकर बसनेवाले लोग दिल से आपके शुक्रगुज़ार हैं। हम उनका स्वागत करते हैं!

"साथियो! ज़िला पार्टी कमेटी और आप सभी की ओर से मैं इस बड़े काम की योजना तैयार करने के लिये आयक़िज़ उस्रज़ाक़ोवा और इस निर्माण-कार्य के संचालक इंजीनियर स्मिर्नोव को धन्यवाद देता हूं।"

ज़ूराबायेव एक क़दम पीछे हटा। पहले आयक़िज़ से, फिर स्मिर्नोव से उसने हाथ मिलाया।

टोपियां हवा में ऊंची उछाली गयीं। इन टोपियों ने रुपहले पक्षियों की सी झलक दी।

"आयक़िज़ तक़रीर करे!" लोग एकसाथ चिल्लाये।

"इवान निकीतिच कुछ कहे!"

"हम आयक़िज़ और स्मिर्नोव को सुनना चाहते हैं!"

"तुम्हें बोलना ही होगा, साथियो। लोग आपको सुनना चाहते हैं।" ज़ूराबायेव ने आयक़िज़ को कंधे से पकड़कर लोगों के सामने कर दिया और कहा, "आओ, आयक़िज़! शुरू करो।"

"बोलिये आयक़िज़, बोलिये!" लोग चिल्लाये।

आयक़िज़ ने लोगों की तरफ़ देखा। उसे ज़रा-सी भी झेंप महसूस न हुई। उसे लगा कि जैसे वह एक बहुत लम्बी और मुश्किल पहाड़ी सड़क पर लम्बा सफ़र तय करके आयी है, कि जैसे रास्ते में न वह आराम के लिये कहीं ठहरी हो, न कहीं सोयी हो। जैसे कि मंज़िल तक पहुंच जाने के लिये बेचैन और बेक़रार हो, किसी इनाम की इच्छा के बिना, किसी तरह की लालसा के बिना।

उसे उसका इनाम मिल गया था – खिले हुए चेहरे उसे ताक रहे थे, दोस्ती के हाथ उसकी तरफ़ बढ़े हुए थे। क्या वह इस लायक़ थी कि ये लोग उसपर भरोसा कर सकें? क्या वह सचमुच ही इस क़ाबिल थी?

वह भावना से ओत-प्रोत होने के कारण भर्रायी-सी आवाज़ में बोली:

"दोस्तो! आप लोग पूरे यक़ीन के साथ अपने काम में जुटे थे, इसलिये आपकी जीत तो लाज़िमी ही थी। इस ज़िले के इतिहास में पहली बार हमारे कोलख़ोज़ों की ज़मीनों की सिंचाई हुई है। अब हम धड़कते दिलों से आसमान को नहीं ताका करेंगे – जाने पानी बरसेगा या नहीं। अब हमें क़ुदरत से भीख मांगने की ज़रूरत नहीं रही। ख़ुश्क हवायें अब हमारे लिये सिरदर्दी नहीं रहीं।

"दोस्तो! हमारी प्यारी कम्युनिस्ट पार्टी ने हमें जो रास्ता दिखाया है, हमें उसपर बढ़ते जाना चाहिये! हमें अपने भाइयों की – अपने रूसी

भाइयों की मदद से आगे बढ़ते जाना चाहिये! हम क़ुदरत की अन्धी ताक़तों पर जीत हासिल करेंगे, हम उन्हें अपनी ख़िदमत करने के लिये मजबूर करेंगे!"

आयक़िज़ की तक़रीर के अन्तिम शब्द लोगों की वाह-वाह और तालियों में डूब गये।

अब स्मिर्नोव आगे आया। उसने अपनी ऐनक उतारी। गहरी सांस लेने के लिये उसने अपना मुंह खोला। उसकी ठोड़ी का मस्सा फड़क पड़ा। अपनी आदत के मुताबिक़ उसने इस तरह बोलना शुरू किया मानो किसी तर्क की पुष्टि कर रहा हो।

"जो कामयाबी हमने हासिल की है, हम उसीसे सन्तुष्ट होकर रह जायें, इसका तो सवाल ही नहीं पैदा होता, दोस्तो। यह सच है कि जो काम सबसे मुश्किल था, जिसमें सबसे ज़्यादा अड़चनें थीं, वह हमने पूरा कर लिया है। हम ग़लत अनुमान लगा सकते थे या ग़लतियां भी कर सकते थे। हो सकता था कि चश्मों में हमारे अन्दाज़ से कम पानी निकलता। मगर आप लोगों की कोशिशों से हमें बहुत बड़ी कामयाबी मिली है। इस बांध से हमारे इलाक़े में एक नया दौर शुरू हो रहा है। हम इसपर एक पनबिजलीघर बना सकेंगे, खेतीबारी की सभी मशीनों को बिजली से चला सकेंगे। कम्युनिज़्म की मंज़िल की तरफ़ यह एक बहुत बड़ा क़दम होगा। हम पनबिजलीघर बनायेंगे। सच्चे कम्युनिस्टों की तरह इसे पूरा करने की हम ख़ुद ही क़सम खाते हैं, हम ख़ुद ही इसके लिये ख़ून-पसीना एक करेंगे। मिसाल के तौर पर आप आलिमजान और उसकी टोली के लोगों को ले लीजिये। बासमचियों ने जिस चश्मे का मुंह बन्द कर दिया था, उस कोकबुलाक़ को इन्हीं ने खोज निकाला। चट्टानों की छाती तोड़कर इन्हीं ने उस चश्मे को नयी ज़िन्दगी दी। आलिमजान, आयक़िज़, बेकबूता, सुवानक़ुल और सच तो यह है कि हममें से सभी अपने बाज़ुओं में काफ़ी ताक़त रखते हैं। हम एक के बाद एक विजय प्राप्त कर सकते हैं! हमारी बड़ी जीतें अमर रहें! हमारी शानदार कम्युनिस्ट पार्टी ज़िन्दाबाद!"

मज़बूत हाथों ने सैकड़ों फावड़े ऊंचे उठा दिये। हवा में पालिश किये हुए इस्पाती फावड़े चमक उठे। श्रमन के इन हथियारों से लोगों ने सलामी दी, कम्युनिज़्म में अपने भरोसे का यक़ीन दिलाया।

जूराबायेव ग्रौर उनके साथी ग्रब नहर के फाटक की तरफ़ बढ़े।

भीड़ तो हज़ारों की थी, मगर फिर भी ऐसा सन्नाटा छाया था कि काफ़ी दूरी पर ग्रालतिनसाय की सड़क से नीचे जाती हुई एक कार की ग्रावाज़ साफ़ सुनायी दे रही थी।

जूराबायेव फाटक के पास गया।

ग्रायक़िज़ ने उसे कैंची दी। जूराबायेव ने लाल फ़ीता काटा। फिर उसने दो-चार बार पहिया घुमाया।

फाटक धीरे-धीरे खुला ग्रौर पानी कलकल-छलछल करता ग्रौर भंवर बनाता हुग्रा नयी नहर में तेज़ी से बह चला।

तेज़ी से बहते हुए पानी ने जैसे सन्नाटे की नींद भंग कर दी। लोगों ने ज़ोर-ज़ोर से नारे लगाये, तालियां बजायीं, ढोल गड़गड़ा उठे, तुरहियां गूंजीं ग्रौर टोपियां हवा में लहरायीं।

ग्रालतिनसाय के खेतों में पानी पहुंच गया।

२४

जून के ग्रन्त में ऐसी ग्राग बरसी कि तोबा! गर्मी थी कि झुलसे दे रही थी। बूढ़े भी घबरा उठे। कहने लगे कि ऐसी गर्मी तो उन्होंने ग्रपनी लम्बी ज़िन्दगी में न पहले कभी देखी, न जानी।

पहाड़ के दामनवाले इलाक़ों में सुबह की ठण्डक सूरज निकलने के दो-तीन घण्टे बाद तक जैसे रेंगती-सी रहती। फिर धीरे-धीरे मैदान छोड़ जाती, दिन की गर्मी का हिस्सा बन जाती। ऐसा तो सिर्फ़ मामूली गर्मियों में ही होता था।

मगर इस गर्मी की बात ही दूसरी थी। सूरज निकलते ही गर्मी हो जाती। पौ फटते ही क़िज़िलक़ुम की दहकती रेत ग्रपना गर्म-गर्म झुलसती सांसें छोड़ने लगती। रोशनी से ग्रांखें ग्रन्धी-सी होने लगतीं। ख़ुश्क हवाग्रों की दहकती जीभ दरख़्तों के हर तने को, घास की हर पत्ती को छूती। ग्रालतिनसाय के बाग़-बगीचों के पत्ते इन झुलसती हवाग्रों से मुरझा जाते, कांप उठते।

ग्राम गर्मियों में गर्म-ख़ुश्क लू एक-दो दिन चलती ग्रौर फिर थकी-मांदी धरती को थोड़ा ग्राराम देने के लिये, दम लेने की फ़ुरसत देकर

थम जाती। मगर इस साल तो यह रुकने-थमने का नाम ही नहीं लेती थी, इसका पारा नीचे ही नहीं आ रहा था।

पुराना ज़माना होता तो आलतिनसाय के किसान बस, पूरी तरह बरबाद हो गये होते। मगर आज गर्म-ख़ुश्क हवायें जैसे कुछ कर ही न सकती थीं, इनकी एक न चलती थी। इनसान कोलख़ोज़ के खेतों में पानी की धारा बहा चुका था।

कपास के चौड़े-चौड़े पत्ते, इन गर्म हवाओं की झुलसती सांसों के स्पर्श से मुरझाये जा रहे थे, मगर मज़बूत डंठलों को सुखाने, तबाह करने की ताक़त इनमें न थी। पौधों की जड़ें, एक प्यासे की भांति सींची हुई धरती का रस पीती जाती थीं। मज़बूत डंठल यह रस पत्तों तक पहुंचा देते थे। पत्तों को रेगिस्तानी हवाओं का डटकर मुक़ाबला करने के लिये नया जीवन, नयी स्फूर्ति मिलती थी।

आलतिनसाय में अब काफ़ी पानी था, मगर बूढ़े हलीमबाबा अपने बाग़-बगीचे के लिये आज भी परेशान थे। कारण, गर्म हवाएं पिछले दो हफ़्तों से लगातार चल रही थीं।

जब पानी की कमी थी, हलीमबाबा अपने एक हेक्टर के बगीचे को और बढ़ा न सकते थे, अपनी कारगुज़ारी दिखाने का उन्हें मौक़ा हासिल न था। मगर तब उन्हें फलों के पेड़ों की चिन्ता कभी न हुई थी। ये पेड़ चिनार और एल्म पेड़ों की ऊंची दीवार के पीछे सुरक्षित थे, बचे रहते थे। अपने बगीचे के गिर्द उन्होंने यह काफ़ी घनी दीवार खड़ी कर रखी थी।

मगर मिचूरिन के इस पुराने शागिर्द ने अपने बगीचे को नयी नहर के साथ-साथ दूर तक फैला दिया था। जहां एल्म और चिनार के झुंड समाप्त हो जाते थे, वहां हवाओं की रोक-थाम के लिये, पेड़ों को उनसे बचाने के लिये कुछ भी न था। ये हवायें आसानी से, बे रोक-टोक नन्हे-नन्हे पौधों को झुलस सकती थीं।

हलीमबाबा को वातावरण में जैसे ही गर्म-ख़ुश्क हवा का आभास हुआ, वह पलक न झपक सके।

पूरब में सूरज की पहली किरण दिखायी देते ही बुज़ुर्ग हलीमबाबा अपने कठोर बिस्तर से उठ खड़े होते और घूरकर आसमान को देखते कि हवा में तबदीली होने की कोई सम्भावना है या नहीं। मगर उन्हें इसकी

कोई सम्भावना दिखाई न देती। अपने कपड़े पहनते हुए वह ग़ुस्से से बड़बड़ाते जाते थे :

"अल्लाह का दिमाग़ तो बिल्कुल ही ख़राब हो गया है!"

इसके बाद हलीमबाबा जाकर अपने छोटे-छोटे पेड़ों को देखते। उम्र तो उनकी सत्तर से अधिक हो चुकी थी, मगर आज भी उनमें पहले की सी हिम्मत थी और पहले जैसा हौसला था। वह हर पेड़ को बड़े ध्यान से देखते कि उसमें अभी जान बाक़ी है या नहीं।

इस गर्मी में हलीमबाबा दिन और रात अपने बगीचे में ही बने रहे। चमकती और लहराती हुई सिंचाई की नाली के पास ही उन्होंने अपना क्वार्टर बना लिया था। बगीचे का यहीं अन्त होता था और इसी जगह से कपास के खेत शुरू होते थे।

कोलख़ोज़ के सर्वश्रेष्ठ बढ़ई तुरसुनक़ुल ने हलीमबाबा के लिये लकड़ी का एक बड़ा-सा पलंग तैयार किया था। इसे साधारण ढंग का पलंग न कहा जा सकता था। क्योंकि वह जितना लम्बा था, उतना ही चौड़ा भी और लकड़ी की मोटी-मोटी और ख़ूबसूरत टांगों के सहारे खड़ा हुआ था। पुराने ढंग की कारीगरीवाला एक क़ालीन उसपर बिछा हुआ था। क़ालीन के मौलिक रंगों की चमक-दमक नये की तरह ही थी। यह पलंग अंगूरों की घनी बेलों की छाया तले रखा गया था। यहां छाया इतनी अधिक घनी थी कि दोपहर की प्रखर सूर्य की किरणें भी इसे भेदने में असमर्थ रहती थीं।

दोपहर को जब ज़ोरों की गर्मी पड़ती तो हलीमबाबा अपनी इस छाया की शरण लेते। यहीं वह अपने मुलाक़ातियों से मिलते।

बगीचे के तीन तरफ़ कपास के खेत लहरा रहे थे। अपने बिस्तर पर बैठे-बैठे ही हलीमबाबा लहलहाते हरे-हरे खेतों को देखते और मन ही मन प्रशंसा करते। यह काम उनके पुराने दोस्त उम्रज़ाक़-अता और उनकी टोली के लोगों ने किया था।

गहरे हरे रंग के पत्तों से लदे हुए पौधे किसी भी लम्बे आदमी की कमर तक पहुंचते थे।

हलीमबाबा को अपने पासवाले कपास के खेतों में चहल-क़दमी करना बेहद पसन्द था। हर बार ही जब वह उन खेतों का चक्कर लगाकर लौटते तो उनके मन में ख़ुशी और सन्तोष होता। वह बहुत ही कड़े पारखी थे। फिर भी उन्हें महसूस होता कि इन पौधों की बहुत ही अच्छी

देख-भाल की जा रही है और बहुत प्रगतिशील तरीक़ों का उपयोग किया जा रहा है।

इस शाम तो हलीमबाबा की ख़ुशी का कोई ठिकाना न था। उम्रज़ाक़-अता ही एक ख़ुशख़बरी लाये थे।

दिन जब ढल रहा था तो उम्रज़ाक़-अता यहां आ पहुंचे। सूर्य इस समय बुख़ारा के कारीगरों के कुशल हाथों से बने हुए कांसे के लाल प्याले की तरह आसमान में लटका हुआ सा लग रहा था।

उम्रज़ाक़-अता नया रेशमी चोग़ा पहने थे। यह चोग़ा एक महीना पहले आलिमजान ने उन्हें अपनी शादी के मौक़े पर भेंट किया था। उम्रज़ाक़-अता आजकल पहले से कम बूढ़े और बहुत ख़ुश दिखाई देते थे।

कुछ ही दिन पहले उम्रज़ाक़-अता बेटी-दामाद के साथ शहर का चक्कर लगाने गये थे। आयक़िज़ और आलिमजान एक स्टोर में घर-गृहस्थी की चीज़ें ख़रीदने में लग गये और इसी बीच उम्रज़ाक़-अता खिलौनों पर एक नज़र डालने के लिये चले गये। खिलौनों की बिक्री करनेवाले आदमी को तो इस बात का ख़्वाब-ख़्याल भी न था कि कोई उसके विभाग की ऐसी आलोचना या भर्त्सना करेगा। उम्रज़ाक़-अता ने खिलौनों के विभाग में जितने भी खिलौने थे, उन सभी की कड़ी आलोचना की।

"तुम्हें शर्म आनी चाहिये, नौजवान! यह तुम कैसे भद्दे खिलौने बेच रहे हो!" उम्रज़ाक़-अता गरजे। "तुम इसे घोड़ा कहते हो?" उम्रज़ाक़-अता ने एक बड़ा और भद्दा-सा खिलौना हाथ में उठाकर कहा, "क्या ऐसे ही थे वे हवा से बातें करनेवाले घोड़े जिनपर सवार होकर हम बासमचियों के दलों का पीछा किया करते थे? और क्या ऐसे ही हैं वे घोड़े जो आजकल हमारे कोलख़ोज़ों में हैं? ऐसे मरे-मरे और घटिया घोड़े तो हमारे देश में कभी भी नहीं थे। जो कुछ तुम हमारे बच्चों को दे रहे हो, ये घोड़े थोड़े ही हैं–गधे और ऊंट का मिला-जुला रूप हैं। और तुम अपने स्टोर में तिपहिया साइकलें क्यों नहीं रखते? तुम्हारे पास वे डिब्बे क्यों नहीं जिनमें ख़ूबसूरत छोटे-छोटे टुकड़े होते हैं और जिनसे बच्चे क्रेमलिन का बुर्ज, कोई पुल या दूसरी ऐसी चीज़ें बनाते हैं?"

बिक्री करनेवाले की समझ में कुछ न आ रहा था। फिर भी उसने बढ़े उम्रज़ाक़-अता को शान्त करने की बेहद कोशिश की और यह विश्वास दिलाया कि जल्द ही बहुत-सा नया सामान आनेवाला है। उसने अपने

सम्मानित ग्राहक से कहा कि यदि उन्हें कष्ट न हो तो वे दो-तीन दिन बाद आयें और तब उनकी सभी ज़रूरतें अच्छी तरह पूरी हो जायेंगी।

आयक़िज़ और आलिमजान ठीक मौक़े पर ही वहां जा पहुंचे और उन्होंने इस बेचारे बिक्री करनेवाले को और अधिक डांट-डपट से बचाया। वे उम्रज़ाक़-अता को वहां से हटा ले गये। उम्रज़ाक़-अता का इस तरह से डांटना-डपटना आयक़िज़ को तो बहुत अजीब-सा लग रहा था। वह तो विरोध में चिल्ला ही उठी, मगर आलिमजान ज़रा हंस भर दिया। वह अपने ससुर का पक्ष ले रहा था। उम्रज़ाक़-अता घर लौटते हुए रास्ते भर बिक्री करनेवाले उस नौजवान को कोसते रहे।

पुराने ढंग और पुराने तौर-तरीक़ों के मुताबिक़ उम्रज़ाक़-अता और हलीमबाबा एक दूसरे से सलाम-दुआ करने के बाद पलंग पर बैठकर गपशप करने लगे।

"गांव की कोई नयी-ताज़ी ख़बर?" हलीमबाबा ने पूछा।

"एक क्या, बहुत-सी ख़बरें हैं," उम्रज़ाक़-अता ने ज़रा सोच-विचार कर जवाब दिया। "आज दोपहर को साथी ज़ूराबायेव और स्मिर्नोव गांव में आये थे। उन्होंने उस जगह का मुआयना किया जहां बिजलीघर बनाने की बात सोची जा रही है। इस वक़्त वे दोनों कोलख़ोज़ के दफ़्तर में हैं। साथी ज़ूराबायेव ने तुम्हें यह बताने को कहा था कि आज शाम को वे तुमसे ज़रूर मिलने आयेंगे..."

बूढ़े और अनुभव से प्रौढ़ता प्राप्त ये दोनों मित्र अपनी दिलचस्प और इधर-उधर की बातों का मज़ा ले रहे थे। इन दोनों ने अपनी ज़िन्दगी का आरम्भ सामन्तवाद के मनहूस ज़माने में किया था। युवा लोग उस वक़्त की स्थिति के बारे में तो केवल सुनी-सुनायी बातों के आधार पर ही कुछ थोड़ा बहुत अनुमान लगा सकते थे। ज़िन्दगी के अपने आख़िरी सफ़र में ये दोनों दोस्त कम्युनिज़्म की तरफ़ बढ़ रहे थे।

सूर्य जब काफ़ी नीचे जा चुका था तो दो कारें बाग़ीचे के पास आकर रुकीं। इनमें से ज़ूराबायेव, स्मिर्नोव, आयक़िज़, आलिमजान और क़ादिरोव बाहर निकले।

ऐसी इज़्ज़त मिलने से हलीमबाबा तो फूले न समा रहे थे। उन्होंने अपने मेहमानों को बाग़ का चक्कर लगवाया। इन्होंने अंगूरों का बगीचा देखा, ख़ूबानी, चेरी, सेब और अनार के वे पेड़ देखे जो मुश्किल से

उनके कन्धों तक पहुंचते थे। मगर जल्द ही ये पेड़ मज़बूत और ऊंचे-ऊंचे हो जायेंगे। अब इन्हें पहाड़ी चश्मों का पानी और सूरज की गर्मी मिल रही थी। जल्दी ही यह बाग़ दूर-दूर तक फैल जायेगा और पुराने बेकार पड़े हुए ज़मीन के टुकड़ों के नाम-निशान तक मिट जायेंगे। एक बरस गुज़रने की देर है कि चेरी और अंगूरों की पहली फ़सल भी बटोर ली जायेगी। खेतों से पहाड़ों तक के बीच की जगह में हज़ारों नये पौधे लग जायेंगे। पांच या छः बरसों तक इसी जगह से सैकड़ों टन फल बड़े देश के दूर-दराज़ कोनों तक लगातार पहुंचने लगेंगे। इन फलों से लोगों को स्वास्थ्य मिलेगा और नई स्फूर्ति। बीमार और थके-मांदों के लिये ये फल नया जीवन देनेवाले होंगे।

मेहमानों ने नये लगाये गये पौधे देखे और सारे बाग़-बगीचे का चक्कर लगाया। पश्चिमी सिरे पर जाकर ये लोग रुक गये।

सूरज अपनी अन्तिम किरणें समेट चुका था। ठण्डक का आश्वासन लिये रात घिरती आ रही थी। मगर क़िज़िलक़ुम रेगिस्तान अब भी थका नहीं था। गर्म हवा के तेज़ झोंके आते ही जा रहे थे।

"वहां है हमारी हद," हलीमबाबा ने छोटे-छोटे पौधों की एक रेखा की तरफ़ इशारा करते हुए कहा, "कई हेक्टर ज़मीन पर हमने बलूत, चिनार और एल्म के पेड़ लगा दिये हैं। पेड़ों की ये पांतें हमारे कोलख़ोज़ों की सारी ज़मीनों के साथ-साथ फैली हुई हैं। दो-तीन बरस बाद इन पेड़ों की बदौलत गर्म हवाओं से हमारी ज़मीनों का काफ़ी बचाव हो सकेगा। क़िज़िलक़ुम वहां है, उस जगह," उन्होंने संकेत किया और चुप हो गये।

अब क़ादिरोव बोला।

"मुझसे यह उम्मीद की जाती है कि मैं अपने जुर्मों को मान लूं। मगर मैं अपने को सभी चीज़ों के लिये दोषी नहीं समझता। बेशक मुझसे कुछ भूलें हुई हैं, मगर भूलें होतीं किससे नहीं? जब-तब हम सभी ग़लतियां करते हैं। मगर इस मामले में तो मुझे अपना अपराध मानना ही होगा। इस बसन्त में काफ़ी संख्या में चिनार और बलूत के पौधे हासिल करना काफ़ी मुश्किल काम था। और मैं सिर से पांव तक काम में दबा हुआ था। मैंने हलीमबाबा को सलाह दी कि या तो वह क़लमें उगा दें, या फिर इसका ख़्याल ही छोड़ दें। मगर उन्होंने इजाज़त चाही कि वह ख़ुद ही पौधों की तलाश कर लें। मैंने इजाज़त दे दी और उन्होंने साथी ज़ूराबायेव की मदद से पौधे हासिल कर लिये।"

"ग़लती का एहसास हो जाने पर उसे मान लेना ही ठीक होता है," उस्रज़ाक़-अता ने सोचते हुए कहा, "खुले दिल से अपनी ग़लती मानना बहुत अच्छा रहता है, मगर बात को तोड़ने-मरोड़ने से वह बिगड़ जाती है। प्यारे साथी क़ादिरोव, तुम अपनी सिर्फ़ वही भूलें मानते हो जिनका भंडाफोड़ ख़ुद ज़िन्दगी कर डालती है। मगर बहुत-सी बातों को हम ख़ुद भी दूर से और पहले से ही देख सकते हैं। कहा जाता है कि ऊंट की सवारी करते हुए हमें आगे की तरफ़ दूर तक देखना चाहिये। मगर तुम मेरे दोस्त, ऊंट की पंछ की तरफ़ देखा करते हो। हमारे लोग रुकने-झुकने को तैयार नहीं। तुम्हें चाहिये कि तुम भी उनके साथ-साथ क़दम से क़दम मिलाकर चलो।"

क़ादिरोव ने जवाब में कुछ न कहा।

बिल्कुल अन्धेरा हो जाने पर ये सभी लोग हलीमबाबा के ख़ेमे में पहुंचे। अलाव पर रखे हुए एक बड़े-से देग़ में गर्म-गर्म पुलाव इनका इन्तज़ार कर रहा था।

हलीमबाबा किसी तरह का कोई बहाना सुनने को तैयार न थे। वह अपने मेहमानों को खाये बिना जाने की इजाजत नहीं देना चाहते थे।

"मुझ बूढ़े का दिल मत तोड़ो," हलीमबाबा ने ज़ूराबायेव और स्मिर्नोव से कहा, "मेरे घर तो आप लोग आज तक कभी आये ही नहीं। मैं बूढ़ा आदमी हूं और ज़िन्दगी में मिलनेवाली ख़ुशी की हर घड़ी को गले लगाना चाहता हूं। पुलाव खाकर ही जाइये। एक तो पुलाव हो, सो भी खुली हवा और बगीचे में—अगर अल्लाह को दावत दी जाये तो वह भी इनकार न कर पाये।"

वे बूढ़े का दिल दुखाना न चाहते थे, इसलिये ठहर गये।

मर्दों ने अपने जूते झाड़े, हाथ-मुंह धोये, क़मीज़ों के गलेवाले बटन खोले और क़ालीन पर डट गये।

आयक़िज़ परोसने के काम में हलीमबाबा का हाथ बंटाने लगी।

मिट्टी के तेल के लैम्प की रोशनी बहुत मद्धिम थी। थोड़ी ही देर बाद कोकताग़ के पीछे आसमान में चांद ऊंचा हो गया। नीली-नीली किरणें फैल गयीं। लैम्प की रोशनी अब बिल्कुल ख़त्म-सी हो गयी।

मेहमान अब पुलाव का इन्तज़ार कर रहे थे। इन्तज़ार की घड़ियां हल्की करने के लिये वे भावी पनबिजलीघर की चर्चा करने लगे। सभी के

दिल-दिमाग़ पर यही एक चीज़ छायी हुई थी। स्मिर्नोव अभी एक ही दिन पहले ताशक़न्द से लौटा था। सरकार ने आलतिनसाय पनबिजलीघर के निर्माण की इजाज़त दे दी थी।

"सरकार इसे बहुत ही महत्त्वपूर्ण योजना मानती है," जूराबायेव ने कहा, "जल्द ही हमें बहुत-से एक्सकेवेटर, क्रेन और दूसरी मशीनें मिल जायेंगी।"

"तुम जनता के लिये बहुत बड़ा काम कर रहे हो, बेटा," उम्रज़ाक़-अता ने स्मिर्नोव से कहा, "हमारे बच्चे, हमारे बेटे-पोते बड़े चाव से और बड़ा एहसान मानते हुए उस रूसी इंजीनियर का बार-बार ज़िक्र करेंगे जिसने पहले तो बंजर ज़मीनों की सिंचाई में हमारी मदद की और फिर ऐसा बड़ा काम हाथ में लिया! ज़रा ख़्याल कीजिये, वह चाहता है कि किसान का भारी काम मशीनें करें! क्यों, मैंने ठीक कहा है न, साथी जूराबायेव?"

"आपने ठीक ही कहा है, उम्रज़ाक़-अता। हमारे बड़े भाई, महान रूसी लोग हमारी बहुत ही ज्यादा मदद कर रहे हैं। उनकी मदद का अन्दाज़ लगाना भी मुमकिन नहीं। हम बहुत बड़ी तबदीलियों, बड़ी घटनाओं के दरवाज़े पर खड़े हैं। यह नयी योजना पहाड़ के दामनवाले इलाक़ों का कायाकल्प ही कर डालेगी। ज़रा ख़्याल कीजिये, इस योजना की पूर्त्ति के बाद हम वे सभी फ़सलें उगा सकेंगे जिनके लिये पानी ज़रूरी है। यह हमारे खेतों को सदा-सदा के लिये सूखे से छुटकारा दिला देगी। मगर बात यहीं ख़त्म नहीं हो जाती। कुछ ही सालों में हमारे सिंचे हुए खेत क़िज़िलक़ुम रेगिस्तान के क़रीब जा पहुंचेंगे। धीरे-धीरे, डटकर और निडरता से वे रेगिस्तान पर धावा बोलेंगे। रेगिस्तान मुर्दाबाद! बंजर और जलती हुई रेत धरती को भी बंजर बनाती है। तब वह रेत ग़ायब हो जायेगी। रेगिस्तान में बाग़-बगीचे लहलहा उठेंगे। इस जलती हुई भट्ठी, इस झुलसती हुई ख़ुश्क लू का नाम-निशान तक न रहेगा, हमेशा-हमेशा के लिये यह हमारी धरती से ग़ायब हो जायेगी। सचमुच ही यह बड़ी तबदीलियों का वक़्त है। हमने एक नहर खोदी है, हमने आलतिनसाय नदी के पानी को एक बांध के पीछे बन्दी बना दिया है। अब हम एक क़दम और आगे बढ़ेंगे। हमारी ज़मीनें क़िज़िलक़ुम के सिरे पर हैं। क़िज़िलक़ुम आज बंजर रेगिस्तान के सिवा कुछ भी नहीं। मगर पानी मिलने पर रेगिस्तान

भी उपजाऊ धरती में बदल जायेगा। आपके पीछे-पीछे चलते हुए हमारे दूसरे कोलख़ोज़ भी सोवियत विज्ञान की मदद से रेगिरस्तान पर हल्ला बोलेंगे और तब रेगिस्तान भी पीठ दिखाकर भाग चलेगा। हम उसपर अपनी जीत का झंडा गाड़ेंगे। हमारी महान पार्टी क़ुदरत से मोर्चा लेने के लिये हमें राह दिखाती है। हमारे शानदार बड़े भाई, महान रूसी लोग सच्चे मन से हमारी मदद करते हैं। हम ज़रूर जीतेंगे। आलतिनसाय इलाक़े की सिंचाई रेगिस्तान पर विजय पाने की दिशा में पहला क़दम है।"

मेहमान चले गये। काफ़ी देर हो चुकी थी। आयक़िज़ और आलिमजान ने उनके साथ कार में जाने से इनकार कर दिया। उन्होंने कहा कि वे घूमते हुए घर जाना पसन्द करेंगे।

धरती के ऊपर आकाश में चांद बड़ी शान से तैर रहा था। उसकी प्यारी चांदनी में दूर-दूर की पहाड़ी चोटियां चांदी जैसी लग रही थीं। हवा साफ़ और ताज़ी थी। न कहीं कोई आवाज़ थी और न कहीं कोई सरसराहट, गहरा सन्नाटा था। झींगुर तक भी ख़ामोश थे। कभी-कभी कोई टिड्डा बोल उठता था। खेत में से किसी जानवर ने हल्की-सी आवाज़ की। फिर से गहरा सन्नाटा छा गया।

सिर्फ़ नदियां, हमेशा जागती रहनेवाली नदियां अपना कल-छल का गीत अलापती हुई बही चली जा रही थीं। उनका गीत रात की ख़ामोशी को किसी तरह से भंग न कर रहा था। वे तो खेतों में अपना पानी लिये जा रही थीं, उन्हें ख़ुशियों और नेमतों से मालामाल करने के लिये।

आयक़िज़ और आलिमजान हाथ में हाथ डाले चले जा रहे थे।

वे बड़ी सड़क पर आये और गांव की तरफ़ घूम गये। उनके सामने था बिजली की बत्तियों से जगमगाता हुआ आलतिनसाय। बिजली की जगमग के सामने चांद की पीली-पीली किरणें बिल्कुल फीकी लग रही थीं। बत्तियां सीधी और पतली-पतली रेखाओं में गांव के केन्द्र की ओर फैली हुई थीं। वहां जाकर वे जैसे कि उलझा-उलझाया तना-बाना बन गई थीं।

"उन बत्तियों पर ज़रा नज़र तो डालो!" आयक़िज़ ने कहा। "कैसे जगमगा रही हैं! यह कम्युनिज़्म की रोशनी है जो हमें आगे की झलक दे रही है। यह सारी ख़ुशी हमारी है, आलिमजान!"

१९४९–१९५३
ताशक़न्द

पाठकों से

प्रगति प्रकाशन इस पुस्तक की विषय-वस्तु, अनुवाद और डिज़ाइन सम्बन्धी आपके विचारों के लिये आपका अनुगृहीत होगा। आपके अन्य सुझाव प्राप्त करके भी हमें बड़ी प्रसन्नता होगी। हमारा पता है:

प्रगति प्रकाशन,
२१, ज़ूबोव्स्की बुलवार,
मास्को, सोवियत संघ

१९७३ के हमारे नये प्रकाशन

श्रेष्ठतम रूसी कहानियां।

भाग पहला। सर्वोत्तम रूसी साहित्य पुस्तकमाला।

"सभी रूसी लेखकों को एक ही उत्कट अभिलाषा अनुप्राणित करती थी – देश के भविष्य, उसकी जनता के भाग्य और संसार में उसकी भूमिका को समझना, उसे महसूस करना और उसके बारे में अनुमान लगाना... रूसी लेखक का हृदय प्रेम की घण्टी था और इसके भविष्य सूचक और शक्तिशाली निनाद को सभी धड़कते दिल सुन लेते थे।" मक्सिम गोर्की के ये शब्द १९ वीं शताब्दी के सर्वश्रेष्ठ रूसी लेखकों की रचनाओं के आदर्श वाक्य हो सकते हैं। इस प्रस्तुत कहानी-संग्रह में रूसी साहित्य के गौरव अ० पुश्किन ('पोस्टमास्टर'), महान रूसी व्यंग्यकार नि० गोगोल ('सोरोचिनत्सी का मेला') तथा मि० सल्तिकोव-श्चेद्रीन ('क़िस्सा यह कि एक देहाती ने दो जनरलों का कैसे पेट भरा'), इ० तुर्गेनेव ('गायक') तथा १९ वीं शताब्दी के अन्त और २० वीं शताब्दी के आरम्भ के रूसी साहित्य-शिरोमणियों ले० तोलस्तोय ('नाच के बाद'), अ० चेख़ोव ('साहित्य का अध्यापक') और व्ला० कोरोलेन्को ('जंगल गूंज रहा है') को स्थान दिया गया है। इस संग्रह की हर कहानी एक क़ीमती हीरा है।

सजिल्द। पृष्ठसंख्या २९६।

लेव तोलस्तोय। कहानियां।

भारतीय पाठकों के लिये तैयार किये गये इस कहानी-संग्रह में तोलस्तोय की पांच कहानियां – 'दो हुस्सार', 'इन्सान और हैवान', 'इवान इल्यीच की मृत्यु', 'पादरी सेर्गियस' और 'नाच के बाद' शामिल हैं।

लेव तोलस्तोय के जीवन और साहित्य के बारे में ले० लेओनोव की भूमिका दी गयी है।

सजिल्द। पृष्ठसंख्या २८८।

मक्सिम गोर्की। मां (उपन्यास)।

पूरे विश्व साहित्य में एक भी ऐसी रचना नहीं, जिसकी म० गोर्की के 'मां' उपन्यास जितनी पाठक-संख्या हो और जिसने करोड़ों लोगों के भाग्य पर इतना प्रबल और प्रत्यक्ष प्रभाव डाला हो। दुनिया की १२७ भाषाओं में इसकी करोड़ों प्रतियां छप चुकी हैं।

"बहुत से मज़दूरों ने क्रान्तिकारी आन्दोलन में सजग रूप से नहीं, स्वतःस्फूर्त ढंग से भाग लिया था। अब 'मां' पढ़कर उन्हें बड़ा लाभ होगा... बहुत समयानुकूल पुस्तक है।" नौजवान क्रान्तिकारी पावेल व्लासोव, गुप्त-आन्दोलन के उसके साथी और पावेल की मां निलोवना इस उपन्यास के मुख्य पात्र हैं। निलोवना ने अपने इकलौते बेटे के प्रेमवश ही क्रान्तिकारी आन्दोलन में भाग लेना शुरू किया, मगर बाद में उसे उस ध्येय की सचाई का विश्वास हो गया, जिसकी प्राप्ति के लिए उसका बेटा संघर्ष कर रहा था। सोर्मोवो कारख़ाने का एक मज़दूर प्योत्र ज़ालोमोव और उसकी मां ही जिन्हें गोर्की बहुत अच्छी तरह जानते थे, पावेल व्लासोव और निलोवना के मूल रूप थे। इस संस्करण में प्रोफ़ेसर बो० बूर्सोव की भूमिका और परिशिष्ट भी छापे जा रहे हैं। परिशिष्ट से पाठकों को यह पता चल सकेगा कि इस पुस्तक में वर्णित घटनाओं के बाद ज़ालोमोव परिवारवालों का क्या हुआ।

सजिल्द। पृष्ठसंख्या ४८०।

तीन लघु उप

इस पुस्तक में लेनिन पुरस्कार
आइत्मातोव (जन्म १९२८) के तीन ल
अध्यापक' और 'वह मेरे दिल की रा

'जमीला' (१९५८) लेखक की पहल
उसकी प्रतिभा की सबसे प्रिय सन्तान व
प्यार के समान है," आइत्मातोव ने एक
को फिर कभी जिया नहीं जा सकता।"

किर्गीज़ गांव के पहले सोवियत अध्य
साहस के साथ और भावनाओं में डूबकर व
का नायक बहुत ही भाव-विभोर होकर त
के साथ अपने लुटे प्यार और बिछुड़ गई
करता है।

"आइत्मातोव के कृतित्व के काव्यमय
सौन्दर्य में निहित है," एक विदेशी समी
लिखा था, "जो वह हमारे समकालीन
पूर्वी लोगों के प्रेरणापूर्ण काव्य के मिलाप

पेपर बैक। पृष्ठसंख्या २६४।